प्रकाशक
पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय (बिहार-प्रान्त)

मुद्रक—रा० ना० लाल, विद्यापति प्रेस, लहेरियासराय

विद्यापति की पदावली

[टिप्पणी-सहित]

संकलयिता

श्रीरामवृक्ष बेनीपुरी

बालचंद विज्जावइ-भाषा। दुहु नहि लग्गइ दुज्जन-हासा।
ओ परमेसर हर-सिर सोहई। ई निश्चय नाअर-मन सोहई॥
—विद्यापति-कृत 'कीर्तिलता'

संशोधक

कुमार गंगानन्द सिंह, एम्. ए., एम्. एल. ए.

पुस्तक-भंडार, लहेरियासराय और पटना

समर्पण

हिन्दी के उन 'सफल समालोचकों' के कुशल करों में
जो अपने फतवे को अकाट्य और अलंघनीय साबित करने के लिये
'नवरत्न' में दस रत्न घुसेड़ सकते हैं,
जो 'देव' को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये 'बिहारी' को,
एवं बिहारी को श्रेष्ठ सिद्ध करने के लिये
कितने अन्य कवियों की
कीर्त्ति पर
सफाई के साथ पर्दा डाल सकते हैं,
जो किसी विशेष कवि के श्रद्धालु समर्थकों को
नीचा दिखाने के लिये
'दास' को आकाश पर चढ़ा सकते हैं
तथा
जो 'केशव' की कविता में 'तुलसी' की कविता से
अधिक काव्य-गुण पाते हैं—
अभिनवजयदेव
मैथिलकोकिल
विद्यापति की पदावली
का
यह संक्षिप्त संकलन
उनके नौसिखे संकलयिता द्वारा
सादर, सविनय और सभय समर्पित।

मैथिल-कोकिल

कोकिल की कलकंठता कितनी मधुर, कितनी सरस और कितनी हृदय-ग्राहिणी होती है, इसका परिचय इसीसे मिलता है कि जब संस्कृत के सहृदय विद्वानों को कविकुलगुरु महर्षि वाल्मीकि की वंदना के लिये जिह्वा खोलनी पड़ी तब उन्होंने यही कहा—

कूजन्तं रामरामेति मधुरं मधुराक्षरम् ।
आरुह्य कविता-शाखां वन्दे वाल्मीकि-कोकिलम् ॥

इस एक श्लोक ही में जो समस्त गुण आदिकवि की रचनाओं में हैं, उनका व्यापक निरूपण है, थोड़े-से शब्दों मे ही बहुत-कुछ कह दिया गया है। इसी प्रकार भारती के वरपुत्र विद्यापति की लोकोत्तर रचनाओं का परिचय देने, उनके माधुर्य, प्रसाद, सरसता और मनोमुग्धकारिता की व्याख्या करने के लिये उनको 'मैथिल-कोकिल' कह देना ही पर्याप्त है। आप मैथिली भाषा-राकारजनी के राकेश और कविता-कामिनी के कमनीय कान्त हैं। आपकी कोकिल-काकली-कलित मधुमयता, कोमल-कान्त पदावली, भावुक-हृदय-विमोहिनी भावुकता, और नव-नव-भावोन्मेषिणी प्रतिभा देखकर चित्त विमुग्ध हो जाता है। आपके इन्हीं गुणों की आकर्षिणी शक्ति का यह प्रभाव है कि केवल मैथिलीभाषा को ही आपका गर्व नहीं है, बंगभाषा और हिन्दी-भाषा-भाषी भी आपको अपनाने मे अपना गौरव समझते हैं, और आज भी हृदय से आपका अभिनन्दन करते है। तीन-तीन प्रान्तों में समान भाव से समादृत होने का गुण यदि किसी कविता में है, तो आपकी ही कविता में है, अन्य किसी की कविता को आज तक यह महत्त्व नही प्राप्त हुआ। खेद है, ऐसी अपूर्व रचना का समुचित प्रचार अब तक प्रत्येक

प्रान्त में नहीं हुआ। इसी उद्देश्य की पूर्त्ति के लिये यह संग्रह तैयार किया गया है। संग्रहकर्त्ता ने इनकी उत्तमोत्तम रचना-कुसुमावली में से सरस-से-सरस सुमनों के संग्रह करने में जिस मधुप-वृत्ति का परिचय दिया है, उसकी भूयसी प्रशंसा की जा सकती है। पाद-टिप्पणियाँ तो सोने मे सुगन्ध है। यदि आपलोगो ने इसका समुचित समादर किया तो अतीव सुन्दर आकार-प्रकार मे उक्त कविपुंगव की अधिकांश रचना आपलोगों के कर-कमलों मे अर्पित की जावेगी। उस समय मैं एक वृहत् भूमिका-द्वारा इसी महान् कवि की रचनाओ पर समुचित प्रकाश डालने की चेष्टा करूँगा। आज इन कतिपय पंक्तियो को लिखकर ही संतोष ग्रहण करता हूँ।

हिन्दू-विश्वविद्यालय,
काशी

अयोध्यासिंह उपाध्याय

द्वितीय संस्करण

हिन्दी-भाषा के प्रेमियों ने जिस प्रकार विद्यापति की पदावली के इस सचित्र-सटीक-संकलन के प्रथम संस्करण को अपनाया है उसका अनुभव कर मैं नितान्त सुखी हूँ। आज इस संकलन का दूसरा संस्करण प्रकाशित होने जा रहा है। इस उपलक्ष में सहृदय प्रकाशक महोदय तथा संकलयिताजी को मैं बधाई देता हूँ।

प्रकाशकजी के अनुरोध से बाध्य होकर संशोधन करने की दृष्टि से मैंने इसकी पुनरावृत्ति की। मुख्यतः यह श्रीयुत नगेन्द्रनाथ गुप्त के संकलन पर अवलम्बित है। जब तक उस संकलन की परीक्षा प्राचीन हस्तलिखित ग्रन्थों के सहारे न की जायगी तब तक मूल पदों पर कलम लगाना अनुचित होगा। पर इसके लिये जितना अवकाश चाहिये वह मुझे नहीं मिल सका। इस संकलन की बड़ी माँग है, अतएव अधिक दिनों तक इसे अप्रकाशित रखना भी उचित नहीं है। मूल पदों के पाठ को मैंने ज्यों-का-त्यों रहने दिया है; क्योंकि इससे शुद्ध पाठ अब तक पाठकों को देखने का सौभाग्य नहीं हुआ है और वे इससे अभ्यस्त सा हो गये हैं। बिना प्रमाण के इसमें यदि हेरफेर किया जाय तो कैसे ? हाँ, कई स्थानों में मुझे सन्देह उत्पन्न हुए थे, पर उनका निराकरण तब तक नहीं हो सकेगा जब तक हस्तलिखित प्राचीन पुस्तकों को मैं न देखूँगा।

टीका में मैंने जहाँ-तहाँ कुछ हेरफेर किया है। तत्कालीन साहित्य के अभाव के कारण विद्यापति की पदावली का अर्थ लगाना सब स्थानों में सर्वथा विवाद-शून्य नहीं रह सकता। लोग समझते होंगे कि मैथिल इन मैथिली पदों को अच्छी तरह समझते होंगे। यद्यपि साधारणतया यह ठीक है, पर सम्पूर्णतया नहीं। आधुनिक मैथिली विद्यापति के

धन्यवाद

इस पुस्तक के पदों के संकलन में मुझे नगेन्द्रनाथ गुप्त द्वारा सम्पादित और जस्टिस शारदाचरण मित्रा द्वारा प्रकाशित बँगला 'विद्यापतिर पदावली' से अधिक सहायता मिली है, अतः इन सज्जनों का मै अत्यन्त अनुग्रहीत हूँ। 'विद्यापति का परिचय' लिखने में उक्त पुस्तक, 'मैथिल कोकिल विद्यापति', 'हिस्ट्री ऑफ तिरहुत' एवं 'मैथिली-दर्पण' से सहायता मिली है; अतः इनके लेखक भी मेरे धन्यवाद के पात्र हैं।

हिन्दू विश्वविद्यालय के अध्यापन एवं कविता-रचना से अपना अमूल्य समय बचाकर इस छोटे-से संग्रह के लिये एक छोटी—किन्तु चोखी भूमिका—लिख देने के लिये प० अयोध्यायजी का मै चिर-ऋणी हूँ।

सुहृद्वर बाबू शिवपूजनसहाय, श्रद्धेय प० जनार्दन झा, श्री जगदीश्वर ओझा, 'मैथिली'-सम्पादक बाबू उदितनारायणलाल दास, मित्रवर श्री रामनाथ 'सुमन' प्रिय 'विकल' आदि ने इस संग्रह को उपयोगी बनाने में मेरी सहायता की है; इनके प्रति मै अपनी हार्दिक कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

सबसे अधिक धन्यवाद के पात्र हैं पुस्तक-भंडार के प्राण बाबू रामलोचनशरणजी, जिनके उत्साह-दान से ही यह पुस्तक लिखी गई है और जिन्होंने इसे सुलभ और सुन्दर बनाने में कुछ भी उठा नहीं रक्खा है।

—श्रीबेनीपुरी

विद्यापति का परिचय

Every reader of the beautiful selection of Vdiyapati's poems is sure to be rewarded with delight and pleasure that are the fruit of literary pursuits.

—The 'People', Lahore.

प्रस्तुत पुस्तक में विद्यापति के संबन्ध में जितनी जानने योग्य बातें हैं उन सबका बहुत अच्छी तरह विवेचन किया गया है। यह संस्करण बहुत ही अच्छा निकला। पाद-टिप्पणियाँ बहुत ही उपयोगी हैं। इस संस्करण की उपयोगिता के विषय में हम केवल यही कह सकते हैं कि हमारे एक मित्र; जो हिन्दी-साहित्य से सर्वथा विरक्त थे, इन पादटिप्पणियों की सहायता से 'विद्यापति' का अध्ययन करके ही 'हिन्दी-साहित्य' के उपासक बन गये।

—'माधुरी' (लखनऊ)

जन्मस्थान

विद्यापति का जन्म 'दरभंगा' जिले के 'बेनीपट्टी' थाने के अन्तर्गत 'बिसपी' गाँव में हुआ था। दरभंगे से जो रेलगाड़ी उत्तर-पश्चिम की ओर जाती है, उसका तीसरा स्टेशन 'कमतौल' है। कमतौल से लगभग चार मील पर यह गाँव है। विद्यापति के पूर्वज बहुत दिनों से यहीं वास करते थे। इस गाँव का पहला नाम 'गढ़-बिसपी' था। इनको यह गाँव, इनके आश्रय-दाता राजा शिवसिंह की ओर से, उपहार-स्वरूप मिला था। इस दान का ताम्रपत्र भी प्राप्त हुआ है। उस ताम्रपत्र का कुछ अंश यहाँ दिया जाता है—

स्वस्तिश्रीगजरथपुरात समस्तप्रक्रियाविराजमानश्रीमद्रामेश्वरीवर-लब्धप्रसादभवानीभवभक्तिभावनापरायणरूपनारायण महाराजाधिराज-श्रीमच्छिवसिंहदेवपादस्समरविजयिनो जरैल तप्पायां 'बिसपी' ग्रामवा-स्तव्य सकललोकान् भूकर्षकांश्च समादिशन्ति। ज्ञातुमस्तुभवताम्। ग्रामोऽयमस्माभिः सप्रक्रियाभिर्नवजयदेव महाराजपंडित ठक्कुर श्रीविद्या-पतिभ्यः शासनीकृत्य प्रदत्तोऽतोऽयमेतेषां वचनकरी भूकर्षणादिकर्म्मकरि-ष्यथेति॥ ल० सं० २९३ श्रावण शुदि ७ गुरौ।

इनके वंशधर बहुत दिनों तक इसी गाँव में बसते रहे। किन्तु, इधर चार पुश्त पहले, वे इस गाँव को छोड़कर इसी जिले के 'सौराठ' नामक गाँव में बस गये हैं। अँगरेजी राज्य के पहले तक वे लोग इस गाँव का उपभोग, लाखिराज के रूप में, करते थे। किन्तु अँगरेजी सरकार द्वारा सर्वे (पैमाइश) होने के समय इस गाँव का स्वत्व इनके वंशधरों से छीन लिया गया। उस समय इनके वंशधरों ने अपना स्वत्व सिद्ध करने के लिये उपर्युक्त ताम्रपत्र पेश किया था। इस ताम्रपत्र के सम्बन्ध में कुछ दिनों तक खूब विवाद चला। ग्रिअर्सन साहब इसे जाली बताते रहे। किन्तु महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री तथा अन्य वंगीय अनु-संधान-कर्त्ताओं ने इस दान-पत्र को प्रामाणिक माना है।

'बिसपी' गाँव इनको शिवसिंह ने अवश्य दिया था। विद्यापति के पुत्र सिद्ध विद्वेषी पंडित केशव मिश्र इसी दान की ओर लक्ष्य कर 'अति लुब्ध नगर-याचक' नाम से इनका उपहास किया करते थे।

बंगाली नहीं, विहारी

इन्हें बंग-देशीय सिद्ध करने के लिये भी कोशिश हुई थी।

बात यों है कि इनकी अधिकांश रचनाएँ श्रृंगार-रस से ओत-प्रोत हैं। भारतीय श्रृंगारी कवियों के प्रधान उपास्य देव हैं—राधाकृष्ण। संस्कृत और व्रज-भाषा का श्रृंगार-साहित्य राधाकृष्ण की केलि-क्रीड़ाओं से भरा पड़ा है। इन्होंने भी अपने पदों में राधाकृष्ण की लीलाओं का वर्णन किया है और खूब किया है। इस विषय के ऐसे मधुर और कोमल पद भाषा-साहित्य में कहीं अन्यत्र मिलना कठिन है।

जिस समय बंगाल में चैतन्य महाप्रभु का आविर्भाव हुआ, उस समय इस कवि-कोकिल की काकली मिथिला की गली-गली को रसप्लावित कर बंगाल के श्यामल व्योम मंडल को गुँजा रहा था। चैतन्यदेव के कानों में भी इसकी मधुर ध्वनि पड़ी। सुनते ही वे मंत्र-मुग्ध हो गये। वे ढूँढ़-ढूँढ़कर इनके पद गाने लगे। इनके अलौकिक पदों को गाते-गाते प्रेमावेश में, वे मूच्छित हो जाते थे!

चैतन्यदेव भारत के अवतारी पुरुषों में हैं—ऐसा सौभाग्य प्राप्त करना विद्यापति के लिये कितने गौरव की बात है!

चैतन्यदेव की शिष्य-परम्परा में विद्यापति के पद गाने की प्रथा अनुदित बढ़ती गई। यही नहीं, विद्यापति के ही अनुकरण पर कृष्णदास, नरोत्तमदास, गोविन्ददास*, ज्ञानदास, श्रीनिवास, नरहरिदास आदि बंगीय कवियों ने कविताएँ बनाना प्रारम्भ किया।

---

* 'गोविन्ददास' मैथिल कवि थे। इनके पदों का सटिप्पण संग्रह 'गोविन्दगीतावली' नाम से 'पुस्तक-भंडार' द्वारा प्रकाशित हो चुका है।

बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त लिखते हैं—"विद्यापतिर जे रूप अनुकरण हइआछिल, बोध हय कोन देशे कोन कविर तद्रूप हय नाइ। ... ताहाँरइ भाषा भाँगिया-चूरिया, गड़िया-गठिया, रूप-रस, छन्दोबंध, भाव-भंगी, शब्द, उत्प्रेक्षा, उपमा, ताँहारइ पदावली हइते लइया लोकमनोमोहन वैष्णवकाव्यसमूह सृजित हइल।"

श्रीत्रैलोक्यनाथ भट्टाचार्य, एम्० ए०, बी० एल० ने जो लिखा था उसका भाव देखिये—"विद्यापति और चंडीदास की अतुलनीय प्रतिभा से समस्त बंग-साहित्य उज्ज्वल और सजीव हुआ है। वैष्णव गोविन्द-दास और ज्ञानदास से लेकर हिन्दू बंकिमचन्द्र और ब्राह्म रवीन्द्रनाथ ठाकुर तक सब ही उनलोगों की आभा से आलोकित हैं, और उनलोगों का अनुकरण करके कविता-रचना में व्यस्त पाये जाते है।"

फल यह हुआ कि विद्यापति बंगालियों के रगरग मे प्रवेश कर गये। सैकड़ों वर्षों तक लगातार बंगालियो द्वारा गाये जाने के कारण इनके बंगदेशीय पदो का रूप भी ठेठ बँगला हो गया। अब तो बंगाली लोग यह सर्वथा भूल ही गये कि 'विद्यापति बंगाली नही, मैथिल थे'।

बंगाली भाई अपनी कुशाग्र बुद्धि के लिये प्रसिद्ध है। उन लोगो ने इनका निवास-स्थान भी बंगाल ही में ढूँढ निकाला! यही नहीं, 'शिवसिह' नामक एक बंगाली राजा भी कहीं से टपक पड़े—'रानी लखिमा देवी' भी मिल गई! यों सब प्रकार से सिद्ध हो गया कि 'विद्यापति ठेठ बंगाली थे!

बँगला १२८२ साल में (स्वर्गीय) राजकृष्ण मुखोपाध्याय ने पहले-पहल 'वङ्गदर्शन' नामक पत्र में यह प्रकाशित किया कि 'विद्यापति बंगाली नहीं, मैथिल थे'। इसके प्रमाण में उन्होने उपर्युक्त ताम्रपत्र आदि पेश किये। फिर तो सारे बंगाल में कोलाहल मच गया। विद्यापति पर बंगाली लोग इतने फिदा थे कि उनका अन्यदेशीय सिद्ध होना वे सुनना नहीं चाहते थे।

उस समय एक प्रसिद्ध बँगला-लेखक ने यह अन्दाज लड़ाया था कि विद्यापति बंगाली ही थे—पहले बंगाली लोग मिथिला में विद्याध्ययन को



जाते थे—सम्भव है, विद्यापति यहाँ से विद्याध्ययन को गये हों और वहाँ अपनी प्रतिभा से राजा शिवसिंह को प्रसन्न कर गाँव प्राप्त किया हो और बस गये हो।

किन्तु ये सब गपोड़-बाजियाँ अब गलत साबित हो चुकी हैं। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री, जस्टिस शारदाचरण मित्र, बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त आदि सभी वंगीय विद्वानों ने यह कबूल कर लिया है कि ये मिथिला- निवासी थे और इन्होंने मैथिली भाषा में कविता की है।

हमें धन्यवाद देना चाहिये श्रीयुत ग्रिअर्सन साहब को, जिन्होंने सबसे पहले विद्यापति का बिहारी होना सिद्ध किया था।

जन्म-काल

प्राचीन कवियों की तरह विद्यापति के जन्म और मृत्यु के समय भी निश्चित नहीं हैं। किंवदन्ती तथा स्फुट पदो के आधार पर ही इसकी विवेचना करना सम्प्रति संभव है।

पता तो केवल इसी का लगता है कि लक्ष्मणाब्द २९३ या शकाब्द १३२४ मे देवसिंह मरे थे, उसी साल शिवसिंह राजगद्दी पर बैठे थे, और राजगद्दी पर बैठने के छ: महीने के अन्दर उन्होंने विद्यापति को 'बिसपी' गाँव उपहार में दिया था।

शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु के विषय में विद्यापति का एक पद यों है—

अनल[3] रन्ध्र[9] कर[2] लक्खन नरवइ सक समुद्द[4] कर[2] अगिनि[3] ससी[1]।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ बार बेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहुमि छड्डिअ अद्धासन सुरराय सरू। इत्यादि

बाबू ब्रजनन्दन सहाय ने अपने 'मैथिल-कोकिल विद्यापति' ग्रंथ में लिखा है कि "बिसपी गाँव प्राप्त करने के समय विद्यापति की अवस्था केवल बीस वर्ष की थी—इसके पहले विद्यापति ने 'कीर्त्तिलता' नाम की पुस्तक लिखी थी। इस प्रकार सहायजी उसे १६ की अवस्था मे लिखी

हुई बताते हैं। सहायजी का यह कथन अनुमान-विरुद्ध तथा ऐतिहासिक प्रमाणों से असत्य सिद्ध होता है।

सबसे प्रधान कारण तो यह है कि शिवसिंह गद्दी पर बैठने के तीन वर्ष के बाद ही मुसलमानों से युद्ध करते हुए पराजित होकर किसी अज्ञात स्थान में चले गये, जहाँ से वे पुनः नहीं लौटे— सम्भवतः वे उसी युद्ध में मारे गये। इतिहास से यह * सिद्ध है, और स्वयं सहायजी ने भी इसे स्वीकार किया है। इससे तो यही सिद्ध होता है कि कुल तेईस वर्ष की अवस्था तक ही विद्यापति और शिवसिंह की संगति रही।

विद्यापति के अधिकांश पदों में शिवसिंह का नाम है। क्या यह कभी सम्भव हो सकता है कि केवल तीन-चार वर्षों के अन्दर ही इतने पद लिखे गये हों? अनुमान की बात जाने दीजिये, इतिहास भी इसके विरुद्ध है।

सहायजी ने अपनी पुस्तक मे लिखा है कि विद्यापति बचपन में अपने पिता 'गणपति ठाकुर' के साथ राजा गणेश्वर के दरबार में आते-जाते थे। नैपाल- दरबार के पुस्तकालय मे विद्यापति रचित 'कीर्त्तिलता' की पूरी पुस्तक महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्रीजी ने देखी थी और उसकी नकल भी उन्होंने करा ली थी। उस 'कीर्त्ति-लता मे लिखा हुआ है कि २५२ लक्ष्मणाब्द में राजा गणेश्वर की मृत्यु हुई थी। अतः राजा गणेश्वर की मृत्यु के पहले तो विद्यापति का जन्म अवश्य हो गया होगा—वे ऐसी अवस्था के जरूर रहे होंगे कि दरबार मे अपने पिता के साथ जा सके। २९२ लक्ष्मणाब्द में यदि विद्यापति केवल २० वर्ष के थे, तो २५२ लक्ष्मणाब्द मे वे राजा गणेश्वर के दरबार में कैसे आ-जा सकते थे—उस समय तो उनका जन्म भी न हुआ होगा!

---

*'मिथिला दर्पण' के रचयिता ने देवसिंह के बाद शिवसिंह का ४६ वर्षों तक राज करने की बात लिखी है। किन्तु 'मिथिलादर्पण' का काल-निर्णय नितांत अशुद्ध जान पड़ता है। यहाँ तक कि उसमें दी हुई राजाओं की वंशावली भी अशुद्ध है।—लेखक

बात यों है कि सहायजी को बाबू अयोध्याप्रसाद खत्री-लिखित 'मिथिला-राज्य की वंशावली' ने धोखा दिया है। खत्रीजी के कथनानुसार शिवसिंह के पिता देवसिंह की मृत्यु १४४६ ईसवी में हुई थी, जो लक्ष्मणाब्द २४७ होता है *। सहायजी ने स्वयं इसका खंडन किया है; क्योंकि विद्यापति के कथनानुसार लक्ष्मणाब्द २९३ में देवसिंह की मृत्यु हुई थी। यों खत्रीजी ने सहायजी के गणनानुसार ४६ वर्ष की भूल की है!

किन्तु एक जगह खत्रीजी के समय को गलत मानकर भी दूसरी जगह सहायजी ने उसे प्रामाणिक मान लिया है! 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी' नामक पुस्तक विद्यापति ने राजा नरसिंहदेव के समय में लिखना शुरू किया था, और उनके बाद के राजा धीरसिंह के समय में समाप्त किया था। नरसिंहदेव का समय खत्रीजी ने १४७० ई० लिखा है।-सहायजी ने इस समय को प्रामाणिक मान लिया है!

जब १४७० ई० के बाद तक विद्यापति के जीवित रहने की बात स्वीकार कर ली गई, तब उनके जन्म-संवत् को आगे बढ़ाना सहायजी के लिये जरूरी था। किन्तु सोचना तो यह था कि जिस प्रकार देवसिंह की मृत्यु के विषय में खत्रीजी ने ४६ वर्ष की भूल की है, वही ४६ वर्ष की भूल यहाँ भी की होगी। खत्रीजी की यह भूल भी इतिहास-सिद्ध है।

स्वयं सहायजी ने अपनी पुस्तक के पृष्ठ २० में लिखा है कि नरसिंह-देव के पुत्र धीरसिंह के राजत्वकाल में 'सेतुबंध' नामक प्राकृत-ग्रंथ की 'सेतुदर्पणी' नामक टीका लिखी गई थी, जिसके अनुसार ३२१ लक्ष्मणाब्द

---

* लक्ष्मणाब्द और ईसवी सन् के तारतम्य में भिन्न-भिन्न ऐतिहासिकों के भिन्न-भिन्न मत हैं। सहायजी ने शिवसिंह के राज्यारोहण काल (२९३ ल० स०) को १४०० ई० माना है, 'हिस्ट्री आफ तिरहुत' के रचयिता ने इसे १४१२ ई० लिखा है, और मेरे हिसाब से यह १४०२ ई० पड़ता है।—लेखक

मे धीरसिंह सिंहासन पर विराजमान बतलाये गये है। ३२१ लक्ष्मणाब्द १४२८ ई० मे पड़ता है *। सोचने की बात है कि जब पुत्र १४२८ ई० में राजगद्दी पर बैठा था, तब उसका पिता १४७० में कैसे राजा हुआ ? बस, साफ प्रकट है कि खत्रीजी ने यहाँ भी ४६ वर्ष की गलती की है।

१४७० मे ४६ घटा देने पर १४२४ ई० में नरसिंहदेव का राजा होना सिद्ध होता है। नरसिंहदेव ने, सहायजी के ही कथनानुसार, एक ही वर्ष तक राज किया था। सम्भव है, १४२५ मे वे मर गये हो और १४२८ मे उनके पुत्र धीरसिंह राजगद्दी पर विराजमान रहे हों। 'सेतुदर्पणी' से भी यही पता चलता है।

इसी ४६ वर्ष के फेर मे पड़कर जहाँ सहायजी ने केवल २० वर्ष की अवस्था में शिवसिंह और विद्यापति की भेंट कराकर तीन ही वर्षों में उनका चिरवियोग कराया, वहाँ विद्यापति की शताधिक वर्ष की अवस्था का भी भ्रम उन्हे हो गया था—जिसका औचित्य प्रमाणित करने के लिये आपने जमीन-आसमान का कुलावा मिलाया है, निजी और सार्वजनिक सब प्रमाणों को पेश किया है।

सहायजी को एक और तिथि ने भी धोखा दिया है। आपने पृष्ठ २३ मे लिखा है कि ३४९ लक्ष्मणाब्द मे इनके अपने हाथ से भागवत-पोथी की नकल करना सिद्ध होता है। यह गलत है। नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिल कविवर 'चंदा झा' के साथ स्वयं 'तरौनी' जाकर उस पुस्तक को देखा था। उस पुस्तक के अंत मे लिखा है—"शुभमस्तु सर्वार्थगता ल० सं० ३०९ श्रावण शुदि १५ कुजे राजाबनौली ग्रामे श्रीविद्यापतिर्लिपिरियमिति।" इस ३०९ को ही सहायजी ने भ्रमवश ३४९ मान लिया है!

अब यथार्थ बात सुनिये। वह इतिहास और जनश्रुति दोनों पर अवलम्बित है, और आपको युक्तियुक्त भी मालूम पड़ेगी।

एशियाटिक सोसाइटी मे एक प्राचीन हस्तलिखित पोथी है, जो १३२२ शकाब्द (=२९० लक्ष्मणाब्द) की लिखी हुई है। वह पोथी

---

* सहायजी की गणना के अनुसार।—लेखक

शिवसिंह की राजधानी 'गजरथपुर' में विद्यापति की प्रेरणा से लिखी गई थी। दो ब्राह्मणों ने उसे लिखा था। उसमें विद्यापति को 'सप्रक्रिय सदुपाध्याय ठक्कुर श्री विद्यापति' लिखा है, और शिवसिंह का नाम 'महाराजा' की उपाधि से युक्त है।

इससे दो बातों का पता चलता है। एक यह कि शिवसिंह अपने पिता के जीवनकाल में ही 'महाराजा' कहलाते थे। [मालूम होता है, वृद्ध पिता ने अपना शासन-भार पुत्र को ही सौंप दिया था और जनता शिवसिंह को ही अपना अधिपति मानती थी।] दूसरी बात यह प्रकट होती है कि शिवसिंह के सिंहासनारोहण के पहले से ही विद्यापति दरबार में रहते थे। देवसिंह के नाम से विद्यापति ने कुछ पद भी बनाये हैं।

हाँ, तो यह सिद्ध है कि पिता की मृत्यु के पहले से ही शिवसिंह राज्य-शासन करते थे। मिथिला में यह जनश्रुति है कि शिवसिंह पचास वर्ष की अवस्था में राजगद्दी पर बैठे थे और विद्यापति उनसे दो वर्ष बड़े थे। अतः शिवसिंह के राज्यारोहण के समय विद्यापति की अवस्था ५२ वर्ष की थी।

यदि यह जनश्रुति तथ्यपूर्ण मान ली जाय, तो प्रायः हम सत्य के निकट पहुँच सकेंगे; क्योंकि विद्यापति को उपर्युक्त ताम्रपत्र में 'अभिनव जयदेव' लिखा है। उस समय तक विद्यापति की कीर्त्ति चारों ओर फैल गई रही होगी। इनकी कविता के माधुर्य पर मुग्ध होकर लोग इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहने लगे थे। इनकी कविता राजा के अन्तःपुर से लेकर गरीबों की झोंपड़ियों तक में गूँज रही थी। राजसिंहासन पर बैठने के समय शिवसिंह अपने प्यारे सहचर विद्यापति को कैसे भूल सकते थे? जिसकी कविता-सुधा का पान कर वे मस्त बने थे, जिसकी कविता उन्हें और उनकी सहधर्मिणी 'लखिमा' को अमर कर चुकी थी, उसे वे कैसे कुछ पुरस्कार न देते? अतः राजगद्दी पर बैठने के कुछ ही दिनों के बाद उन्होंने विद्यापति को 'बिसपी' गाँव प्रदान किया!

बिसपी गाँव २९३ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति को दिया गया था। उस समय उनकी अवस्था लगभग ५२ वर्ष की होगी। अतः उनका जन्म २४१ लक्ष्मणाब्द में, या संवत् १४०७ विक्रमीय (=सन् १३५० ई०) में, होना सम्भव है।

इस कथन की पुष्टि पूर्वोक्त राजा गणेश्वरसिंह के दरबार में विद्यापति के आने-जानेवाली बात से भी होती है। 'कीर्त्तिलता' के अनुसार राजा गणेश्वर २५२ लक्ष्मणाब्द मे परलोकवासी हुए थे। उस समय विद्यापति १०—११ वर्ष के रहे होगे। तभी तो इनके पिता इन्हें राजदरबार में ले जाते थे।

वंश-विवरण

विद्यापति मैथिल ब्राह्मण थे। इनका मूल 'बिसइबार' और आस्पद 'ठाकुर' था।

मैथिलों में पंजी-प्रथा का प्रचलन है। जितने मैथिल ब्राह्मण और कर्ण कायस्थ हैं, सभी के नाम, पुश्त-दर-पुश्त, एक पोथी मे लिखे हुए है। इस पोथी को 'पंजी' कहते हैं।

पंजी से पता चलता है कि 'गढ़बिसपी' में कर्मादित्य त्रिपाठी नामक ब्राह्मण रहते थे। थे राजमंत्री थे। थे विद्यापति के वंश के आदि-पुरुष 'विष्णुशर्मा ठाकुर' के पोते थे।

कर्मादित्य के बाद इनके वंश में जितने महापुरुषों ने जन्म लिया, सभी तत्कालीन मिथिला के राजा के दरबार मे उच्च पदों पर काम करते रहे—कोई राजमंत्री थे, कोई राजपंडित—किसी को 'महामहत्तक' का उपाधि प्राप्त हुई, तो किसी को 'सान्धि-विग्रहिक' की।

इनका वंश अपनी विद्वत्ता और बुद्धिमत्ता के कारण उस समय मिथिला में बेजोड़ था। इनके वंश में कितने ही लेखक और कवि भी हो गये हैं।

कर्मादित्य के पोते वीरेश्वर ठाकुर ने, जो नान्य-वंशी राजा शत्रुसिंह

एवं उनके पुत्र हरिसिंहदेव * के राजमंत्री भी थे, 'छान्दोग्य-दशकर्मपद्धति' की रचना की थी। अभी तक इसी पुस्तक के अनुसार बिहार में दशकर्म किये जाते हैं।

वीरेश्वर के सोदर भाई धीरेश्वर, जो विद्यापति के निज प्रपितामह थे, 'महावार्त्तिकनैबन्धिक' नाम से प्रख्यात थे। वीरेश्वर के पुत्र चण्डेश्वर ने 'कृत्य-चितामणि', 'विवादरत्नाकर', 'राजनीति-रत्नाकर' आदि सप्तरत्नाकरो की रचना की थी। 'राजनीति-रत्नाकर' एक अत्यन्त बहुमूल्य ग्रन्थ है। प्राचीन भारतीय राजनीति पर इससे बहुत-कुछ प्रकाश पड़ता है। वे उपर्युक्त हरिसिहदेव के मंत्री एवं महामत्तक सान्धि-विग्रहिक थे।

विद्यापति के पिता पण्डित गणपति ठाकुर भी राजमंत्री थे। वे एक अच्छे कवि थे। उन्होने 'गंगाभक्ति-तरङ्गिणी, नाम की एक पुस्तक की रचना की थी।

यों देखा जाता है कि विद्यापति का वंश सरस्वती का अपूर्व कृपापात्र रहा है। जिस प्रकार इनके पूर्वजो ने राज्यकर्म मे अपनी अपूर्व चातुरी दिखलाई थी, उसी प्रकार सरस्वती-सेवा मे भी वे लोग पीछे नही रहे है। ऐसे प्रतिभावान् कुल मे उत्पन्न होकर विद्यापति ने जो कुछ काव्य-कुशलता दिखलाई है, वह स्वाभाविक ही है।

प्रारम्भिक जीवन

विद्यापति के पिता गणपति ठाकुर राजा गणेश्वर के सभापंडित थे। इनकी माता का नाम था 'हाँसिनी देवी'।

वह पिता धन्य है, जिसे ऐसा पुत्ररत्न प्राप्त हुआ था। वह माता भी धन्य है, जिसने ऐसे पुरुषरत्न को अपने गर्भ में धारण किया था। बिसपी

---

* हरिसिंहदेव शिवसिंह से बहुत पहले प्रसिद्ध 'सिमरौंव गढ़' के अधिपति थे। उन्होंने नैपाल को जीता था।—लेखक

गाँव की प्रत्येक कण पुण्यमय और धन्य है, जहाँ ऐसे कविकोकिल ने अपना जीवन व्यतीत किया था।

कहा जाता है, गणपति ठाकुर ने कपिलेश्वर महादेव की आराधना करके विद्यापति-सा पुत्र-रत्न प्राप्त किया था।

विद्यापति ने सुप्रसिद्ध हरिमिश्र से विद्याध्ययन किया था और उनके भतीजे सुख्यात पक्षधर मिश्र इनके सहपाठी थे। विद्यापति अपने पिता के साथ राजा गणेश्वर के दरबार मे बचपन से ही आया-जाया करते थे।

गणेश्वर के बाद कीर्त्तिसिंह राजा हुए। विद्यापति उनके दरबार मे आने-जाने लगे। प्रारम्भ से ही इनमे प्रतिभा की झलक दीख पड़ती थी। कीर्त्तिसिंह के दरबार मे, मालूम होता है, ये कुछ अधिक काल तक रहे होंगे, क्योंकि कीर्त्तिसिंह के नाम पर ही इन्होंने अपना पहला ग्रन्थ 'कीर्त्तिलता' रचा था। यह पूरा ग्रन्थ नैपाल के राज-पुस्तकालय में है। मिथिला में इस ग्रन्थ का केवल फुटकर अंश मिलता है।

'कीर्त्तिलता' कवि की तरुण वयस की रचना है। इसकी भाषा संस्कृत प्राकृत-मिश्रित मैथिली है। कवि ने इस भाषा का नामकरण 'अवहट्ट' भाषा किया है। 'कीर्त्तिलता' के प्रथम पल्लव मे कवि ने स्वयं कहा है—

देसिल बअना सब जन मिट्ठा।
ते तैसन जम्पओ अवहट्ठा॥

'देशी भाषा सबको मीठी लगती है, यही जानकर मैंने अवहट्ठ भाषा मे इसकी रचना की है।'

किन्तु इस पुस्तक की रचना के समय, मालूम होता है, कवि अपनी काव्य-कुशलता के लिये बहुत प्रसिद्ध हो गये थे। इनकी भाषा पर सभी मुग्ध थे। इनका प्रतिद्वन्द्वी उसी अवस्था में कोई नहीं था। ये अभिमान के साथ इस पुस्तक के प्रथम पल्लव मे लिखते हैं—

बालचन्द बिज्जावइ भाषा। दुहु नहि लग्गइ दुज्जन हासा॥
ओ परमेसर हर-सिर सोहइ। इ निच्चय नायर-मन मोहइ॥

"बाल-चन्द्रमा और विद्यापति की भाषा—इन दोनो पर दुष्टों की हँसी लग नहीं सकती। वह (बालचंद्रमा) देवता के रूप में शिव के सिर पर सोहता है और यह (विद्यपति की भाषा) निश्चय-पूर्वक नागरों का—सुचतुर भाषा-पंडितों का—मन मोहती है।"

इस पद के एक-एक शब्द से कवि का अभिमान टपकता है! 'जयदेव' के समान इन्हें भी अपनी भाषा पर नाज था। बात भी ठीक है। हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भाषा की मिठास और कोमलता की दृष्टि से तो इनका कोई भो प्रतिद्वंद्वी हिन्दी-साहित्य में नहीं है।

कीर्त्तिसिह के बाद शिवसिह के पिता देवसिह राजा हुए। देवसिह के समय मे राज्यशासन का भार शिवसिह के ही कंधो पर था। उसी अवसर पर विद्यापति और शिवसिह में घनिष्टता हुई। तब से विद्यापति शिवसिह के अन्तिम समय तक उन्ही के पास रहे।

संस्कृत-रचनाएँ

इसमे सन्देह नही कि संस्कृत-साहित्य का विद्यापति ने पूरी तरह से अनुशीलन किया था। इसका प्रमाण इनकी लिखी हुई संस्कृत की अनेकानेक पोथियाँ है।

प्रथम रचना उपर्युक्त 'कीर्त्तिलता' है।

दूसरो पोथी 'भू-परिक्रमा' है। यह राजा देवसिह की आज्ञा से लिखी गई थी। इसमें नैतिक शिक्षा से भरी कहानियाँ हैं। इसीका वृहद् रूप 'पुरुष-परीक्षा' है।

तीसरी पोथी है—'पुरुष-परीक्षा'। मालूम होता है, यह उस समय की रचना है जब इनके मस्तिष्क का पूरा विकास हो चुका था। यह राजा शिवसिह की आज्ञा से, उन्हीं के राजत्वकाल मे, लिखी गई थी। इसमे ललित कथाओं के रूप मे धार्मिक एवं राजनीतिक विषयों का वर्णन है। इसमें भी कवि ने शृङ्गार-रस के परदे में राजनीति और धर्म की शिक्षा दी है। इस पुस्तक का बहुत मान है। १८३० ईसवी में

इसका अँगरेजी में अनुवाद हुआ था। यह अनुवाद, लार्डबिशप टर्नर के परामर्श से, राजा कालीकृष्ण बहादुर ने किया था। फोर्टविलियम-कालेज में पहले यह पाठ्य पुस्तक का तरह पढ़ाई जाती थी। उक्त कालेज के बङ्गभाषा के अध्यापक हरप्रसाद राय ने १८१५ ई० में इसका भाषानुवाद किया था। ❀

चौथी पुस्तक 'कार्त्ति-पताका' है। इसमें मैथिली भाषा मे लिखी गई प्रेम-सम्बन्धी कविताएँ हैं।

पाँचवीं 'लिखनावली' है, जिसमे संस्कृत मे पत्रव्यवहार करने की रीति वर्णित है। यह रजाबनौली के अधिपति 'पुरादित्य' के लिये, २९९ लक्ष्मणाब्द में, लिखी गई थी। इसी रजाबनौली में विद्यापति ने ३०९ लक्ष्मणाब्द में अपने हाथ से 'भागवत' लिखकर समाप्त की थी।

छठी पुस्तक 'शैव-सर्वस्व-सार' है। यह शिवसिह की मृत्यु के बहुत दिनों के बाद, रानी विश्वासदेवो के समय में, लिखी गई थी। इसमें भवसिंह से लेकर विश्वासदेवी तक के समय के राजाओ की कीर्त्ति-कथा है एवं शिव की पूजा की विधि लिखी हुई है।

सातवीं पुस्तक 'गंगा-वाक्यावलि' है, जो विश्वासदेवी के ही लिये लिखी गई थी।

आठवीं पुस्तक है – 'दान-वाक्यावलि'। यह राजा नरसिह देव की स्त्री 'धीरमर्ता' को समर्पित की गई है।

नवीं पुस्तक 'दुर्गाभक्ति-तरंगिणी' दुर्गा-पूजा के प्रमाण और प्रयोग पर लिखी गई है। इसका निर्माण नरसिहदेव के कहने से हुआ था। धीरसिह के समय में यह पूरी हुई थी। इसमें धीरसिह के भाई भैरवसिह और चन्द्रसिंह के भी नाम आये हैं।

❀ 'पुरुष परीक्षा' का शुद्ध हिन्दी-अनुवाद 'पुस्तक-भंडार' से एक रुपये मे मिल सकता है।— प्रकाशक

इनके अतिरिक्त विभाग-सार (स्मृति-ग्रंथ), वर्षकृत्य और गया-पत्तन नामक संस्कृत-पुस्तकें भी इन्हीं की हैं।

अबतक मिथिला में खोज का काम कुछ नहीं हुआ है। सम्भव है, इनकी लिखी और भी संस्कृत-पुस्तकें हों, जो अभी तक छिपी पड़ी होंगी; क्योंकि ये दीर्घजीवी पुरुष थे। किन्तु केवल उपर्युक्त पुस्तकों के देखने से ही इनके प्रगाढ़ पांडित्य का परिचय मिलता है।

हिन्दी के लिये तो यह नितान्त गौरव की बात है कि उसका एक प्रथम श्रेणी का कवि संस्कृत-साहित्य में भी अपना खास स्थान रखता है।

उपाधियाँ

हिन्दी में आजकल प्रत्येक कवि अपना एक-एक उपनाम रखता है। किन्तु प्राचीन हिन्दी-कवियों में भी उपनाम देखे जाते है। हाँ, आजकल के उपनाम और प्राचीन समय के उपनाम मे एक गहरा भेद है। कोई राजा या प्रसिद्ध व्यक्ति, कवि की काव्य-कुशलता देखकर उसी के अनुसार, उपाधि-प्रदान करता था। वही उपाधि कवि का उपनाम होती थी। प्राचीन हिन्दी-कवियों में 'बिहारी', 'भूषण' आदि जो उपनाम देखे जाते है, वे सब राज-प्रदत्त उपाधियाँ हैं।

विद्यापति को भी कई उपाधियाँ प्राप्त हुई थी। 'अभिनव जयदेव' की उपाधि तो सर्वप्रसिद्ध है। 'बिसपी' गाँव का जो ताम्रपत्र है, उसमे भी विद्यापति 'अभिनव जयदेव' कहे गये है। मालूम होता है, यह उपाधि स्वयं शिवसिंह ने दी थी। विद्यापति इस उपाधि के सर्वथा योग्य भी थे।

जिस प्रकार संस्कृत-साहित्य मे, मधुर शृङ्गार वर्णन मे, जयदेव का जोड़ नही है, उसी प्रकार इस विषय मे विद्यापति भी भाषा-साहित्य मे अपना जोड़ नहीं रखते। उक्त उपनाम से इन्होने कुछ कविताएँ भी की हैं। एक पद यों है—

सुकवि नवजयदेव भनिश्र रे।
देवसिंह नरेन्दनन्दन।
सेतु नरवइ कुलनिकन्दन।
सिह सम सिवसिह राया।
सकल गुनक निधान गनिश्र रे॥

इनकी दूसरी उपाधि 'कविशेखर' है। इस नाम से भी इनकी बहुत-सी रचनाएँ है। न मालूम, यह उपाधि किसने दी थी। 'बिसपी' ग्राम के दानपत्र मे यह उपाधि नहीं है।

कविकंठहार और कविरंजन—इन दो नामों से भी इनकी अधिक कविताएं हैं।

दशावधान और पंचानन की उपाधियाँ भी इनकी कही जाती है।

कुछ कविताएँ चम्पति वा विद्यापति चम्पई नाम से भी है।

'दशावधान' नाम से कुछ कविताएँ भी हैं। यह उपाधि, कहा जाता है, दिल्लीश्वर ने दी थी।

धर्म-सम्प्रदाय

इनकी कविताएँ विशेषतः राधाकृष्ण-विषयक हैं। अतः लोगो की धारणा है कि वैष्णव रहे होगे। बंगाल में भी पहले यही धारणा थी। बाबू व्रजनन्दन सहाय ने अपने समर्पणपत्र में इन्हे 'वैष्णव-कवि-चूड़ामणि' लिखा है। किन्तु जनश्रुति और प्रमाण इसके विरुद्ध हैं।

बात यों है कि थे श्रृङ्गारिक कवि थे। श्रृङ्गार के आराध्य देव श्रीकृष्णजी ठहरे। अतः श्रृङ्गारिक वर्णन में राधाकृष्ण के रास-विलास का ही सहारा लिया जाता है। सभी भारतीय श्रृंगारिक कवियों ने इसी युगल मूर्त्ति को लक्ष्य कर श्रृंगारिक रचनाएँ की हैं।

किन्तु इसी से किसी कवि को वैष्णव मान लेना ठीक नहीं। इनके पिता शैव थे। शिव की उपासना के बाद ही उन्होने यह पुत्ररत्न प्राप्त

किया था। ऐसी अवस्था में इनका शैव होना बहुत सम्भव है। जनश्रुति भी ऐसी ही है। यही नहीं, इनका पद यों है—

आन चान गन हरि कमलासन
सब परिहरि हम देवा।
भक्त-बछल प्रभु बान महेसर
जानि कएलि तुअ सेवा॥

"कोई चन्द्र की पूजा करते हैं। कोई विष्णु की पूजा करते हैं। किन्तु मैंने सबको छोड़ दिया। हे वाण-महेश्वर, भक्तवत्सल जानकर मैंने तुम्हारी ही सेवा की।"

ये वाण-महेश्वर कौन हैं? 'बिसपी' से उत्तर 'भेड़वा' नामक एक गाँव में आज भी वाणेश्वर-महादेव है। कहते है कि ये इसी महादेव की उपासना करते थे।

यही नहीं, इनके बनाये हुए अनेकानेक शिवगीत या नचारियाँ है, जो मिथिला मे इनकी पदावली से भी अधिक प्रसिद्ध है। मिथिला मे इनकी पदावली तो विशेषतः स्त्रियों मे प्रचलित है। अधिकतर स्त्रियाँ ही इनके पद गाती है। पुरुषों मे तो नचारियाँ ही प्रसिद्ध है। तीर्थ-स्थानो को जाती हुई झुंड-की-झुंड कोकिलकंठी रमणियाँ जिस प्रकार इनके मधुर पद गाती-झूमती जाती हैं, उसी प्रकार तीर्थयात्री पुरुष के झुंड बड़े प्रेम से नचारियाँ गाते हैं।

कहते है, स्वयं महादेवजी इनकी भक्ति पर मुग्ध थे।

एक दिन एक अपरिचित आदमी इनके निकट आया, और इनकी नौकरी करने की अनुमति माँगी। इन्होने उसे रख लिया। उसका नाम 'उगना' था—कोई-कोई 'उदना' भी कहते है। 'उगना' के रूप मे स्वयं महादेवजी थे।

'उगना' इनके यहाँ रहने लगा। वह सदा इनकी सेवा में लीन रहता। एक दिन उसके साथ ये कहीं जा रहे थे। रास्ते मे इन्हें प्यास

लगी। उससे कहा। वह चल पड़ा। थोड़ी ही देर में वह एक लोटा पानी लेकर लौटा। ये उसे पीने लगे।

किन्तु, पीने पर इन्हें मालूम हुआ कि यह पानी गंगा का है। पूछा—"उगना, यह पानी कहाँ से लाया है?"

'उगना' ने कहा—"निकट के ही कुँए से!"

इन्होंने कहा—"यह जल कुँए का हो नहीं सकता, यह तो गंगाजल है।"

बहुत कहने-सुनने पर भी जब इनको सन्तोष न हुआ, तब 'उगना' ने अपना यथार्थ रूप प्रकट किया। स्वयं महादेव 'उगना' के रूप मे थे! यह पानी उन्हीं की जटा का था!

उस जगह, निकट में, कोई कुँआ या तालाब न पाकर महादेव ने अपनी जटा से पानी लेकर इन्हें दिया था। महादेव ने कहा—"देखो, तुम मेरे पूर्ण भक्त हो। मै तुमसे अलग नहीं रहना चाहता। किन्तु प्रतिज्ञा करो कि तुम कभी यह बात किसी से न कहोगे। खबरदार, जिस दिन यह बात प्रकट करोगे, उसी दिन मैं अन्तर्द्धान हो जाऊँगा।"

'उगना' इनके पास रहने लगा। किन्तु ये अब उसे कभी कोई नीच काम करने को न कहते। एक दिन इनकी स्त्री ने उससे कुछ लाने के लिये कहा। उसके लाने मे देर हुई। ब्राह्मणी बिगड़ पड़ी। ज्योंही वह निकट आया, एक चैला लेकर टूट पड़ी। यह देखकर ये चिल्ला उठे—"हा-हा! यह क्या कर रही हो? साक्षात् शिव पर प्रहार!!"

उसी क्षण 'उगना' अन्तर्द्धान हो गया। विद्यापति पागल होकर गाने लगे--

उगना रे मोर कतए गेला।
कतए गेला सिव कीदहु भेला॥
भाँग नहि बटुआ रुसि बैसलाह।
जोहि हेरि आनि देल हँसि उठलाह॥

जे मोर कहता उगना उदेस।
ताहि देबओं कर कँगना बेस॥
नन्दन-बन में भेटल महेस।
गौरि मन हरखित मेटल कलेस॥
विद्यापति भन उगना सों काज।
नहि हितकर मोर त्रिभुवन राज॥

इस तरह के कई पद हैं।

यद्यपि इस नास्तिकवाद के वैज्ञानिक युग मे इस कथा पर लोगो का विश्वास न जमेगा. किन्तु ऐसी घटनाओं से प्राचीन भारतीय इतिहास भरा पड़ा है। इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि ये वैष्णव नही, शैव थे। हाँ, यह बात निस्सन्देह सत्य है कि ये आज-कल के शैवों की तरह विष्णुद्रोही नहीं थे। ये शिव और विष्णु को एक ही रूप की दो कलाएँ मानते थे। इनका यह पद्य है—

भल हरि भल हर भल तुअ कला।
खन पित बसन खनहि बघछला।—इत्यादि

साथ-ही-साथ, देवियों—खासकर 'दुर्गा'—की स्तुति जो इन्होंने की है, उससे इनके शाक्त होने के विषय मे जरा भी सन्देह नही हो सकता। इनकी आलोचना करने पर ऐसा ही विश्वास दृढ़ होता है कि आधुनिक मैथिलों की तरह ये शिव, विष्णु तथा चंडी—तीनों—को मानते थे; पर किसी एक विशेष सम्प्रदाय के अनुयायी नही थे।

यदि आप आज मैथिलों के सिर का चन्दन देखेंगे तो बात स्पष्ट हो जायगी। वे एक ही साथ भस्मत्रिपुंड् भी धारण करते हैं, श्रीखण्ड-चन्दन भी और सिन्दुर-बिन्दु भी उपर्युक्त तीनो देवताओं की ये तीनो निशानियाँ हैं वे तीनों को समान आदर की दृष्टि से देखते हैं; पर किसी एक सम्प्रदाय के नहीं हैं।

आश्रयदाता शिवसिंह

इनके प्रधान आश्रयदाता राजा शिवसिंह थे। उन्हीं की छत्र-छाया मे रहकर इन्होंने अपने अधिकांश पदों की रचना की थी। जिस प्रकार शिवसिंह ने प्रचुर सम्पत्ति देकर इन्हें सांसारिक झंझटो से मुक्त कर दिया था, उसी प्रकार बदले में इन्होंने उनका और उनकी धर्मपत्नी 'लखिमा देवी' का नाम अपने पदो में देकर उन्हें अजर-अमर बना दिया है। शिवसिंह का भौतिक दान तो थोड़े ही दिनो में विलीन हो गया, किन्तु इन्होंने जो उन्हें यश का दान दिया वह अनन्त काल तक संसार में विद्यमान रहेगा।

ये शिवसिंह कौन थे?

मिथिला के नवीन युग के शासकों में 'सिमराँव' और 'सुगाँव' के राजघराने अधिक प्रसिद्ध हैं। राजा शिवसिंह 'सुगाँव'–राजघराने मे हुए थे। 'सुगाँव-राजघराने' के पहले 'सिमराँव'-राजघराने के लोग शासन करते थे। उनकी राजधानी 'सिमराँव- गढ़' में थी—जो वर्त्तमान चम्पारण जिले में है।

सिमराँव के राजा क्षत्रिय थे। इस राज्य के संस्थापक नान्यदेव थे। इसी राजकुल में सुप्रसिद्ध हरिसिंहदेव हुए थे जिन्होंने नैपाल-विजय किया था। हरिसिंहदेव के मंत्री विद्यापति के पूर्वज चंडेश्वर थे और उनके राजपंडित कामेश्वर ठाकुर।

कहा जाता है कि एक समय हरिसिंहदेव ने एक वृहद्- यज्ञानुष्ठान किया था। किन्तु अन्य राजाओं द्वारा यज्ञ भ्रष्ट कर दिया गया, जिससे विरक्त होकर वे जंगल में चले गये।

इसी समय सुअवसर पाकर दिल्ली के बादशाह ने मिथिला पर चढ़ाई की। मिथिला में उस समय अराजकता फैल रही थी। दिल्लीश्वर का चिर मनोरथ पूरा हुआ—मिथिला का शासन-सूत्र मुसलमानो के हाथ आया।

इस अवसर पर राजपंडित कामेश्वर ठाकुर ने बादशाह से भेंट की। बादशाह* उनके गुण से अत्यन्त संतुष्ट हुए—उनके अस्वीकार करने पर भी उन्हीं को मिथिला-प्रदेश का शासक नियुक्त किया। तभी से मिथिला का शासन ब्राह्मणों के हाथ आया।

कामेश्वर ठाकुर 'ओयनवार' ब्राह्मण थे। उनके पूर्वपुरुष पं० ओयन ठाकुर ने किसी राजा से—सम्भवतः नान्यदेव से—'ओयनी' नामक गाँव उपहार में पाया था। 'ओयनी' (वैनी) गाँव दरभंगा जिले में पूसा-रोड स्टेशन के निकट है। 'ओयनी' गाँव मे बसने के कारण इस वंश को 'ओयनवार वंश' कहते है।

ओयनवार-वंश के सबसे प्रथम राजा यही कामेश्वर ठाकुर हुए। उनके बाद उनके पुत्र भोगेश्वर, और भोगेश्वर के बाद उनके पुत्र गणेश्वर, राजा हुए। गणेश्वर के दो बेटे थे-वीरसिंहदेव और कीर्त्तिसिंह। इन्हीं कीर्त्तिसिंह के दरबार मे विद्यापति ने कीर्त्तिलता का निर्माण किया था। कीर्त्तिसिंह और उनके भाई वीरसिंह निःसन्तान मरे, तब भोगेश्वर के भाई भवसिंह के बेटे देवसिंह राजा हुए।

राजा शिवसिंह महाराज देवसिंह के पुत्र थे। उनकी राजधानी 'गजरथपुर' नामक नगर में बागमती नदी के किनारे थी।

यह गजरथपुर कहाँ है? दरभंगे से ४–५ मील पूर्व-दक्षिण कोने पर 'सिवईसिंहपुर' नामक एक गाँव है। लोगों का कहना है, उसी का दूसरा नाम गजरथपुर था। वहाँ जाकर पता लगाने पर एक वृद्ध ब्राह्मण से मालूम हुआ कि यही शिवसिंह की राजधानी थी—इधर भी उस गढ़ को खोदने से कभी-कभी सोना-चाँदी द्रव्य मिलते थे, किन्तु अब गढ़ का कहीं पता नहीं है—जहाँ पहले गढ़ था, वहाँ अब खेत लहरा रहे है।

---

*उस समय तुगलक-वंशी पठान-सम्राट् गयासुद्दीन का राज्यकाल था।—लेखक

शिवसिंह के प्रति विद्यापति की इतनी अनुरक्ति देखकर, मालूम होता है, वे बड़े ही रसिक और काव्यमर्मज्ञ* पुरुष थे। विद्यापति के पदों में उनके नाम के साथ-साथ उनकी प्राणप्रिया महारानी लखिमा देवी का भी नाम है। इस प्रकार रानी का नाम पदों में देने से लोगों ने उलटा-सीधा बहुत-कुछ अनुमान किया है। किन्तु यथार्थ बात तो यों है कि विद्यापति ने जहाँ कहीं किसी राजा का नाम दिया है, वहाँ साथ-ही-साथ साधारणतया उसकी रानी का भी नाम दिया है।

शिवसिंह और लखिमा देवी के नाम पदों में होने के विषय में मिथिला में यह प्रवाद है कि विद्यापति जिन पदों की रचना करते थे, वे सब राजा के अन्तःपुर में गाये जाते थे। राजा-रानी दोनों अन्तःपुर में एकत्र बैठते, उनके चारों ओर स्त्रियाँ आ बैठतीं। उस समय 'केटी' (चेरी) नाम की गायिकाओं की श्रेणी राजा और रानी की भणिता से युक्त विद्यापति के पद गाने लगती।

'केटी' स्त्रियाँ गान-विद्या में निपुण होती थीं। वे महल में किसी काम के लिये नियुक्त की जाती थीं।

इनके पदों में लखिमा के अतिरिक्त शिवसिंह की अन्य रानियों के भी नाम आये हैं। सम्भवतः लखिमादेवी ही पटरानी रही हों, या उन्हीं पर राजा की सबसे अधिक आसक्ति रही हो।

शिवसिंह जिस प्रकार कलाविद् थे, उसी प्रकार वीर योद्धा भी थे। उनको यह बात बहुत अखरती रही कि यवनों के वे अधीन हैं। पिता के जीवन में ही एक बार उन्होंने दिल्ली 'कर' भेजना बन्द कर दिया, जिसपर मुसलमानी फौज मिथिला आई। दैव-दुर्विपाक से शिवसिंह कैद

---

* विद्यापति के ही समान अन्य कितने कवि भी शिवसिंह के दरबार में थे। कहते हैं कि उन्हीं में से एक उमापति थे, जो 'पारिजात हरण' और 'रुक्मिणी-परिणय नामक भाषा नाटकों के रचयिता कहे जाते हैं। लोग पहले इन दोनों नाटकों के रचयिता विद्यापति को ही मानते थे। —लेखक

करके दिल्ली ले जाये गये। देवसिंह ने अधीनता स्वीकार कर अपना राज्य तो प्राप्त कर लिया, किन्तु पुत्रशोक से पीड़ित रहने लगे।

इधर विद्यापति को भी शिवसिंह के बिना चैन कहाँ? लखिमा की दशा का क्या पूछना! तब ये अपनी जान पर खेलकर शिवसिंह का उद्धार करने पर तुल गये। दिल्ली पहुँचे। वहाँ जाकर अपना परिचय दिया। सुलतान ने हुकुम दिया – अगर शायर हो, तो कुछ करामात दिखाओ। इन्होंने कहा कि मैं अदृष्ट का दृष्टवत वर्णन कर सकता हूँ। सुलतान ने एक सद्यःस्नाता सुन्दरी का वर्णन करने को कहा। ये गाने लगे –

कामिनी करए सनाने।

हेरितहि हृदय हनए पँचबाने।—आदि

सुलतान को इससे भी संतुष्टि नहीं हुई। विद्यापति एक काठ के संदूक में बंद किये गये और वह संदूक कुँए मे लटका दिया गया। ऊपर एक सुन्दरी स्त्री आग फूँकती हुई खड़ी की गई। तब इनसे कहा गया कि ऊपर जो कुछ है उसका वर्णन करो। ये संदूक के अन्दर से गाने लगे—

सजनी निहुरि फुकु आगि।
तोहर कमल भमर मोर देखल
मदन ऊठल जागि।
जो तोहे भामिनि भवन जएबह
ऐबह कोनह बेला।
जों ए संकट सौं जी बाँचत
होयत लोचन मेला॥

बादशाह अत्यन्त प्रसन्न हुआ। राजा शिवसिंह छोड़ दिये गये। तब इन्होंने निम्नलिखित पद कहा—

भन विद्यापति चाहथि जे विधि
करथि से से लीला।

राजा सिवसिंह बँधन मोचल
तखन सुकवि जीला ॥

राजा शिवसिंह की दानशीलता की कहानियाँ अभी तक मिथिला मे प्रचलित हैं। उन्होंने अपने पिता का तुलादान कराया था। कितने ही तालाब खुदवाये थे। प्राचीन कमला नदी के किनारे 'लहेरा' नामक गाँव मे घोड़दौड़' नामक एक तालाब खुदवाया था। कहते है, उन्होंने वहाँ अपना निवासस्थान भी बनाया था। उसका भग्नावशेष अभी तक पाया जाता है। मधुबनी (दरभंगा) से दक्षिण 'पतौल' नामक गाँव मे उनका खुदवाया हुआ एक तालाब है, जिसके विषय मे यह कहावत प्रसिद्ध है –

पोखरि रजोखरि और सब पोखरा।
राजा सिवसिंह और सब छोकरा॥

वे बहुत दिनों तक युवराज के रूप मे कार्य करते रहे, किन्तु प्रजा उन्हें ही अपना राजा समझती थी। देवसिंह तो नाम-मात्र के राजा थे। युवराजावस्था मे ही शिवसिंह 'महाराज' कहे जाते थे।

ल० २९३ मे देवसिंह की मृत्यु हुई। ठीक उसी समय दिल्लीश्वर ने भी मिथिला पर चढ़ाई कर दी। दिल्लीश्वर के साथ बंगाल के नवाब भी थे। शिवसिंह के लिये बड़े संकट का समय था। एक ओर पिता का श्राद्धादि कर्म, दूसरी ओर युद्ध का आयोजन!

विद्यापति ने प्राकृत मिश्रित एक पद मे शिवसिंह की इस विजय की चर्चा यों की है—

अनल रंध्र कर लक्खन नरवइ, सक समुद्द कर अगिन ससी।
चैत कारि छठि जेठा मिलिओ, बार बेहप्पय जाहु लसी॥
देवसिंह जू पुहमी छड्डिअ अद्धासन सुरराए सरु।
दुहु सुरतान नीदे अब सोअओ तपन हीन जग तिमिर भरु॥
देखहु ओ पृथिवी के राजा, पौरुस माझ पुन्न बलिओ।
सत बले गंगा मिलिअ कलेवर, देवसिंह सुरपुर चलिओ॥

एकदिस सकल जवन वल चलिओ, ओकादिस से जमराए च।
दूअओ दलटि मनोरथ पुरओ, गरुअ दाप सिवसिंघ करू॥
सुरतरु कुसुम घालि दिसि पूरिओ, दुन्दुभिसुन्दर साद धरू।
वीर छत्त देखन को कारन, सुरगन सते गगन भरू॥
आरम्भिए अन्तेट्टि महामख, राजसूअ असमेध जहाँ।
पंडित घर अचार बर बानिज, जाचक काँ घर दान कहाँ॥
विज्जावइ कविवर यहु गावय, मानव मन आनन्द भओ।
सिंहासन सिवसिह बइठ्ठो, उच्छवै बैरस बिसरि गओ॥

शिवसिंह ने राजगद्दी पर बैठते ही उनको बिसपी गाँव उपहार में दे दिया। राज्यारोहण के तीनहीं वर्ष बाद पुनः यवन-सेना मिथिला पर आ चढ़ी। पहली बार पराजित होने के कारण स्वभावतः बादशाह ने बड़ी तैयारी की थी। शिवसिंह दूरदर्शी थे, भविष्य समझ गये। किन्तु तो भी अधीनता स्वीकार करना उन्हें नापसन्द हुआ। उन्होंने अपनी स्त्रियों को, विद्यापति के साथ, अपने मित्र राजा पुरादित्य के पास 'रजा-बनौली' (नेपाल-तराई) भेज दिया।

राजा पुरादित्य द्रोणवार-कुल के ब्राह्मण थे। बड़े ही प्रताप-शाली थे। अपने बाहुबल से सप्तरी-परगना जीतकर उसमें अपना राज्य स्थापित किया था। विद्यापति अपनी 'लिखनावली' में लिखते हैं—

जित्वा शत्रुकुलं तदीय वसुभिर्येनार्थिनस्तर्पिता।
दोर्दर्पार्जित सप्तरीजनपदे राज्यस्थितिः कारिता।
संग्रामेऽर्जुन भूपतिर्विनिहतो बन्धोनृशंसायितः।
तेनेयं लिखनावली नृपपुरादित्येन निर्मापिता॥

शिवसिंह, सेना के साथ, बादशाह से जा भिड़े। वे शाही सेना का व्यूह भेदकर बादशाह के निकट पहुँच गये और अपनी तलवार से उसका शिरस्त्राण उड़ाते हुए फिर बाहर निकल आये। उनकी वीरता पर

बादशाह मुग्ध हो गया। यवन-सेना उनके पीछे दौड़ी, तो बादशाह ने मना कर दिया।

शिवसिंह वहाँ से नैपाल की ओर जंगल में चले गये और पुनः अपने राज्य में न लौटे। कोई-कोई कहते हैं, वे मारे गये।

उनको मृत्यु—अथवा पलायन—के बाद, मालूम होता है, विद्यापति बहुत दिनों तक लखिमा देवी* के साथ रजाबनौली में ही रहे, क्योंकि यहीं पर २९९ लक्ष्मणाब्द में यहाँ के राजा पुरादित्य के लिये इन्होंने 'लिखनावली' लिखी। यही नहीं, ३०९ लक्ष्मणाब्द में इन्होंने स्वलिखित भागवत की पोथी भी यहीं समाप्त की।

'लिखनावली' के बाद इन्होंने शिवसिंहके भाई पद्मसिंह की स्त्री विश्वासदेवी के लिये दो ग्रन्थ लिखे। इन दोनों ग्रन्थों में समय नहीं दिये गये है।

पद्मसिंह के उत्तराधिकारी हरिसिंह के लिये इन्होंने 'विभागसार' की रचना की थी। उनकी स्त्री धीरमती के लिये 'दानवाक्यावली' लिखी थी।

इनकी अन्तिम रचना 'दुर्गा-भक्ति-तरंगिणी' है। यह नरसिंहदेव के समय में प्रारम्भ की गई थी और धीरसिंह के राजत्वकाल में समाप्त हुई थी।

धीरसिंह का समय, 'सेतुदर्पिणी' के अनुसार, ३२१ लक्ष्मणाब्द है। अतएव, इस समय तक, अर्थात् संवत् १४८७ वि० या १४३० † ई० तक इनका जीवित रहना सब प्रकार से सिद्ध है।

*लखिमा देवी की विद्वत्ता, चतुरता और प्रत्युत्पन्नमतित्व की अनेक जनश्रुतियाँ मिथिला में प्रचलित हैं। किसी-किसी ऐतिहासिक के मत से उन्होंने शिवसिंह के बाद ६ वर्ष तक राज भी किया था। किन्तु स्वयं विद्यापति ने कहीं भी इसकी ओर इशारा तक नहीं किया है। अतः यह बात अप्रामाणिक मालूम होती है। —लेखक

† 'हिस्ट्री आफ तिरहुत' में ३२१ लक्ष्मणाब्द को १४३९ ई० लिखा है। —लेखक

मृत्यु-काल

३२१ लक्ष्मणाब्द तक इनका जीवित रहना सिद्ध होता है। धीरसिंह के बाद के किसी राजा के नाम से ‡ लिखी गई इनकी कोई पुस्तक नहीं मिलती है। इससे अनुमान होता है कि धीरसिंह के राजत्वकाल में ही या उनके थोड़े ही दिनों के बाद इनकी मृत्यु हो गई। इनका एक पद यों है—

सपन देखल हम सिवसिंघ भूप।
बतिस बरस पर सामर रूप॥
बहुत देखल गुरुजन प्राचीन।
आब भेलहुँ हम आयुबिहीन॥
सिमटु सिमटु निअ लोचन नीर।
ककरहु काल न राखथि थीर॥
विद्यापति सुगतिक प्रस्ताव।
त्याग के करुणा रसक सुभाव॥

इससे पता चलता है कि शिवसिंह के मृत्यु के बत्तीस वर्ष बाद विद्यापति ने उन्हें स्वप्न में देखा था। ऐसी प्राचीन धारणा है कि 'बहुत दिनों पर यदि अपना कोई मृत प्रेम-पात्र मलिन वेश में दीख पड़े, तो मृत्यु निकट समझनी चाहिये'। यही भाव बड़े ही कारुणिक शब्दों में उपर्युक्त पद में वर्णित है।

‡ विद्यापति के एक पद में 'कंसदलन नारायण सुन्दर तसु रंगिनि पए होई' ऐसी भणिता है। मैंने भ्रमवश पहले इस 'कंस-दलन-नारायण' को 'कंस-नारायण' नामक मिथिला का राजा समझा था। एक तो नाम में ही भेद है, दूसरे राधा का वर्णन है, अतः वहाँ कृष्ण अर्थ है। 'कंस नारायण' विद्यापति की मृत्यु के बहुत पश्चात् राजा हुए थे।—लेखक

शिवसिंह २९६ लक्ष्मणाब्द में मरे थे अतः ३२८ लक्ष्मणाब्द में विद्यापति ने उक्त स्वप्न देखा होगा, जो विक्रमीय संवत १४९४ होता है। यदि हम इस स्वप्न के तीन वर्ष के बाद इनकी मृत्यु मान लें, तो ये नब्बे वर्ष की अवस्था में, संवत् १४९७ वि० में (या १४४० ईसवी म , मरे थे। श्रीनगेन्द्रनाथ गुप्त ने भी इसी समय को प्रामाणिक माना है।

उस समय ये बूढ़े हो चले थे। जन्म-भर शृंगार-रचना में व्यस्त रहने के कारण अन्तिम समय में संसार से इन्हें विरक्ति हो गई थी। इन्हें अपना भविष्य अन्धकारमय प्रतीत होता था—निराशा की काली घटा ने इनके हृदय-व्योम को आच्छादित कर लिया था। ये अत्यन्त करुण-स्वर मे गाते है—

तातल सैकत बारि-बुँद सम, सुत मित रमणि समाज।
तोहें बिसरि मन ताहि समर्पिनु अब मझु हब कौन काज॥
माधव, हम परिनाम निरासा।
तुहु जगतारन दीन दयामय अतए तोहर बिसबासा॥
आध जनम हम नींद गमायनु जरा सिसु कत दिन गेला।
निधुबन रमनि रभसरँग मातनु तोहे भजब कओन बेला॥

इन्होंने अपनी कविता-रचना द्वारा प्रचुर सम्पत्ति प्राप्त की थी। वृद्धावस्था में इस धन को देख-देखकर कहते है—

जतन जतेक धन पापे बटोरल मिलि-मिलि परिजन खाए।
मरनक बेरि हरि कोई न पूछए करम संग चलि जाए॥
ए हरि बन्दों तुअ पद नाय।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि पारक कओन उपाय॥
जावत जनम नहि तुअ पद सेबिनु जुबती मतिमय मेलि।
अमृत तजि किए हलाहल पीअनु सम्पद अपदहि भेलि॥

ये अपनी उमर की ओर लक्ष्य कर कहते हैं—

बयस, कतह चल गेला।
तोहें सेवइत जनम बहल, तइओ न अपन भेला॥

बयस, तुम कहाँ चले गये। तुम्हें सेवते हुए अपना जन्म बिता दिया; किन्तु तुम अपने न हुए!

कहा जाता है, अपना मृत्यु-समय निकट आया जान ये अपने घर के लोगों से विदा लेकर गंगा-सेवन को चले। गंगा-सेवन की प्रथा मिथिला मे अद्यावधि प्रचुरता से प्रचलित है। गंगा-यात्रा के अवसर पर इन्होंने अपने पुत्र को बहुत-कुछ उपदेश दिया। कहा—"बेटा, प्रजारंजन करना, अतिथि-सत्कार में कभी न चूकना, दूसरे की स्त्री को माता के तुल्य जानना।"

पश्चात् ये अपनी कुल-देवी विश्वेश्वरी के निकट गये। देवी से जाने की अनुमति माँगी। कहा—"माँ, अब गंगा जा रहा हूँ। जन्म-भर शिव की आराधना की। अब विदा दो।"

घर पर सभी को सन्तोष दे, पालकी पर चढ़कर गंगा की ओर चले। राह में जब गंगा से कुछ दूर पर ही थे, तब अपनी पालकी रखवा दी। एक अभिमानी भक्त की तरह कहा— "मैं इतनी दूर से मैया के निकट आया, क्या मैया मेरे लिये दो कोस आगे नहीं बढ़ आवेगी?"

रात बीती। दूसरे ही दिन लोग दृश्य देखकर अवाक् रह गये। गंगा अपनी धारा छोड़, दो कोस की दूरी पर, पहुँच गई थी!!

आज तक उस स्थान पर गंगा की धारा टेढ़ी नजर आती है। उस स्थान का नाम 'मऊ बाजितपुर' है। यह दरभंगा जिले में है। यहीं इनकी मृत्यु हुई।

इनकी चिता पर एक शिव-मन्दिर की स्थापना की गई। यह शिव-मंदिर आजतक विद्यमान है। इनकी मृत्यु-तिथि के विषय मे एक पद प्रचलित है।

विद्यापतिक आयु अवसान।
कातिक धवल त्रयोदसि जान॥

इसके अनुसार इनकी मृत्यु कार्त्तिक शुक्ला त्रयोदशी को हुई। यह तिथि प्रामाणिक समझ पड़ती है। कार्त्तिक महीने में गंगा-सेवन करने का, हिन्दू-शास्त्र के अनुसार, बड़ा महत्त्व है। इनकी मृत्यु गंगा-तट पर

हुई थी—जब कि ये गंगा-सेवन करने गये थे। अतः इस तिथि को अप्रामाणिक मानने का कोई कारण नहीं।

हस्ताक्षर

विद्यापति, प्राचीन हिन्दी-कवि चन्द बरदाई को छोड़कर, सभी प्रसिद्ध हिन्दी-कवियों से पहले हुए थे। इनके हाथ की लिखी हुई इनकी निजी रचना—पदावली या संस्कृत-पोथियाँ—नहीं पाई जाती। हाँ, एक 'सटीक भागवत' की पोथी इनके हाथ की लिखी अवश्य पाई जाती है। यह पुस्तक दरभंगे से बारह कोस दूर 'तरौनी' नामक गाँव में जयनारायण झा की विधवा पत्नी के पास सुरक्षित है। दरभंगा-जिले की पंडितमंडली का पूरा विश्वास है, और जनश्रुति से भी यह सिद्ध है कि यह विद्यापति के हाथ से लिखी गई थी। यह ताल-पत्र पर लिखी हुई है। प्रत्येक पत्र की लम्बाई दो फीट और डेढ़ इंच तथा चौड़ाई सवा दो इंच के लगभग है। पत्र की संख्या ५७६ है। पत्र के दोनों ओर लिखावट है। प्रत्येक पृष्ठ में छः पंक्तियाँ है। लिपि स्पष्ट, अक्षर की आकृति बड़ी, प्रत्येक अक्षर अलग-अलग, विराम और विभाग का चिह्न सर्वत्र विद्यमान। लिखावट सुन्दर, कहीं भी एक अशुद्धि अथवा लिपिदोष नहीं। रोशनाई प्रायः सर्वत्र स्वच्छ। अन्तिम पत्र काष्ठ के वेष्टन घर्षण और बन्धन के कारण जीर्ण हो गया है और लिखावट भी अस्पष्ट हो गई है। ग्रन्थ के शेष में लिखा है—

"शुभमस्तु सर्व्वार्थगता संख्या ल० सं० ३०६ श्रावणशुक्ल १५ कुजे रजाबनौलीग्रामे श्रीविद्यापतिलिपिरियमिति।"

अन्तिम दो अक्षर 'मिति' पत्रांश से छिन्न हो गया है। 'रजाबनौली' गाँव दरभंगे से प्रायः १५ कोस उत्तर है। शिवसिंह २९३ लक्ष्मणाब्द में राज्यासन पर बैठे थे। उनकी मृत्यु उसके तीसरे साल हुई थी। इस तरह उनकी मृत्यु के तेरह साल बाद की यह पोथी है।

मालूम होता है, शिवसिंह की मृत्यु के बाद इनका जी सांसारिक कार्यों से उचट गया था—कम-से-कम शृंगारिक रचनाओं की ओर से।



मित्र-वियोग होने पर ऐसा होना सम्भव भी है। उसी शोकावस्था में, अपने चित्त की शान्ति के लिये, इन्होंने यह कष्टकर कार्य प्रारम्भ किया हो तो आश्चर्य नहीं।

परिवार

इनके बेटे का नाम 'हरपति' था। इनके एक पद में उनका नाम आया है। इनके एक कन्या भी थी। मिथिला में यह प्रवाद है कि इनकी लड़की का नाम 'दुलही' था। इन्होंने कितने पद ऐसे बनाये हैं, जिनमें पति-गृह-गमन के समय कन्या को उपदेश दिया गया है। उन पदों में 'दुलही' शब्द आया है। कहते हैं, ये पद इन्होंने अपनी पुत्री को ही सम्बोधित कर लिखे थे।

'दुलही' का अर्थ नववधू भी होता है। न मालूम, क्या रहस्य है? मिथिला के एक वृद्ध ब्राह्मण के घर में एक पद प्राप्त हुआ है, जिससे सिद्ध होता है कि इनकी लड़की का नाम 'दुलही' था। अन्तिम काल में ये कहते हैं—

दुल्लहि, तोहर कतय छथि माए।
कहुन ओ आबथु एखन नहाए॥

'दुलही' तुम्हारी माँ कहाँ हैं? कहो न, वे इस समय स्नान कर आवें।'

दरभंगे के वर्त्तमान राजघराने में 'नरपति ठाकुर' नामक राजा हो गये हैं। उनके दरबार में 'लोचन' नामक एक कवि थे। लोचन ने 'रागतरंगिणी' नामक एक पुस्तक का संकलन किया था। उसमें उसने विद्यापति के बहुत-से पद रक्खे हैं।

'रागतरंगिनी' में एक कविता 'चन्द्रकला' नामक एक रमणी की बनाई हुई पाई जाती है। लोचन ने इस कविता पर टिप्पणी की है— "इतिश्रीविद्यापतिपुत्रवध्वाः"। इससे मालूम होता है, 'चन्द्रकला' विद्यापति की पतोहू थी। यहाँ पर चन्द्रकला की उस कविता को उद्धृत करने का लोभ हम संवरण नहीं कर सकते—

स्निग्ध कुञ्चित कोमलं कच गंडमंडित कोमलम् ।
अधर बिम्ब समान सुन्दर शरदचन्द्रनिभाननम् ॥
जय कम्बु कंठ विशाल लोचन सारमुज्ज्वल सौरभम् ।
बाहुवल्लि मृणाल पंकज हार शोभित ते शुभम् ॥

शोभय सुन्दरि मम हृदयम् ।

गदगद हास सुदति निपुणम् ॥

उर पीन कठिन विशाल कोमल याति युग्म निरंतरम् ।
श्रीफला कमला विचित्र विधातु निर्मल कुच वरम् ॥
श्यामा सुवेषा त्रिवलि रेखा जघनभार विलम्बिते ।
मत्त गज-कर जघन युगवर गमन गति वरटा-जिते ॥

सुललित मन्द गमन करई ।
जनि पति संग वरटा भमई ॥

अतिरूप यौवन प्रथम सम्भव कि वृथा कथया प्रिये ।
तेजह रूप-विमोह परिहरि शोक चिन्तित चिन्तये ॥
उपयात मदन-व्याधि दुःसह दहए पावक से बनम् ।
पवन दिसे दिसे दहए पावक युग्मदारज सम्वरम् ॥

श्यामा सवन्दिते ।
अति समय गीत सुशोभिते ॥

आत्म दान समान सुन्दरि धार वर्षति सिञ्चये ।

सिञ्चह सुन्दरि मम हृदयम् ।
अधर-सुधा मधुपानमियम् ॥

चन्द्र कवि जयदेव मुद्रित मान तेज तोहें राधिके ।
वचन मम धर कृष्णमनुसर किन्तु कामकला शुभे ।

चन्द्रकला हे वचन करसी ।
मानिनि माधवमनुसरसी ॥

सहपाठी पक्षधर मिश्र

पक्षधर मिश्र मिथिला के प्रकांड विद्वान हो गये हैं। वे विद्यापति के सहपाठी थे। इन्होने 'बिसपी' गाँव में एक अतिथिशाला बनवा रक्खा था। प्रतिदिन भोजन के पश्चात् ये स्वयं अतिथिशाला में जाते और अतिथियों से वार्त्तालाप करते।

प्रवाद है कि एक दिन जब ये अतिथिशाला मे गये तब सभा अतिथि इनकी अभ्यर्थना मे खड़े हो गये। केवल कोने मे एक अत्यन्त कृश पुरुष बैठा ही रहा। इनके पूछताछ करने पर मालूम हुआ कि उसने भोजन नहीं किया है। उस पुरुष की दुर्बलता पर इनके मुख से सहसा निकल गया—

"प्राघुणो घुणवत् कोणे सूक्ष्मत्वान्नोपलक्षितः।"

'घर के कोने मे सूक्ष्म कीट-(घुन)-वत अतिथि सूक्ष्मतावशतः नहीं दीख पड़े।'

बैठे हुये पुरुष ने तुरत उस श्लोक की पूर्ति करते हुए उत्तर दिया—

"नहि स्थूलधियः पुंसः सूक्ष्मे दृष्टिः प्रायते॥"

'स्थूलबुद्धि पुरुष को सूक्ष्म पदार्थ नहीं दीख पड़ता।'

बोली सुनते ही ये अपने सहपाठी को पहचान गये। उन्हें आदरपूर्वक अपने घर ले आये। पक्षधर मिश्र सम्भवतः इनसे कुछ छोटे थे। उनके स्वहस्तलिखित एक 'विष्णुपुराण' मे ३४५ लक्ष्मणाब्द लिखा हुआ है।

विद्वेषी केशव मिश्र

बड़े लोगो के प्रति उनके अड़ोस-पड़ोसवाले सदा द्वेष-भाव रखते हैं, यह बात स्वयंसिद्ध है। इनके भी कुछ लोग विद्वेषी थे। ये शिवभक्त थे। शिव की पूजा करते समय, भावावेश मे, निज प्रणीत नचारी गाते-गाते, ये नाचने तक लगते थे। इसी कारण कुछ लोग इन्हें 'नर्त्तक' नाम से चिढ़ाते थे।

ऐसा प्रवाद है, इनके एक और प्रसिद्ध विद्वेषी हो गये हैं, जिनका नाम है, 'केशव मिश्र'। इनका समय ४७३ लक्ष्मणाब्द है अर्थात इनके लगभग सौ वर्ष पश्चात्।

मिश्रजी प्रसिद्ध शाक्त थे। 'द्वैत-परिशिष्ट' नामक स्वरचित ग्रन्थ मे उन्होंने 'देवीभागवत' को प्रामाणिक ग्रन्थ प्रतिपादित किया है।

विद्यापति ने अपने हाथ से श्रीमद्भागवत लिखा था, इसलिये मिश्रजी इनसे चिढ़-से गये थे। वे इनका 'अतिलुब्ध नगरयाचक' नाम से उपहास करते थे। इन्होने 'बिसपी' गाँव उपहार-रूप मे ग्रहण किया था—इसीलिये ये 'नगरयाचक' थे! द्वेष का कोई ठिकाना है!

मिश्रजी शिवसिंह के कुल की दौहित्र-संतान थे—राजकुटुम्ब के पुरुष थे। अतएव ऐसी उद्दंडता—ऐसी विद्वेषबुद्धि—स्वाभाविक भी है!

पदावली

यद्यपि इन्होंने लगभग एक दर्जन संस्कृत-ग्रन्थों का निर्माण किया था, तथापि इनकी प्रसिद्धि का खास कारण है इनकी 'पदावली'।

गाने योग्य छन्द 'पद' कहे जाते हैं। इन्होंने जितने छन्द बनाये, सभी संगीत के सुर-लय से बंधे हुए हैं। इन्होंने कविता में जयदेव को आदर्श माना है—लोग इन्हें 'अभिनव जयदेव' कहते भी थे। अतः, जयदेव के ही समान, ये संगीत-पूर्ण कोमल-कान्त पदावली में शृंगारिक रचना करते थे।

राजा नरपति ठाकुर के दरबारी कवि 'लोचन' ने अपनी 'राग-तरंगिणी' में लिखा है कि 'सुमति' नामक एक कलाविद् कायस्थ कत्थक के लड़के 'जयत' को राजा शिवसिंह ने विद्यापति के निकट रख दिया था। विद्यापति पद तैयार करते थे, जयत उसका 'सुर' ठीक करता था—

सुमतिसुतोदयजन्मा जयतः शिवसिंहदेवेन।
पंडितवरकविशेखर विद्यापतये तु सन्न्यस्तः॥

बिना संगीत का मर्म जाने संगीतमय पदों की रचना नहीं की जा सकती। मालूम होता है, ये स्वयं भी गान-विद्या में पारंगत थे।

इनके पदों में कहीं-कहीं छन्दोभंग-सा दीख पड़ता है। किन्तु, सूरदास के पदों में भी यही बात पाई जाती है। पर संगीत के सुर-लय के अनुसार जो पद बनाये जाते है, उनमें 'ध्वनि' का ही विचार किया जाता है—अक्षर और मात्रा का नहीं। इसीलिये संगीत से अपरिचित व्यक्तियों को इनके पदों में छन्दोभंग का आभास मिल जाता है।

पदावली का रूप

इन्होंने कितने पद बनाये थे, इसका भी अभी तक पूरा पता नहीं चलता है। श्री नगेन्द्रनाथ गुप्त ने ९४५ पदों का संग्रह प्रकाशित किया

था। बाबू ब्रजनन्दनसहायजी का संग्रह इससे बहुत छोटा है, तथापि उसमें कुछ ऐसे पद है, जो नगेन्द्रनाथ गुप्तवाले संस्करण में नहीं है। सहायजी के नये पदो मे नचारियो की ही प्रधानता है।

किन्तु अभीतक इनके बहुत-से अनूठे पद अप्रकाशित ही है। मिथिला की स्त्रियाँ जिन पदो को विवाह के अवसर पर गाती है उनका, तथा बहुत-सी नचारियो का, अभी संकलन नहीं हुआ है।

पदावली के प्राचीन संस्करणो को देखने से पता चलता है कि इन्होने पदों की रचना विषय-विभाग के अनुसार नहीं की थी। 'बिहारी' के ही समान ये भी, जब उमंग में आते थे, रचना कर डालते थे। पीछे लोगो ने उनका अलग-अलग विभाग कर सजा लिया।

पदावली की हस्तलिखित पोथियाँ

यों तो इनके अधिकांश पद लोगों को कंठस्थ ही है और उन्ही का संग्रह 'पदकल्पतरु' आदि बँगला के प्राचीन संग्रह-ग्रथों मे है, किन्तु हाल मे तीन प्राचीन हस्तलिखित ग्रंथ मिले हैं जिनसे इनके कितने नवीन पद प्राप्त हुए है, एवं पदावली की प्रामाणिकता का पूरा पता चला है।

उन ग्रन्थों मे सबसे प्राचीन और प्रामाणिक तालपत्र पर लिखी हुई एक पोथी है। यह पोथी भी विद्यापति-लिखित 'भागवत' के साथ 'तरौनी' ग्राम के उन्ही स्वर्गीय पंडितजी के घर मे सुरक्षित पाई गई है। कहा जाता है कि विद्यापति के प्रपौत्र ने इसे लिखा था। इस पोथी की लिखावट और इसके तालपत्र को देखने से मालूम होता है कि कम-से-कम तीन सौ वर्षों का यह प्राचीन है। लापरवाई से रखने के कारण यह पोथी जीर्ण-शीर्ण हो गई है। पहला और दूसरा पत्र गायब है। फिर नवाँ नहीं है। इसके बाद ८१ से लेकर ९९ पत्र तक एकदम नहीं हैं। १०२ नम्बर का पत्र भी गायब है। १३२ पत्र के बाद का कुछ भी अंश नहीं मिलता। सम्पूर्ण पोथी न होने के कारण यह पता नहीं चलता कि यह कब लिखी गई, किसने इसे लिखा और कुल कितने पद इसमें थे। इस पोथी में लगभग ३५० पद बचे हुए हैं।

दूसरी पोथी नैपाल में पाई गई है। महामहोपाध्याय हरप्रसाद शास्त्री ने प्रथम-प्रथम इसे नैपाल-दरबार के पुस्तकालय में देखा था। यह पोथी बहुत सुरक्षित है, किन्तु इस पोथी की भाषा में नैपाल-तराई (मोरँग) की बोली की छाप स्पष्ट दीख पड़ती है। मालूम होता है, इसे किसी मोरँग-निवासी ने लोगों से सुनकर लिखा था, जिससे ऐसी गलती हुई है। इस पोथी मे लगभग ३०० पद हैं।

तीसरी पोथी है पूर्वोक्त रागतरंगिणी। इसमें लोचन ने विद्यापति के बहुत-से पद रक्खे हैं। प्रत्येक पद के राग का निर्णय भी किया है। छन्द के नियम और मात्राओं की संख्या भी दी है। यह ढाई सौ वर्ष की प्राचीन पोथी है। लोचन ने लिखा है—'अपभ्रंश भाषा की रचना प्रथम-प्रथम विद्यापति ने ही की'।

पदावली की भाषा

पदावली की भाषा भी अबतक विवाद-ग्रस्त रही है। बंगाली लोग इनको बँगला का प्रथम कवि या बंगभाषा का प्रवर्त्तक मानते हैं। इसी लिये उनलोगों ने इनको बंगाली सिद्ध करने की भी चेष्टा की थी। किन्तु अब तो यह सब प्रकार सिद्ध हो गया कि ये मैथिल थे।

मैथिलों की एक खास बोली है—'मैथिली'। विद्यापति भी मैथिल थे, अतः मैथिल लोग इन्हें अपनी बोली मैथिली का प्रथम कवि मानते हैं। सचमुच यही ठीक है।

किन्तु यह मैथिली बोली किस भाषा की शाखा है—बंगभाषा की या हिन्दी-भाषा की? बाबू नगेन्द्रनाथ गुप्त ने मैथिली को ब्रज-बोली (या हिन्दी) की एक शाखा माना है।

गुप्तजी 'प्राच्य-विद्या-महार्णव' कहे जाते हैं। उनका निर्णय अधिक मूल्य रखता है। हमारी राय भी उनसे मिलती है।

मिथिला बंग-देश से सटी हुई है। विद्यापति का जन्म दरभंगे में हुआ था, जो द्वारबंग या 'बंगाल का द्वार' है। इसलिये मैथिली पर बंगभाषा का प्रभाव जरूर पड़ा है। यदि हम कह सकें, तो कह सकते हैं कि मैथिली का शरीर हिन्दी का है, और उसकी पोशाक बँगला की।

जिस प्रकार कोई हिन्दुस्तानी, अँगरेजी पोशाक पहनकर, अँगरेज नहीं बन जा सकता, उसी प्रकार मैथिली भी हिन्दी को छोड़कर वंगभाषा की नहीं हो सकती। हाँ, वंगभाषा के संसर्ग से इसमे मिठास अवश्य आ गई है।

पदावली की भाषा आज-कल की मैथिली से कुछ भिन्न है। यह स्वाभाविक भी है। विद्यापति को हुए पाँच सौ वर्ष बीते। इन पाँच सौ वर्षों मे भाषा में कुछ-न-कुछ परिवर्त्तन होना बहुत सम्भव है।

कुछ मैथिल महाशय इन पदों की भाषा को तोड़-फोड़कर आज-कल की मैथिली-बोली से मिलाने का अनुचित प्रयत्न करते हैं। किन्तु क्या वे समझने की चेष्टा करेंगे कि ऐसा करके वे इनकी स्वर्गीय आत्मा को कितना कष्ट पहुँचा रहे है!

इनकी भाषा की दुर्दशा भी खूब हुई है! बंगालियों ने उसे ठेठ बँगला का रूप दे दिया है, मोरँगवालों ने मोरँग का रंग चढ़ाया है, बाबू व्रजनन्दनसहायजी ने उसपर भोजपुरी की कलई की है, और आज-कल के मैथिल उसपर आधुनिक मैथिली का रोगन चढ़ा रहे हैं! भगवान इनकी कोमलकान्त पदावली की रक्षा करे!

पदावली की विशेषता

इनकी पदावली अपना खास स्वरूप, अपना खास रंग-ढंग रखती है। वह कहीं भी रहे, आप उसे कितनों की कविताओं मे छिपाकर रखिये, वह स्वयं चिल्ला उठेगी—मैं हिन्दीकोकिल की काकली हूँ। जिस प्रकार हजारों पक्षियों के कलरव को चीरती हुई कोकिल की काकली आकाश-पाताल को रसप्लावित और अपना स्वतंत्र अस्तित्व प्रकट करती है, उसी प्रकार इनकी कविता भी अपना परिचय आप देती है।

बंगाल के 'यशोहर' (Jessore) जिले में वसंतराय नामक एक कवि हो गये हैं। विद्यापति के पदों का प्रचार देखकर उन्होंने भी विद्यापति के नाम से कविता करना प्रारम्भ कर दिया था। किन्तु वे अपनी कविताएँ इनकी कविता में न खपा सके!



इनकी भाषा इनकी खास अपनी भाषा है, इनकी वर्णनप्रणाली इनकी खास वर्णन-प्रणाली है, इनके भाव स्वयं इनके ही हैं। इनकी पदावली पर 'खास' की मुहर लगी हुई है। बंगाल के सैकड़ों कवियों ने इनके अनुकरण पर कविताएँ कीं, किन्तु कोई भी इनकी छाया न छू सके।

ये एक अजीव कवि हो गये हैं। राजा की गगनचुम्बी अट्टालिका से लेकर गरीबों की टूटी हुई फूस की झोपड़ी तक में इनके पदों का आदर है। भूतनाथ के मन्दिर और 'कोहवर-घर' में इनके पदों का सामान्य रूप से सम्मान है।

कोई मिथिला में जाकर तमाशा देखे। एक शिवपुजारी, डमरू हाथ मे लिये, त्रिपुंड्र रमाये, जिस प्रकार 'कखन हरब दुख मोर हे भोलानाथ' गाते-गाते तन्मय होकर अपने-आपको भूल जाता है, उसी प्रकार नव-वधू को कोहवर मे ले जाती हुई कलकंठी कामिनियाँ 'सुन्दरि चललिहुँ पहु-घर ना, जाइतहि लागु परम डर ना' गाकर नव वर-वधू के हृदयों को एक अव्यक्त आनन्द-स्रोत मे डुबो देती हैं। जिस प्रकार नवयुवक 'ससन-परस खसु अम्बर रे देखलि धनि देह' पढ़ता हुआ एक मधुर कल्पना से रोमांचित हो जाता है उसी प्रकार एक वृद्ध 'तातल सैकत बारिबुन्द सम सुत मित रमनि समाज, तोहे बिसारि मन तोहि समर्पिनु अब मझु हब कोन काज, माधव, हम परिनाम निरासा' गाता हुआ अपने नयनो से शत-शत अश्रुबिन्दु गिराने लगता है।

विद्वद्वर ग्रियर्सन का यह कहना कितना सत्य है—

'Even when the Sun of Hindu-religion is set. when belief and faith in Krishna, and in that medicine of 'disease of existence' the hymns of Krishna's love is extinct, still the love borne for songs of Vidyapati in which he tells of krishna & Radha will never diminished."

"हिन्दू-धर्म के सूर्य का अस्त भले हो हो जाय—वह समय भी आ जाय जब राधा और कृष्ण मे मनुष्यों का विश्वास और श्रद्धा न रहे;

और कृष्ण के प्रेम की स्तुतियों के लिये, जो इहलोक में हमारे अस्तित्व के रोग की दवा है, अनुराग जाता रहे, तो भी विद्यापति के गान के लिये—जिसमें राधा और कृष्ण का उल्लेख है—लोगों का प्रेम कभी कम न होगा।"

डाक्टर ग्रियर्सन के कथन का प्रमाण बंगाल में जाकर देखिये। सहस्र-सहस्र हिन्दू आज तक विद्यापति के राधाकृष्ण-विषयक पदों का कीर्त्तन करते हुए अपने-आपको भूल जाते हैं।

एक जगह पुनः आप लिखते हैं—"The glowing stanzas of Vidyapati are read by the devout Hindu with a little of the baser part of the human sensuousness as the songs of the Solmon the Christian priests."

"जिस प्रकार खीष्ट पादरी सालमन के गान गाते हैं, उसी प्रकार भक्त हिन्दू विद्यापति के अनूठे पदों को पढ़ते हैं।"

इनकी उपमाएँ अनूठी और अछूती हैं। इनकी उत्प्रेक्षाएँ कल्पना के उत्कृष्ट विकास के उदाहरण हैं। रूपक का इन्होंने रूप खड़ा कर दिया है। स्वभावोक्ति से इनकी सारी रचनाएँ ओत-प्रोत हैं। श्रुत्यनुप्रास इनके पदों का स्वाभाविक आभूषण है। प्रधान काव्यगुण—प्रसाद और माधुर्य—इनके पद-पद से टपकते हैं।

प्रकृति-वर्णन में तो इन्होंने कमाल किया है—इनका वसंत और पावस का वर्णन पढ़कर मन्त्र-मुग्ध हो जाना पड़ता है। इनके वसंत और पावस में मिथिला की खास छाप है। वसंत में मिथिला की शस्य-श्यामला भूमि अलंकृत और दर्शनीय हो जाती है। पावस में, हिमालय निकट होने के कारण, यहाँ बिजलियाँ जोर से कड़कती हैं—प्रायः कुलिशपात होता है। इन्होंने इसका बड़ा ही अपूर्व वर्णन किया है।

इनका मिलन और विरह का वर्णन भी देखने योग्य है। हिन्दी-कवियों के विरह-वर्णन में, 'घनआनन्द' आदि दो-चार को छोड़कर, हृदय-वेदना का सूक्ष्म विश्लेषण प्रायः नहीं देखा जाता। विद्यापति का विरह-वर्णन प्रेमिका के हृदय की तस्वीर है—उसमें वेदना है, व्याकुलता है, प्रियतमा के प्रियतम के प्रति तल्लीनता है, कोरी हाय-हाय वहाँ नहीं है!

विद्यापति की पदावली

[टिप्पणी-सहित]

वन्दना

[१]

नन्दक नन्दन कदम्बक तरु-तर
धिरे धिरे मुरलि बजाव ॥१॥
समय सँकेत-निकेतन बइसल
बेरि बेरि बोलि पठाव ॥२॥
सामरि, तोरा लागि
अनुखन विकल मुरारि ॥३॥
जमुनाक तिर उपवन उदवेगल
फिरि फिरि ततहि निहारि ॥४॥
गोरस बेचए अबइत जाइत
जनि जनि पुछ बनमारि ॥५॥

१—नन्दक नन्दन = नन्द के बेटे, श्रीकृष्ण। तर = तले, नीचे। २—सँकेत-निकेतन = मिलने का निर्दिष्ट स्थान। बइसल = बैठे हुए। बेरि बेरि = बार-बार। (संकेत-स्थान में बैठकर मिलन का समय आया जान) बार बार बुला रहे है (वंशी मे पुकार रहे है)—"नामसमेतम् कृत-संकेतम् वादयते मृदुवेणुम्"—गीतगोविन्द। ३—सामरि = श्यामा, सुन्दरी;—शीते सुखोष्णसर्वांगी ग्रीष्मे च सुखशीतला। तप्तकाञ्चनवर्णाभा सा स्त्री श्यामेतिकथ्यते॥" तोरालागि = तुम्हारे वास्ते। अनुखन—प्रतिक्षण।

४—५ तिर = तट। उदवेगल = उद्विग्न हुआ, व्याकुल। ततहि = उसी तरफ। जनि जनि = प्रत्येक स्त्री से (पुल्लिंग जन, स्त्री० जनि) यमुना के किनारे उपवन मे (भ्रमण करते हुए) व्याकुल होकर पुनः-पुनः उसी

तोँहे मतिमान, सुमति, मधुसूदन
बचन सुनह किछु मोरा।
भनइ विद्यापति सुन बरजौवति
बन्दह नन्द-किसोरा ॥७॥

[२]

राधा की वन्दना

देख देख राधा रूप अपार।
अपुरुब के बिहि आनि मिलाओल
खिति-तल लावनि-सार ॥२॥
अंगहि अंग अनँग मुरछायत
हेरए पड़ए अथीर।
मनमथ कोटि-मथन करु जे जन
से हेरि महि-मधि गीर ॥४॥

ओर (तुम्हारे आगमन-पथ की ओर) देखते हैं, और दूध-दही बेचने को आने-जानेवाली प्रत्येक रमणी से वनमाली श्रीकृष्ण (तुम्हारे विषय में) पूछते हैं। ६—मतिमान=अनुरक्त। हे सुमति! मेरी कुछ बातें सुनो, मधुसूदन तुमपर अनुरक्त हैं। ७—भनइ=कहते हैं। जौवति=युवती। बन्दह—वंदना करो।

"ते सुकृती रस-सिद्ध कवि, वंदनीय जग माहि!
जिनके सुजस-सरीर कहँ, जरा मरन-भय नाहि॥"

२—अपुरुब=अपूर्व। बिहि=विधि, ब्रह्मा। आनि मिलाओल=ला मिलाया, रच दिखाया। खिति=क्षिति, पृथ्वी। लावनि—लावण्य। ३—अनँग=कामदेव। हेरए=देखकर। अथीर=अस्थिर, चंचल। ४—मनमथ=कामदेव। मधि=में। जो करोड़ों कामदेवों का (अपने सौंदर्य

कत कत लखिमी चरन-तल नेओछए
रंगिनि हेरि बिभोरि ॥५॥
करु अभिलाख मनहि पदपंकज
अहोनिसि कोर अगोरि ॥६॥

[३]

देवी-वंदना

जय जय भैरवि असुर-भयाउनि
पसुपति-भामिनि माया ॥१॥
सहज सुमति बर दिअओ गोसाउनि
अनुगति गति तुअ पाया ॥२॥
बासर-रैनि सबासन सोभित
चरन, चन्द्रमनि चूड़ा ॥३॥
कतओक दैत्य मारि मुँह मेलल,
कतओ उगिल कैल कूड़ा ॥४॥

से) मथन करते हैं, (वह श्रीकृष्ण भी) जिसे देखकर (मूर्च्छित हो) पृथ्वी पर गिर पड़ते हैं। ५—लखिमी = लक्ष्मी। नेओछए = न्योछावर करते हैं। रंगिनि = सुन्दरी। बिभोरि = बेसुध होकर। ६—अहोनिसि = अहर्निश, दिन-रात। कोर = गोद। अगोरि (मैथिली) = यत्न-पूर्वक रखना। मन में अभिलाषा होती है कि इस पद-कमल को रात-दिन गोदी में 'अगोरकर' रक्खें।

२—दिअओ = दो। गोसाउनि = गोस्वामिनी, भगवती। पाया = पैर। ३—बासर = दिन। रैनि = रात। सबासन = शवासन = मुर्दे पर आसन। चन्द्रमनि = चन्द्रकान्तमणि। चूड़ा = सिर। ४—कतओक =

सामर बरन, नयन अनुरंजित,
जलद-जोग फुल कोका।
कट कट बिकट ओठ-पुट पाँड़रि
लिधुर-फेन उठ फोका ॥६॥
घन घन घनए घुघुर कत बाजय,
हन हन कर तुअ काता।
बिद्यापति कवि तुअ पद सेवक,
पुत्र बिसरु जनि माता ॥८॥

———

कितना हो। मेलल = रक्खा। कूड़ा कैल = चूर-चूर कर दिया। अनुरंजित = रँगा हुआ, लाल। जलद-जोग फूल कोका = बादल में कमल फूले हों। पाँड़रि = एक लाल फूल। फोका = बुद्बुद। ७—काता = कत्ता, कटार।

वयः-सन्धि

[४]

सैसव जौबन दुहु मिलि गेल।
स्रवन क पथ दुहु लोचन लेल ॥२॥
वचन क चातुरि लहु-लहु हास।
धरनिये चाँद कएल परगास ॥४॥
मुकुर लई अब करई सिंगार।
सखि पूछइ कइसे सुरत-बिहार ॥६॥
निरजन उरज हेरइ कत बेरि।
हसइ से अपन पयोधर हेरि ॥८॥
पहिल बदरि-सम पुन नवरंग।
दिन-दिन अनँग अगोरल अंग ॥१०॥
○ माधव पेखल अपुरुब बाला।
सैसव जौवन दुहु एक भेला ॥११॥
विद्यापति कह तुहु अगेआनि।
दुहु एक जोग इह के कह सयानि ॥१४॥

१—सैसव = शिशुता, बचपन। जौवन = जवानी। २—दोनो आँखों ने कानों की राह पकड़ी = कटाक्ष करना प्रारम्भ किया। ३—लहु = लघु, मंद। हास = हँसी। ४—परगास = प्रकाश। ५—मुकुर = आईना। ६—सुरत-बिहार = काम-क्रीड़ा। ७—निरजन = एकान्त में। उरज = पयोधर = स्तन। हेरइ = देखती है। "स्मितं किंचिद्वक्त्रं सरलतरलो दृष्टिविभवः। परिस्पन्दो वाचामपि नवविलासोक्तिसरसः। गतीनामारम्भः। किसलयितलीलापरिकरः। स्पृशन्त्यास्तारुण्यं किमिह न हि रम्यं मृगदृशः॥" ९—बदरि = बैर का फल। नवरंग = नारंगी, नीबू

[५]

सैसव जौवन दरसन भेल।
दुहु दल-बले दन्द परि गेल ॥२॥
कबहु बाँधय कच कबहु बिथारि।
कबहु झाँपय अँग कबहु उघारि ॥४॥
अति थिर नयन अथिर किछु भेल।
उरज - उदय - थल लालिम देल ॥६॥
चंचल चरन, चित चंचल भान।
जागल मनसिज मुदित नयान ॥८॥
बिद्यापति कह सुनु बर कान।
धैरज धरह मिलायब आन ॥१०॥

कुच, पहले बैर के समान छोटे थे, पुनः नारंगी-से हुए। १०—अनँग = कामदेव। अगोरल=पहरा दिया। ११—पेखल = देखा। अपुरुब=अपूर्व। १२—भेला = भया, हुआ। १४—के कह = कौन कहता है ?

२—दन्द = द्वन्द्व = युद्ध। परि गेल = पड़ गया, शुरू हो गया, ठन गया। दोनो (शैशव और यौवन) के सैन्यबल में द्वन्द्व युद्ध छिड़ गया। ३—कच = केश। बिथारि = खोल देना। ४—अँग = देह, (यहाँ छाती)। ५—अथिर = चंचल। ६—उरज = कुच। उदयथल—उगने का स्थान। देल = दिया। कुचो के उत्पन्न होने के स्थान में लालिमा छा गई। ७—भान = मालूम होना। पैर चंचल थे ही, अब चित्त भी चंचल मालूम होता है। ८—मुदित = बंद। नयान=आँखें। कामदेव जाग तो गया, पर उसकी आँखें बन्द ही हैं, नहीं खुलतीं। ९—कान = कान्ह, कृष्ण। १०—आन = लाकर।

[६]

सैसव जौवन दरशन भेल ।
दुहु पथ हेरइत मनसिज गेल ॥२॥
मदन क भाव पहिल परचार ।
भिन जन देल भिन्न अधिकार ॥४॥
कटि क गौरव पाओल नितम्ब ।
एक क खीन अओक अवलम्ब ॥६॥
प्रगट हास अब गोपत भेल ।
उरज प्रगट अब तन्हिक लेल ॥८॥
चरन चपल गति लोचन पाव ।
लोचन क धैरज पदतल जाव ॥१०॥
नव कविसेखर कि कहइत पार ।
भिन भिन राज भिन्न वेवहार ॥१२॥

२—मनसिज=काम। दोनों को राह में देखते हुए कामदेव ने (बाला के शरीर में) गमन किया। ३—पहिल परचार=प्रथम प्रचारित हुआ। ५—कटि क=कमर का। गौरव=गुरुता। नितम्ब—चूतड़। ६—खीन=क्षीण, पतला। अओक=अन्य का=दूसरे का। ७, ८—गोपत=गुप्त। तन्हिक=उसका। प्रकट हँसी अब गुप्त हुई और उसकी प्रकटता अब कुचों ने ले ली। १०—धैरज=धीरता। 'काव्यप्रकाश' में कहा है—श्रोणीवन्धस्त्यजति तनुतां सेवते मध्यभागः। पद्भ्यां मुक्तास्तरलगतयः संश्रितालोचनाभ्याम्॥ वक्षःप्राप्तं कुचसचिवतामद्वितीयन्तु वक्त्रम्। सद्गात्राणां गुणविनिमयः कल्पितो यौवनेन। ११—नव कविसेखर=विद्यापति का उपनाम।

[७]

किछु किछु उतपति अंकुर भेल ।
चरन-चपल-गति लोचन लेल ॥२॥

अब सब खन रह आँचर हात ।
लाजे सखिगन न पुछए बात ॥४॥

कि कहब माधव बयस क संधि ।
हेरइत मनसिज मन रहु बंधि ॥६॥

तइओ काम हृदय अनुपाम ।
रोपल घट ऊचल कए ठाम ॥८॥

सुनइत रस-कथा थापए चीत ।
जइसे कुरंगिनी सुनए सँगीत ॥१०॥

सैसव जौवन उपजल बाद ।
केओ न मानए जय अवसाद ॥१२॥

बिद्यापति कौतुक बलिहारि ।
सैसव से तनु छोड़नहि पारि ॥१४॥

१—अंकुर = कुचों के अंकुरे। ३—खन = क्षण। हात = हाथ। ५-६, माधव! वयःसन्धि (की बातें) क्या कहूँ—देखते ही कामदेव का मन भी बँध गया। ७-८ तथापि (बन्दी होने पर भी) काम ने उसके अनुपम हृदय पर घट स्थापित कर उस स्थान को ऊँचा कर दिया। ९—थापए = स्थापित करती है। १०—कुरंगिनी = हरिणी। ११—उपजल बाद = होड़ मची। १२—केओ = कोई। अवसाद = पराजय। १४—शैशव को उसका शरीर छोड़ना ही पड़ेगा।

[८]

पहिल बदरि कुच पुन नवरंग।
दिन दिन बाढ़ए पिड़ए अनंग॥२॥
से पुन भए गेल बीजकपोर।
अब कुच बाढ़ल सिरिफल जोर॥४॥
माधव पेखल रमनि संधान।
घाटहि भेटल करत सिनान॥६॥
तनसुक सुबसन हिरदय लागि।
जे पुरुख देखब तेकर भागि॥८॥
उर हिल्लोलित चाँचर केस।
चामर झाँपल कनक महेस॥१०॥
भनइ बिद्यापति सुनह मुरारि।
सुपुरुख बिलसए से बरनारि॥१२॥

१—बदरि=बैर (फल)। नवरंग=नारंगी। २—पिड़ए=पीड़ा देता है। ३—बीजकपोर=बीजपूर, बड़ा (टाभ) नीबू; जैसे बीज क्रमशः बढ़ते-बढ़ते पोर (वृक्ष की मुटाई और गाँठ) बनता है उसी तरह कुच भी बढ़ और मोटे हो चले। ४—सिरिफल=श्रीफल, बेल। १-४, एक संस्कृत श्लोक है—उद्भेदं प्रतिपद्य पक्वबदरीभावं समेता क्रमात्। पुन्नागाकृतिमाप्य पूगपदवीमारुह्य बिल्वश्रियम्॥ लब्ध्वा तालफलोपमां च ललितामासाद्य भूयोधुना। चंचत् कांचनकुम्भजृम्भनमिमावस्याः स्तनौ बिभ्रतः॥ ५—पेखल=देखा। सिनान=स्नान। तनसुक=एक प्रकार का महीन कपड़ा। हिल्लोलित=झूलता हुआ। चाँचर=चंचल। ९-१०—हृदय पर झाँझरी से बने हुए बाल डोल रहे हैं, मानो सोने के महादेव को चँवर से ढक दिया हो। १२—बिलसए=विलास करें।

[९]

खने खन नयन कोन असुराई।
खने खन बसन धूलि तनु भरई ॥२॥
खने खन दसन-छटा छुट हास।
खने खन अधर आगे गहु बास ॥४॥
चउँकि चलए खने खन चलु मन्द।
मनमथ-पाठ पहिल अनुबन्ध ॥६॥
हिरदय-मुकुल हेरि हेरि थोर।
खने आँचर दए खने होए भोर ॥८॥
बाला सैसव तारुन भेट।
लखए न पारिअ जेठ कनेठ ॥१०॥
बिद्यापति कह सुन बर कान।
तरुनिम सैसब चिन्हइ न जान ॥१२॥

१—खने खन=क्षण-क्षण। क्षण-क्षण में आँखें कोण का अनुसरण करती हैं—कटाक्ष करती है। २—क्षण-क्षण में अस्तव्यस्त वस्त्र (चंचल धूलि में गिरकर) शरीर को धूलि से भरते हैं। ३—दसन=दाँत। हास=हँसी। ४—अधर=होंठ। बास=वस्त्र। ६—अनुबन्ध=भूमिका। ७—हिरदय-मुकुल=हृदय की कली, कुच। ८—भोर=भूल जाना) ९-१०—तारुन=तरुणाई, जवानी। कनेठ=कनिष्ठ=छोटा। बाला के शरीर में बचपन और जवानी की भेंट हुई है—मुकाबला हुआ है। इन दोनो मे कौन बड़ा और कौन छोटा (कौन निर्बल और कौन सबल) है, यह जान नहीं पड़ता। ११—कान=कान्ह, कृष्ण। १२—तरुनिम=जवानी।

नखशिख

[१०]

पीन पयोधर दूबरि गता ।
मेरु उपजल कनक - लता ॥२॥
ए कान्हु ए कान्हु तोरि दोहाई ।
अति अपूरुब देखलि साई ॥४॥
मुख मनोहर अधर रंगे ।
फूललि मधुरी कमल संगे ॥६॥
लोचन - जुगल भृंग अकारे ।
मधु क मातल उड़ए न पारे ॥८॥
भऊँह क कथा पूछह जनू ।
मदन जोड़ल काजर - धनू ॥१०॥
भन बिद्यापति दूतिबचने ।
एत सुनि कान्हु कएल गमने ॥१२॥

१-२, पीन=पुष्ट । पयोधर=कुच गता=गात, शरीर । मेरु=सुमेरु पर्वत । दुबली (तन्वी) के शरीर में पुष्ट कुच है मानों सोने की लता (देह) में सुमेरु पर्वत (कुच) उत्पन्न हुआ हो । ४—अपूरुब=, अपूर्व । साई=उसे । ५—६, अधर=ओष्ठ । रंगे=रंगे हुए, लाल । मधुरी=एक तरह का सुन्दर लाल फूल जो मिथिला में विशेष होता है । सुन्दर मुख पर रंगीन (लाल) अधर है, मानो कमल के फूल के साथ मधुरी फूली हो । ७-८—भृंग भौंरा । मधु क मातल=मधु पीकर मस्त बना । (उस मुख-कमल में) दोनों लोचन भौंरे के समान हैं जो (मुख-कमल का) मधु पीकर मस्त होने से उड़ नहीं सकते ।

[११]

कि आरे ! नव जौवन अभिरामा।
जत देखल तत कहए न पारिअ
छओ अनुपम एक ठामा ॥२॥
हरिन इन्दु अरविन्द करिनि हेम
पिक बूझल अनुमानी।
नयन बदन परिमल गति तन रुचि
अओ अति सुललित वानी ॥४॥
कुच जुग परसि चिकुर फुजि पसरल
ता अरुझायल हारा।
जनि सुमेरु ऊपर मिलि ऊगल
चाँद बिहिनु सब तारा ॥६॥

१—२, अहा, कैसी सुन्दर नई जवानी है ! जैसा देखा, वैसा कह नहीं सकता, छः अनुपम (पदार्थ) एक ही स्थान पर है। ३—इन्दु = चन्द्र। अरविन्द = कमल। करिनि = हथिनी। हेम = सोना। पिक = कोयल। ४—परिमल = सुगन्धि। तनु रुचि = शरीर की कान्ति। हरिन, चन्द्र, कमल, हथिनी, सोना, कोयल—ये छः क्रमशः आँख, मुख, शरीर की सुगन्धि, मस्तानी चाल, शरीर की कान्ति और मीठी बोली के उपमान है। ५—६, चिकुर = केश। फुजि = खुलकर। बिहिनु = विहीन। दोनों कुचों से स्पर्श करते हुए केश खुलकर छिटके हुए है जिनसे (मुक्ता की) माला उरझी हुई है, मानों, सुमेरु पर्वत पर चन्द्रमा को छोड़कर (क्योंकि केश रूपी अंधकार भी है !) सब तारे मिलकर उगे हो। ७—लोल = चचल। कपोल = गाल। अधर = ओष्ठ।

लोल कपोल ललित मनि-कुंडल
अधर विम्ब अध जाई।
भौंह भ्रमर, नासापुट सुन्दर
से देखि कीर लजाई ॥८॥
भनइ विद्यापति से वर नागरि
आन न पावए कोई।
कंसदलन नारायन सुन्दर
तसु रंगिनी पए होई ॥१०॥

बिम्ब = विम्बफल (लाल होता है)। अध = अधः, नीचे। अधरबिम्ब अध जाई = ओष्ठ की लालिमा देख बिम्बफल नीचे जाता है = हीन मालूम होता है। ८ भ्रमर = भौंरा। भौंहभ्रमर = भौंहें, भ्रमर के समान, काली हैं। नासापुट = नाक। कीर = सुग्गा। १०—कंसदलन नारायण = (१) मिथिला के राजा (२) श्रीकृष्ण। तसु = उसका। रंगिनी = स्त्री।

**"इश्क को दिल में दे जगह 'अकबर'
इल्म से शायरी नहीं आती।"**

(१२)

माधव की कहब सुन्दरि रूपे।
कतेक जतन बिहि आनि समारल
देखल नयन सरूपे ॥२॥
पल्लव-राज चरन-जुग सोभित
गति गजराज क भाने।
कनक-कदलि पर सिंह समारल
तापर मेरु समाने ॥४॥
मेरु ऊपर दुइ कमल फुलायल
नाल विना रुचि पाई।
मनि-मय हार धार बहु सुरसरि
तओ नहि कमल सुखाई ॥६॥

(नोट—"अद्भुत एक अनूपम बाग" शीर्षक सूरदास का एक प्रसिद्ध पद्य है। साहित्य-संसार में उसकी बड़ी प्रशंसा होती है। सूरदास से डेढ़ सौ वर्ष पहले रची गई यह कविता पढ़कर, पाठक, विद्यापति की प्रतिभा का अन्दाजा लगावें!)

१—की=क्या। २—बिहि=विधि, ब्रह्मा। सरूपे=सत्य प्रत्यक्ष। ३—पल्लवराज=कमल। ४—कनक-कदली—सोने के केले का थम्भ (जाँघ की उपमा)। सिंह=(कटि की उपमा)। मेरु=पहाड़ (उभड़ी हुई छाती)। ५—दुइ कमल=दो कमल (दोनों कुच)। नाल=डंटी। रुचि=शोभा। ६—(कुचों पर) मणि माला रूपी गंगा की धारा बह रही है, इसीसे—उसके स्रोत में—(विना नाल के भी दोनों कुच रूपी) कमल नहीं मुरझाते।

अधर बिम्ब सन, दशन दाड़िम-बिजु
रवि ससि उगथिक पासे।
राहु दूर बस नियरो न आबथि
तै नहि करथि गरासे ॥८॥
सारँग नयन बयन पुनि सारँग
सारँग तसु समधाने ।
सारँग ऊपर उगल दस सारँग
केलि करथि मधुपाने ॥१०॥
भनइ बिद्यापति सुन बर जौवति
एहन जगत नहि आने ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन—
लखिमा देइ पति भाने ॥१२॥

७—अधर=ओष्ठ। विम्वफल। सन=ऐसा। दसन=दाँत। दाड़िम=अनार। बिजु=बीज, दाना। रबि ससि उगथिक पासे=सूर्य-चन्द्र एक साथ उगे हैं (चन्द्रमा ऐसे मुख में बाल सूर्य-सा लाल सिंदूर है)। ८—राहु=(केश की उपमा)। नियरो=निकट। ९—सारँग=(१) हरिण। सारँग=(२) कोयल। सारँग=(३) कामदेव। सारँग तसु समधाने=उसके संधान में-कटाक्ष मे—काम बसता है। १०—सारँग=(४) कमल (ललाट)। दस=(यहाँ बहुवाची)। सारँग=(५) भौंरा (केशों के लटके हुए गुच्छे)। मधुपाने=रस पीकर। (मुखरूपी) कमल पर भौंरे (रूपी लटें लटकी) है, जो मधुपान कर केलि कर रहे है। एहन=ऐसा। आने=दूसरा।

(१३)

जुगल सैल-सिम हिमकर देखल
एक कमल दुइ जोति रे ॥१॥
फुललि मधुरि फुल सिंदुर लोटाएल
पाँति बइसलि गज-मोति रे।
आज देखल जति के पतिआएत
अपुरुब बिहि निरमान रे ॥३॥
बिपरित कनक-कदलि-तर सोभित
थल-पंकज के रूप रे।
तथहु मनोहर बाजन बाजए
जनि जागे मनसिज भूप रे ॥५॥
भनइ बिद्यापति पूरब पुन तह
ऐसनि भजए रसमन्त रे।
बुझल सकल रस नृप सिवसिंघ
लखिमा देइ कर कन्त रे ॥७॥

१—जुगल सैल=दो पहाड़ (कुचों की उपमा)। सिम=सीमा में, निकट। हिमकर=चन्द्रमा (मुख की उपमा)। कमल=(मुख की उपमा)। दुइ जोति=दो ज्योतियाँ (दो आँखें)। २—मधुरि फूल=एक तरह का लाल फूल। फुली हुई मधुरी (फूल) सिंदूर पर लोटती है और, दाँत क्या हैं, गजमुक्ताओं की पंक्ति बैठी है। ४—विपरित=उलटा। कनक कदलि=(जांघ की उपमा)। थल पकज=स्थल कमल (पैरों की उपमा)। ५—तथहु=वहाँ भी। मनसिज=कामदेव। ६—पुन=पुण्य। ऐसनि=ऐसा। रसमंत=रसवती, सुरसिका।

[१४]

चाँद-सार लए मुख घटना करु
लोचन चकित चकोरे
अमिय धोय आँचर धनि पोछलि
दह दिसि भेल उँजोरे ॥२॥
कामिनि कोने गढ़ली।
रूप सरुप मोयँ कहइत असँभव
लोचन लागि रहली ॥४॥
गुरु नितम्ब भरे चलए न पारए
माझ-खानि खीनि निमाई।
भागि जाइत मनसिज धरि राखलि
त्रिवलि लता अरुझाई ॥६॥
भनइ विद्यापति अद्‌भुत कौतुक
ई सब वचन सरूपे।
रूपनारायन ई रस जानथि
सिवसिंघ मिथिला भूपे ॥८॥

१—२, चन्द्रमा का सार भाग लेकर (विधाता ने राधा के) मुख की रचना की, (जिसे देखते ही चकोर की आँखें चकित हुईं । बाला ने (अपने मुख-चन्द्र को) अंचल से पोछकर जो अमृत धो बहाया, वही (चाँदनी के रूप में) दशों दिशाओं में प्रकाशित हुआ। ३—कोने=किसने। गढ़ली=गढ़ा, रचा। ५—भरे=भार से। माझ खानि=मध्य भाग में (कटि) । खीनि=क्षीण, पतली। निमाई=निर्माण की। ६—त्रिबली-लता=त्रिबली=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ।

[१५]

सुधामुखि के बिहि निरमिल बाला।
अपरुब रूप मनोभवमंगल
त्रिभुवन विजयी माला ॥२॥
सुन्दर वदन चारु अरु लोचन
काजर-रंजित भेला।
कनक-कमल माझ काल-भुजंगिनि
स्रीयुत खंजन खेला ॥४॥
नाभि-विवर सयँ लोम-लतावलि
भुजगि निसास-पियासा
नासा खगपति-चंचु भरम-भय
कुच-गिरि-संधि निवासा ॥६॥

१—के विहि = किस विधाता ने। निरमिल = निर्माण किया। २—मनोभव-मंगल = कामदेव का शुभ स्वरूप—"मनोभवमंगलकलस-सहोदरे"-गीतगोविन्द। त्रिभुवन विजयी माला= तीनो भुवनों को पराजित करनेवाली माला के समान। ३—४ बदन = मुखड़ा। भेला हुआ। माझ—मध्य में। स्रीयुत = सुन्दर। सुन्दर मुख में सुन्दर काजल लगी आँखें है, मानों सोने के कमल (मुख) मे काल-सर्पिणी (अंजन) क्रीड़ा कर रही हो! अथवा मानो काल भुजगिनी रूपी आँखे कनक कमलरूपी मुख के बीच सुन्दर (स्रीयुत) खंजन की तरह खेल रही हो। ५—६, विवर = विल, छेद। सयँ = से। लोम = लतावली = बाल-रूपी लताएँ, पंक्तिबद्ध बाल। भुजगि = सर्पिणी। निसास=साँस। खगपति = गरुड़ चंचु=चोंच। नाभी रूपी विल से पंक्तिबद्ध बाल-रूपी सर्पिणी (नायिका

तिन बान मदन तेजल तिन भुवने
अवधि रहल दओ बाने।
विधि बड़ दारुन बधए रसिकजन
सोंपल तोहर नयाने ॥८॥
भनइ विद्यापति सुन बर जौबति
इह रस केओ पए जाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥१०॥

की सुगंधित) साँसों की प्यास में (आगे बढ़ी), किन्तु नुकीली नाक को गरुड़ की चोंच समझकर डर से कुच रूपी (दो) पर्वतों के बीच के (संकीर्ण) मिलन-स्थान में आ बसी। ७, ८ तिन=तीन। तेजल=छोड़ा। अवधि=अवशिष्ट, बाकी। रहल=रहा। दओ=दो। बधए=बधने को, हत्या करने को तोहार=तुम्हारे। नयान=आँखें। कामदेव को पंचवाण कहते हैं, सो मदन ने अपने (पाँच बाणों में से) तीन बाण तो तीनों लोकों में छोड़े, शेष उसके दो बाण रह गये। ब्रह्मा बड़ा ही निष्ठुर है, (उन बचे हुए दो बाणों को) रसिकों की हत्या करने के लिये तुम्हारे नयनों को सौंप दिया। ९—=इह रस केओ पय जाने=यह रस कोई कोई ही जानता है। १०—देइ—देवी। रमाने=रमण, पति।

"हृदय-सिंधु मति सीप समाना। स्वाती सारद कहहिं सुजाना।
जो बरसै बर बारि-बिचारू। होंहि 'कबित'-चिंतामनि चारू॥"

[१६]

जाइत देखलि पथ नागरि सजनि गे
आगरि सुबुधि सेयानि ।
कनक-लता सनि सुन्दरि सजनि गे
बिहि निरमाओल आनि ॥२॥
हस्ति-गमन जकाँ चलइत सजनि गे
देखइत राज-कुमारि ।
जिनकर एहनि सोहागिनि सजनि गे
पाओल पदारथ चारि ॥४॥
नील बसन तन घेरल सजनी गे
सिर लेल चिकुर सँभारि ।
तापर भमरा पिबए रस सजनि गे
बइसल पाँखि पसारि ॥६॥
केहरि सम कटि-गुन अछि सजनि गे
लोचन अम्बुज धारि ।
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
गुन पाओल अवधारि ॥८॥

१—नागरि=नगर-निवासिनी; सुचतुरा। आगरि=अग्रगण्या। २—सनि=समान निरमओल आनि=लाकर बनाया। ३—जकाँ=ऐसा। ४—जिनकर=जिसको। एहनि=ऐसी। ५—चिकुर केश। ६—तापर=उसपर। भमरा=भौंरा। ७—केहरि=सिंह। अछि=(अस्ति) है। अम्बुज—कमल। धारि=धारण करो, समझो। ८—अवधारि=निश्चय।

[१७]

चिकुर - निकर तम - सम
पुनु आनन पुनिम ससी।
नयन - पंकज के पतिआओत
एक ठाम रहु बसी ॥२॥
आज मोयँ देखलि बारा।
लुबुध मानस, चालक मयन
कर की परकारा ॥४॥
सहज सुन्दर गोर कलेबर
पीन पयोधर सिरी।
कनक-लता अति बिपरित
फरल जुगल - गिरी ॥६॥
भन बिद्यापति बिहि क घटन
के न अद्भुत जान।
राय सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥८॥

१—२—चिकुर निकर=केश समूह। पुनिम=पूर्णिमा का। ठाम=स्थान। केश-समूह अंधकार के समान है, फिर, मुख पूर्णिमा के चन्द्र के समान और नयन कमल के (समान)—कौन विश्वास करेगा (कि ये सब परस्पर-विरोधी पदार्थ) एक स्थान पर बसते हैं। मोयँ= मैंने। बारा=बाला। ४—लुबुध=लुब्ध, अनुरक्त। चालक= संचालन करनेवाला। मयन—काम। की परकारा=किस प्रकार। ५—सिरी= श्री, शोभायुक्त। ६—फरल=फला। ७—घटन=सृष्टि।

[१८]

सजनी, अपरुप पेखल रामा।
कनक - लता अवलम्बन ऊअल
हरिन - हीन हिमधामा ॥२॥
नयन-नलिनि दुओ अंजन रंजइ
भौंह बिभंग - बिलासा।
चकित चकोर - जोर बिधि बाँधल
केवल काजर पासा ॥४॥
गिरिवर-गरुअ पयोधर-परसित
गिम गज-मोति क हारा।
काम कम्बु भरि कनक - सम्भु परि
ढारत सुरसरि - धारा ॥६॥
पएसि पयाग जाग सत जागइ
सोइ पावए बहुभागी।
बिद्यापति कह गोकुल-नायक
गोपी जन अनुरागी ॥८॥

१—अपरुप=अपूर्व। पेखल=देखा। रामा=सुन्दरी। २—कनक-लता=सोने की लता (देह)। ऊअल=उदित हुआ। हरिन-हीन हिमधामा =निष्कलंक चन्द्र (मुख)। ३—नलिनी=कमलिनी। दुओं=दो। भौंह बिभग-विलासा=कुटिल कटीली भौंहों—भवों—में भाव-भंगी। ४—जोर=जोड़ा। बाँधल=बाँधा है। पास=पास में, रस्सी में। ५—६ गिरिवर गरुअ=पहाड़ के ऐसे भारी। पयोधर=कुच। गिम=ग्रीवा, कण्ठ। गजमोतिक=गजमुक्ता की। कम्बु=शख। कनक=सोना। पहाड़

[१६]

कनक-लता अरबिन्दा ।
दमना माँझ उगल जनि चन्दा ॥२॥
केहु कहै सैबल छपला ।
केहु बोले नहि नहि मेघे झपला ॥४॥
केहु कहे भमए भमरा ।
केहु बोले नहि नहि चरए चकोरा ॥६॥
संसय परल सब देखी ।
केहु बोलए ताहि जुगुति बिसेखी ॥८॥
भनइ बिद्यापति गावे ।
बड़ पुन गुनमति पुनमत पावे ॥१०॥

ऐसे उत्तुंग कुचों को स्पर्श करती हुई गले में गजमुक्ताओं की माला है, मानों, कामदेव शंख (कण्ठ) में भरकर, सोने के महादेव (कुचों) पर गंगा की धारा (माला) ढार रहा हो ७—पएसि=पैठकर, जाकर। पयाग—प्रयाग में। जाग=यज्ञ। सत=शत, सौ। (जो) प्रयाग में जाकर सैकड़ों यज्ञ करे, वही बहुभाग्यशाली-(इस रमणी को) प्राप्त करे।

१—२, दमना=द्रोणलता। माँझ=में। उगल=उदित हुआ। जनि=मानो। सोने की लता पर कमल खिला है या द्रोण-लता पर चन्द्रमा उगा है। ३—केहु=कोई। कहै=कहता है। सैबल=शैवल, सेंवार। छपला=छिपा हुआ। ४—५, झपला=ढँपा हुआ। ५—भमए भमरा =भौंरा भ्रमण कर रहा है। ६—चरए=चर रहा है, दाना चुग रहा है। ७—परल=पड़ गया। १०—पुन=पुण्य से। पुनमत=पुण्यवंत।

[२०]

कबरी-भय चामरि गिरि-कन्दर
मुख-भय चाँद अकासे ।
हरिन नयन-भय, सर-भय कोकिल
गति-भय गज बनबासे ॥२॥

सुन्दरि, किए मोहि सँभासि न जासि ।
तुअ डर इह सब दूरहि पलायल
तुहुँ पुन काहि डरासि ॥४॥

कुच-भय कमल-कोरक जल मुदि रहु
घट परवेस हुतासे ।
दाड़िम सिरिफल गगन बास करु
सम्भु गरल करु ग्रासे ॥६॥

भुज भय पंक मृनाल नुकाएल
कर-भय किसलय काँपे ।
कबि-सेखर भन कत कत ऐसन
कहब मदन परतापे ॥७॥

१—कबरी=केश। चामरि=चँवरवाली गौ। २—सर=स्वर, बोली। ३—किए=क्यों। सँभासि=बातचीत करके। जासि=जाती है। सुन्दरी, क्यों मुझसे बातें नहीं कर जाती? ४—पलायल=भाग गया। ५—कमल-कोरक=कमल की कली। घट परबेस हुतासे=घड़ा अग्नि में प्रवेश करता है। ६—दाड़िम=अनार। सिरिफल=बेल। गगन=आकाश। सम्भु=शिव। गरल=विष। ६—मृनाल=कमल-नाल। नकायल=छिप गया। कर=हाथ। किसलय=नवीन पत्ता।

[२१]

रामा, अधिक चंगिम भेल।
कतने जतन कत अदबुद, बिहि बिहि तोहि देल ॥२॥
सुन्दर बदन सिंदुर-बिन्दु सामर चिकुर भार।
जनि रबि-ससि संगहि ऊगल पाछ्र कय अंधकार ॥४॥
चंचल लोचन बाँक निहारए अंजन शोभा पाय।
जनि इन्दीबर पवन-पेलल अलि भरे उलटाय ॥६॥
उनत उरोज चिर झपाबए पुनु पुनु दरसाए।
जइयो जतने गोअए चाहए हिमगिरि न नुकाय ॥८॥
एहनि सुन्दरि गुनक आगरि पुनें पुनमत पाव।
ई रस बिन्दक रूपनरायन कबि बिद्यापति गाव ॥१०॥

१—रामा = सुन्दरि। चंगिम = शोभामयी। भेल = हुई। २—कतने = कितना। कत = कितना अदबुद = अद्भुत। बिहि = विधि, ब्रह्मा। बिहि=विधि, प्रकार ढंग। अथवा बिहि-बिहि=चुन-चुनकर। देल= दिया। ३—बदन = मुख। सामर = काला। चिकुर = केश। ४—ऊगल = उदित हुआ। पाछ्र = पीछे। कए करके। ५—बाँक = तिरछा। निहारए = देखती हैं। ६—इन्दीबर = कमल। पवन-पेलल=पवन द्वारा आन्दोलित अलि भरे = भौंरे के भार से। उलटय = उलट रहा हो। ७ उनत = उन्नत उभड़े हुऐ। उरोज=कुच। चिर=चीर से, सारी से। ८—जइओ=यद्यपि। जतने=यत्न से। गोअए=गोपन करना छिपाना। हिम=बर्फ, साड़ी। गिरि=पहाड़ (कुच)। अथवा हिमगिरि=हिमालय पहाड़ (कुच)। नुकाय = छपना। ९—एहनि=ऐसी। पुनें = पुण्य से ही। पुनमत=पुण्यवन्त। १०—बिन्दक = ज्ञाता।

सहज प्रसन मुख दरस हृदय सुख
लोचक तरल तरङ्ग।
अकास पताल वस सेओ कइसे भेल अस
चाँद सरोरुह सँग ॥२॥
बिहि निरमलि रामा दोसर लछि समा
भल तुलाएल निरमान ॥३॥
कुच-मंडल सिरि हेरि कनक-गिरि
लाजे दिगन्तर गेल।
केओ अइसन कह सेओ न जुगुति सह
अचल सचल कइसे भेल ॥४॥
माझ-खीनि तनु भरे भाँगि जाय जनु
बिधि अनुसए भेल साजि।
नील पटोर आनि अति से सुदृढ़ जानि
जतन सिरिजु रोमराजि ॥७॥
भन कवि विद्यापति काम-रमनि रति
कौतुक वुझ रसमन्त।
सिर सिवसिंघ राउ पुरुख सुकृत पाउ
लखिमा देइ रानि कन्त ॥६॥

३—लछि=लक्ष्मी। तुलाएल=तुल्य हुआ, समान हुआ। ४—सिरि=श्री, शोभा ६—माझ खीनि=बीच में पतली (कटि)। भरे=बोझ से। भाँगि जाय=टूटि जाय। अनुसए=आशंका। ७—पटोर=रेशम। सिरिजु=बनाया। रोमराजि=केश-समूह।

सद्यः-स्नाता

[२३]

कामिनि करए सनाने ।
हेरितहि हृदय हनए पँचबाने ॥२॥
चिकुर गरए जलधारा ।
जनि मुख-ससि डर रोअए अँधारा ॥४॥
कुच-जुग चारु चकेवा ।
निअ कुल मिलिअ आनि कोन देवा ॥६॥
ते संका भुज-पासे—।
बाँधि धएल उड़ि जाएत अकासे ॥८॥
तितल बसन तनु लागू ।
मुनिहु क मानस मनमथ जागू ॥१०॥
भनइ बिद्यापति गावे ।
गुनमति धनि पुनमत जन पावे ॥१२॥

२—हेरितहि = देखते ही । हनए=मारती है । पँचबाने = कामदेव । के बाण । ३, ४—चिकुर = केश । गरए — गिरती है । जनि = मानों रोअए = रोता है । अँधारा = अंधकार । केशों से जल की धारा गिर रही है, मानों (मुख-रूपी) चन्द्रमा के डर से (केश रूपी) अंधकार रो रहा हो । ६—निअ — निज । मिलिअ= मिलने को । आनि कोन देवा=कोन आनि देवा = किसने ला दिया है । ७, ८—कहीं ये कुच-रूपी चकेवा आकाश में न उड़ जायें, इसी शंका से अपनी भुजाओं से उन्हें बांध रक्खा है । ९—तितल = भींगा हुआ । १०—मानस = मन । मनमथ=कामदेव । धनि = रमणी । १२—जन = पुरुष ।

[२४]

आजु मझु सुभ दिन भेला।
कामिनि पेखल सनान क बेला॥२॥
चिकुर गरए जलधारा।
मेह बरिस जनु मोतिम हारा॥४॥
बदन पोंछल परचूरे।
माजि धएल जनि कनक-मुकूरे॥६॥
तेंइ उदसल कुच-जोरा।
पलटि बैसाओल कनक-कटोरा॥८॥
निबि-बंध करल उदेस।
विद्यापति कह मनोरथ सेस॥१०॥

१—मझु=मेरा। भेला=हुआ। २—पेखल=देखा। बेला=समय। ३, ४—चिकुर=केश। गरए=गिरती है।—(काले) केशों से (उज्वल) जल की धारा गिर रही है, मानों बादल (केश) मोती की माला (जलधारा) की वर्षा कर रहे हो। ५—बदन=मुख। पोंछल=पोंछा, परिमार्जित किया। परचूरे=प्रचुर रूप से, अच्छी तरह। ६—माजि धएल=माँजकर रख दिया, साफ कर रख दिया। कनक मुकूरे=सोने का दर्पण। ७—तेंइ=उससे—(मुख धोते समय)। उदसल=उकस गया, प्रकट हुआ। जोरा=जोड़ा, युगल। ८—पलटि=उलटकर। बैसाओल=बिठला दिया, रख दिया। ९—निबि=कोंचा, फुफनी। करल=किया। उदेस=शिथिल। १०—सेस=समाप्त।

[२५]

जाइत पेखल नहाएलि गोरी।
कति सयँ रूप धनि आनलि चोरी ॥२॥
केस निंगारइत बह जल-धारा।
चमर गरए जनि मोतिम-हारा ॥४॥
अलकहि तीतल तैं अति सोभा।
अलिकुल कमल बेढ़ल मधुलोभा ॥६॥
नीर निरंजन लोचन राता।
सिंदुर मँडित जनि पंकज-पाता ॥८॥
सजल चीर रह पयोधर-सीमा।
कनक-बेल जनि पड़ि गेल हीमा ॥१०॥
ओ नुकि करतहि चाहि किए देहा।
अबहि छोड़ब मोहि तेजब नेहा ॥१२॥
ऐसन रस नहि पाओब आरा।
इथे लागि रोइ गरए जलधारा ॥१४॥
बिद्यापति कह सुनह मुरारि।
बसन लागल भाव रूप निहारि ॥१६॥

२—कति सयँ = कहाँ से। आनलि चोरी = चुरा लाई। ३—निंगारइत = गारते समय; पानी निचोड़ते समय। ४—चमर = चँवर से। ५—अलक = केश। तीतल = भींगा हुआ। तैं = इससे। ६—अलिकुल = भ्रमर-गण। बेढ़ल = घेर लिया। ७—पानी में स्नान करने के कारण आँखें अंजन-हीन और लाल हो गई हैं। ८—पंकज-पाता = कमल का पत्ता। ९—पयोधर-सीमा = कुचों पर। १०—कनक-बेल = सोने का

[१६]

नहाइ उठल तीर राइ कमलमुखि
समुख हेरल वर कान।
गुरुजन संग लाज धनि नत-मुखि
कइसन हेरब बयान ॥२॥

सखि हे, अपरुब चातुरि गोरि।
सब जन तेजि कए अगुसरि संचरि
आड़ वदन तँहि फेरि ॥४॥

तँहि पुन मोति-हार तोरि फेंकल
कहइत हार टुटि गेल।
सब जन एक-एक चुनि संचरु
स्याम-दरस धनि लेल ॥६॥

नयन-चकोर कान्हु-मुख ससि-वर
कएल अमिय-रस-पान।
दुहु दुहु दरसन रसहु पसारब
कवि विद्यापति भान ॥८॥

बिल्व फल । पड़ि गेल=पड़ गया । हीमा=बर्फ । ११-ओ=वह (वस्त्र) । नुकि करतहि चाहि=छिपाना चाहता है । किए=क्यों । १३-ऐसन=ऐसा । आरा=अन्यत्र । १४—इथे=इसलिये ।

१-राइ=राधा । हेरल=देखा । कान=कृष्ण । २-नत=नीचे । बयान=बदन, मुख । ४-अगुसरि=अग्रसर, आगे । संचरि=जाकर । आड़=ओट । ५-तोरि फेंकल=तोड़कर फेंक दिया । टुटि गेल=टूट गया । ६-लेल=लिया । ७—कएल=किया । अमिय=अमृत ।

प्रेम-प्रसंग

श्रीकृष्ण का प्रेम

[२७]

पथ-गति नयन मिलल राधा कान।
दुहु मन मनसिज पूरल संधान ॥२॥
दुहु मुख हेरइत दुहु भेल भोर।
समय न बूझय अचतुर चोर ॥४॥
बिदगधि संगिनी सब रस जान।
कुटिल नयन कएलहि समधान ॥६॥
चलल राज-पथ दुहु उरझाई।
कह कवि-सेखर दुहु चतुराई ॥८॥

१—२, पथगति = राह में जाते हुए। कान = कृष्ण। मनसिज = कामदेव। पूरल = पूरा किया। संधान = वाण का संचालन। पथ में जाते हुए राधा कृष्ण दोनों आँखों से मिले—एक दूसरे को देखा। दोनों के मन में कामदेव ने अपने वाण का संचालन किया—दोनों के हृदय में काम का संचार हुआ। ३—हेरइत = देखते ही। भेल भोर = बेसुध हुए। ४—समय न बूझए = अवसर नहीं समझता। ५—बिदगधि—विदग्ध, सुरसिका। ६—कुटिल नयन = टेढ़ी चितवन से—इशारे से। कएलह्हि = कर दिया। समधान = सावधान। ७—उरझाई = उलझकर।

"बरन धरत चिंता करत, चहत न नेकहु सोर।
ढूँढ़त हैं सुबरन सदा, कवि व्यभिचारी चोर॥"

[२८]

सजनी, भल कए पेखल न भेल।
मेघ-माल सयँ तड़ित-लता जनि
हिरदय सेल दई गेल ॥२॥
आध आँचर खसि आध वदन हसि
आधहि नयन तरङ्ग।
आध उरज हेरि आध आँचर भरि
तबधरि दगधे अनङ्ग ॥४॥
एके तनु गोरा कनक कटोरा
अतनु कांचला उपाम।
हार हारल मन जनि बूझि ऐसन
फाँस पसारल काम ॥६॥
दसन मुकुता पाँति अधर मिलायल
मृदु मृदु कहतहि भासा।
बिद्यापति कह अतए से दुख रह
हेरि हेरि न पुरल आसा ॥८॥

१—भल कए = अच्छी तरह। पेखल न भेल = देख न सका। २—सयँ = संग मे, साथ में। तड़ित-लता = बिजली। जनि = मानो। ३—नयन-तरङ्ग = कटाक्ष। ४—उरज = कुच। तबधरि = तब से। दगधे = जलाता है। अनंग = काम। ५—कनक कटोरा = सोने का कटोरा (कुच)। अतनु = कामदेव। एक तो शरीर गौरवर्ण है और उस पर से (कुच) मानो मदन (अतनु) सोने के कटोरे में कोंच (बलपूर्व्वक भर) दिया गया है, ऐसा प्रतीत होता है। ६—जनि बूझि ऐसन = ऐसा समझ पड़ता है मानो……। ७—दसन = दाँत। अधर = ओठ। भासा = भाषा, वचन। ८ अतए = इतना ही तो।

[२६]

ससन - परस खसु अम्बर रे
देखल धनि देह ।
नव जलधर - तर संचर रे
जनि बिजुरी - रेह ॥२॥
आज देखल धनि जाइत रे
मोहि उपजल रङ्ग ।
कनक - लता जनि संचर रे
महि निर अवलम्ब ॥४॥
ता पुन अपरुब देखल रे
कुच -जुग अरबिन्द ।
बिगसित नहि किछु कारन रे
सोभा मुख - चन्द ॥६॥
बिद्यापति कवि गाओल रे
रस बूझ रसमन्त ।
देवसिंह नृप नागर रे
हासिनि देइ कन्त ।८॥

१—ससन = श्वसन, पवन । परस = स्पर्श से । खसु = गिर पड़ा । अम्बर = कपड़ा, अंचल । देख = देखा । धनि = बाला । २—जलधर = बादल । तर = तले, नीचे । जनि = मानो । रेह = रेखा । ३—जाइत = जाती हुई । रंग = प्रेम । ४—संचर = जा रही है । निर अवलम्ब = विना अवलम्ब का । ५—ता = उसपर भी । पुन = पुनः । जुग = दो । अरविन्द = कमल । ६—विगसित = खिला हुआ । सोभा = सम्मुख ।

[३०]

अलखित हम हेरि विहुसलि थोर।
जनि रयनी भेल चाँद इँजोर ॥२॥
कुटिल कटाख लाट पड़ि गेल।
मधुकर - डम्बर अम्बर लेल ॥४॥
काहिक सुन्दरि के ताहि जान।
आकुल कए गेल हमर परान ॥६॥
लीला कमल भमर धरु वारि।
चमकि चललि गोरि चकित निहारि ॥८॥
तें भेल वेकत पयोधर सोभ।
कनक-कमल हेरि काहि न लोभ ॥१०॥
आध नुकाएल आध उदास।
कुच कुम्भे कहि गेल अप्पन आस ॥१२॥
से अब अमिल निधि दए गेल सँदेस।
किछु नहि रखलन्हि रस परिसेस ॥१४॥
भनइ विद्यापति दुहु मन जागु।
बिसम कुसुम सर काहु जनु लागु ॥१६॥

१—अलखित = अलक्ष्य रूप से—बिना दूसरे के देखे। हेरि = देख कर। विहुसलि = मुस्कुराई। २—रयनी = रजनी, रात। इँजोर = उँजाला। ५—काहिक = किसकी। के = कौन। ७—धरु वारि = निवारण कर—कौतुक से भ्रमर को कमल से निवारण कर। ९-ते = इससे। वेकत = व्यक्त, प्रकट। ११, १२—नुकाएल = छिपा हुआ। उदास = प्रकट। कुम्भ = घड़ा। आधा छिपा और आधा प्रकट कुच-कुम्भ (दिखाकर) वह अपनी आशा कह गई (कि मिलूँगी) १३—अमिल =

(३१)

अम्बर बिघटु अकामिक कामिनि
कर कुच झाँपु सुछन्दा ।
कनक - सम्भु सम अनुपम सुन्दर
दुइ पंकज दस चन्दा ॥२॥
कत रूप कहब बुझाई ।
मन मोर चंचल लोचन बिकल भेल
ओ नहि अनइत जाई ॥४॥
आड़ बदन कए मधुर हास दए
सुन्दरि रहु सिर नाई ।
अओंधा कमल कान्ति नहि पूरए
हेरइत जुग बहि जाई ॥६॥
भनइ विद्यापति सुनु बर जौबति
पुहवी नव पँचबाने ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ।८॥

अप्राप्य । निधि = खजाना । १४—परिसेस = परिशेष, बाकी । १६—
बिसम = विषम, कठोर । फुसुम- सर = कामदेव का शर ।

५—अम्बर = बस्त्र, अंचल । बिघटु = हट गया । अकामिक =
अकस्मात् । कर = हाथ । झाँपु = ढक लिया । सुछन्द = सुन्दर ।
अकस्मात् अंचला हट गया, (तब) कामिनी ने अपने दोनो हाथ
से सुन्दर कुचो को ढक लिया । २—कनक-सम्भु = सोने के महादेव

(३२)

गेलि कामिनि गजहु गामिनि
बिहसि पलटि निहारि।
इन्द्रजालक कुसुम - सायक
कुहकि भेल वर नारि ॥२॥
जोरि भुज जुग मोरि वेढ़ल
ततहि बदन सुछन्द ।
दाम - चम्पक काम पूजल
जइसे सारद चन्द ॥४॥

(कुच) । दुइ पंकज = दो कमल (दोनो हाथ) । दस चंदा = दस चन्द्रमा (दस अंगुलियाँ) । ३—कत = कितना । ४—अनइत = अन्यत्र, दूसरी जगह । ५—आड़ = ओट । ६—औंधा—उलटकर रक्खा हुआ । जुग बहि गई = युग बीत जाते हैं । ७—पुहवी = पृथ्वी । नव = नवीन । पंचबाने = कामदेव । ८—रमाने = रमण, पति ।

१—गेलि = गई । गजहु गामिनि = हाथी के समान मस्तानी चाल वाली । विहसि = मुस्कुराकर । निहारि = देखकर । २—इन्द्रजालक = ऐन्द्रजालिक, जादू भरा । कुसुमसायक = कामदेव । कुहकि = मायाविनी नटी भेलि = हुई । मानो वह श्रेष्ठ नारी काम ऐन्द्रजालिक की मायाविनी नटी हो । अर्थात् उसकी हँसी ने अद्‌भुत चमत्कार का अनुभव कराया । ३—४, मोरि = मोड़कर । वेढ़ल = घेरा । ततहि = वहीं । बदन = मुख । दाम = रस्सी (माला) चम्पक = चम्पे की । जइसे = जैसे । सुछन्द = सुन्दर । दोनों हाथों को जड़कर उनसे अपना सुन्दर मुख लपेट लिया, मानो कामदेव ने चम्पे की माला (हाथ) से शरद-चन्द्र (मुख) की पूजा की हो।

उरहि अंचल झाँपि चंचल
आध पयोधर हेरु।
पौन पराभव सरद-घन जनि
बेकत कएल सुमेरु ॥ ६ ॥

पुनहि दरसन जीव जुड़ाएब
टुटत बिरह क ओर।
चरन जावक हृदय पावक
दहइ सब अँग मोर ॥ ८ ॥

भन बिद्यापति सुनह जदुपति
चित्त थिर नहि होय।
से जे रमनि परम गुनमनि
पुनु कए मिलब तोय ॥१०॥

४, ५—उरहि = वक्षःस्थल को। झाँपि = ढँककर। पयोधर=स्तन, कुच। हेरु = देखती है। पौन = पवन, वायु। पराभव = हारकर। जनि=मानों। वेकत = व्यक्त, प्रकट। कएल = किया। सुमेरु = पर्वत वक्षःस्थल को चंचल अंचल से ढाँककर आधे कुच को देखती है, मानों पवन से हारकर शरद के मेघ (अंचल) ने सुमेरु को (कुच) प्रकट किया हो—जिस प्रकार पवन के झोंके से मेघ हट जाने पर सुमेरु देख पड़ता है उसी प्रकार ...। ७—जीव प्राण। जुड़ाएब = शीतल होंगे। ओर=सीमा। ८—जावक = महावर। पावक = आग। दहइ = जलता है। उसके पैर के महावर (मेरे) हृदय में आग (लगा रहा) है जिससे मेरे सब अंग जल रहे हैं। १०—से = वह। पुनु = पुण्य, पुनः। मिलब = मिलेगी। तोय = तुम्हे।

(३३)

सहजहि आनन सुन्दर रे
भौंह सुरेखलि आँखि।
पंकज मधु-पिबि मधुकर रे
उड़ए पसारल पाँखि ॥ २ ॥
ततहि धाओल दुहु लोचन रे
जतहि गेलि बर नारि।
आसा-लुबुधल न तेजए रे
कृपन क पाछु भिखारि ॥४॥
इंगित नयन तरंगित रे
बाम भँओह भेल भंग।
तखन जानल तेसर रे
गुपुत मनोभव रंग ॥ ६ ॥

१–आनन = मुख। भौंह सुरेखलि = भौंहो द्वारा अच्छी तरह चित्रित की गई, सुन्दर बनाई गई। २-पंकज = कमल (मुख)। मधु = पुष्परस। पिबि = पीकर। मधुकर = भौंरा (नयन उड़ए = उड़ने को। पसारल = पसार दिया, फैला दिया। पाँखि = पंख, पर, (भौंह)। ततहि = वहाँ। धाओल = दौड़ गया। जतहि जहाँ। गेलि=गई। ४—आसा-लुबुधल = आशा में लुब्ध हुआ, चूर हुआ। आशा में चूर भिखारी जिस प्रकार कृपण (सूम) का पीछा भी नहीं छोड़ता। ५–इंगित = इशारेसे युक्त। तरंगित = चंचल। बाम = बाईं। भँओह भेल भग = भौंह भंग हुई—भवें टेढ़ी कीं। ६—तखन = उस समय। तेसर = तीसरा व्यक्ति। मनोभव = काम-

चन्दन चरचु पयोधर रे
गिम गज मुकुताहार।
भसम भरल जनि संकर रे
सिर सुरसरि जलधार ॥८॥
बाम चरन अगुसारल रे
दाहिन तेजइत लाज।
तखन मदन सर पूरल रे
गवि गंजए गजराज ॥१०॥
आज जाइत पथ देखलि रे
रूप रहल मन लागि।
तेहि खन सयँ गुन गौरव रे
धैरज गेल भागि ॥११॥

देव। ७—चरचु = चर्चित किया। पयोधर = कुच, स्तन। गिम = गले में। भरल = भरा हुआ। सुरसरि = गंगा। कुच चन्दन से चर्चित है, जिनपर गजमुक्ताओ की माला (झूल रही) है, मानों भस्म का लेप किये हुए महादेव के सिर पर गंगा की धारा (बह रही) हो। ९—अगुसारल = अग्रसर किया, आगे किया। दाहिन तेजइत लाज = दाहिने पैर को आगे रखते लज्जा होती है। १०—तखन = उस समय। मदन = कामदेव। गति = चाल। गंजए = पराजित करती है। गजराज = हाथी। ११—रूप रहल मन लागि = रूप मन से लग रहा है—सौंदर्य हृदय में बैठ गया। खन = क्षण। सयँ = से। गेल = गये।

रूप लागि मन धाओल रे
कुच-कंचन-गिरि साँधि।
ते अपराधें मनोभव रे
ततहि धएल जनि बाँधि ॥१४॥
विद्यापति कवि गाओल रे
रस बुझ रसमंत।
रूपनरायन नागर रे
लखिमा देइ कंत ॥१६॥

१३, १४—लागि = लिये। कुच-कंचन-गिरि साँधि = स्तन रूपी दो सोने के पहाड़ो के संधि-स्थान में-बीच में। तें = उस। बांधि धइल = बाँध रक्खा। रूप के लिये—सौंदर्य के लोभ में मेरा मन उसके कुच रूपी दो पहाड़ो के बीच में जा दौड़ा, मानों, इसी अपराध में कामदेव ने उसे वहीं बाँध रक्खा। १५—बुझ = बूझो, समझो। रसमन्त = रसिक।

हे सज्जनाः शृणुत मद्वचनाः समस्ताः,
स्वर्गे सुधाऽस्ति सुलभा न तु सा भवद्भिः।
कुर्मस्तदत्र भवतामुपकारकारी
काव्यामृतं पिबत तत् परमादरेण ॥"

(३४)

पथ-गति पेखल मो राधा।
तखनुक भाव परान पए पीड़लि
रहल कुमुद-निधि साधा ॥२॥
ननुआ नयन नलिनि जनि अनुपम
वंक निहारइ थोरा।
जनि सृंखल में खगबर बाँधल
दीठि नुकायल मोरा ॥४॥
आध वदन ससि विहसि देखाओलि
आध पीहलि निअ बाहू।
किछु एक भाग बलाहक झाँपल
किछुक गरासल राहू ॥६॥

१,२-पथ गति = पथ में जाती हुई। पेखल = देखा। मो = मैं। तखनुक = उस समय का। परान पए = प्राण भी। पीड़लि = पीड़ित किया। रहल = रह गया। कुमुद-निधि = कुमुद का सर्वस्व (चन्द्र)। साधा = साध, इच्छा। मैंने राह में जाती हुई राधा को देखा। उस समय की उसकी भावभंगी ने प्राणों तक को पीड़ित किया, उस चन्द्र (मुख) को देखने की साध बनी ही रह गई। ३—ननुआ = सुन्दर। नलिनि = कमलिनी। जनि = समान। बंक = टेढ़ा। निहारइ = देखती है। ४—सृंखल = शृंखला, जंजीर। खगबर = पक्षिश्रेष्ठ। खजर। बाँधल = बाँधा। नुकाएल = छिप गया। ५—वदन-ससि = मुखरूपी चन्द्रमा। देखाओलि = दिखलाई। पीलहि = ढाँप लिया। निअ = निज। बाहू = बाँह से, भुजा से। ६—झाँपल = ढाँप दिया। बलाहक = मेघ।

कर-जुग पिहित पयोधर-अंचल
चंचल देखि चित भेला।
हेम कमल जनि अरुनित चंचल
मिहिर-तरे निन्द गेला ॥८॥
भनइ विद्यापति सुनहु मधुरपति
इह रस केह पए वाधा।
हास दरस रस सबहु बुझाएल
नाल कमल दुइ आधा ॥१०॥

गरासल = ग्रस लिया। ७,८—पिहित—आवृत, ढँगा। पयोधर = स्तन। अंचल = विभाग, तट। हेम = सोना। जनि = मानो। अरुनित = लालिमा-युक्त। तरे = नीचे। मिहिर = सूर्य। निन्दा गेला = सो रहा। दोनों हाथों से ढके हुए स्तनों के तट-भाग देखकर चित्त चंचल हो गया, मानों, सोने के कमल (दोनों कुच) लालिमा-युक्त चंचल सूर्य (लाल हथेली) के नीचे सो रहे हों। ९, १०—सुनह = सुनो। मधुरपति = मथुरा-पति। इह = यह। केह = कौन। हास = हँसी। दरस = दर्शन। बुझएल = बूझ पड़ा, मालूम हुआ। नाल = (कमल की) डंटी। हे मथुरापति श्रीकृष्ण, (तुम्हारे) इस रस में कौन वाधा देगा ? तुम्हारी पारस्परिक हँसी और दर्शन के रस से ही सबको मालूम हो गया कि मृणाल और कमल (तुम्हारे हाथ रूपी मृणाल और उसके कुच रूपी कमल) ये दोनों (एक ही पदार्थ) के दो भाग हैं—अर्थात् उसके कुच के लिये तुम्हारे हाथ ही उपयुक्त है।

(३५)

जहाँ-जहाँ पग-जुग धरई। तहिं-तहि सरोरुह झरई ॥२॥
जहाँ-जहाँ झलकत अंग। तहि-तहि बिजुरि-तरंग ॥४॥
कि हेरल अपरुब गोरि। पइठल हिय मधि मोरि ॥६॥
जहाँ-जहाँ नयन बिकास। तहि-तहि कमल-प्रकास ॥८॥
जहाँ लहु हास सँचार। तहिं-तहिं अमिय-बिकार ॥१०॥
जहाँ जहाँ कुटिल कटाख। ततहिं मदन-सर लाख ॥१२॥
हेरइत से धनि थोर। अब तिन भुवन अगोर। १ ॥
पुनु किए दरसन पाब। अब मोहे इत दुख जाव ॥१६॥
बिद्यापति कह जानि। तुअ गुन देहब आनि ॥१८॥

१, २—पग जुग = दोनों पैर। धरई = धरती है, रखती है। तहिं = वहां। सरोरुह = कमल। झरई = झड़ते हैं। ३, ४—झलकत = झलकते हैं, चमकते हैं। अंग = शरीर। बिजुरि-तरंग = बिजली का चंचल प्रकाश। ५, ६—कि = क्या। हेरल = देखा। गोरि = गौरवदना, सुन्दरी। पइठल = पैठ गई, घुस गई। हिय-मधि = हृदय में। मोरि = मेरे। ९, १०—लहु = लघु, मंद। हास = हँसी। अमिय = अमृत। ११, १२—कुटील = टेढ़े। कटाख = कटाक्ष। ततहिं = वहाँ ही। मदन = कामदेव। सर = वाण। १३, १४—हेरइत = देखते ही। से = वह। धनि = बाला, सुन्दरी। अगोर = प्रतीक्षा करना। १५, १६—पुनु = पुन: किए = क्या। १६—अब मैं इसी दुःख से मरूँगा। १८— तुअ = तुम्हारे। देहब आनि = ला दूँगा।

राधा का प्रेम

(३६)

ए सखि पेखलि एक अपरूप।
सुनइत मानबि सपन-सरूप ॥ २ ॥
    कमल जुगल पर चाँद क माला।
    तापर उपजल तरुन तमाला ॥ ४ ॥
तापर बेढ़लि बिजुरी - लता।
कालिन्दी तट धीरे चलि जाता ॥ ६ ॥
    साखा - सिखर सुधाकर पाँति।
    ताहि नव पल्लव अरुनक भाँति ॥ ८ ॥
विमल विम्बफल जुगल विकास।
तापर कीर थीर करु वास ॥१०॥
    तापर चंचल खंजन - जोर।
    तापर साँपिनि झाँपल मोर ॥१२॥
ए सखि रंगिनि कहल निसान।
हेरइत पुनि मोर हरल गिआन ॥१४॥
    कवि विद्यापति एह रस भान।
    सुपुरुख मरम तुहू भल जान ॥१६॥

३—कमल जुगल= दो पैर। चाँद क माला=नखो की पंक्ति। ४—तरुन तमाल=काला शरीर। ५—बेढ़लि=लिपटी हुई। बिजुरी-लता=पीताम्बर। ७—साखा-सिखर=तमालरूपी शरीर की शाखा-रूपी बाहुओं के अग्र भाग में। सुधाकर-पाँति=नखों की पंक्ति। ८—नव पल्लव=हथेली। अरुनक भाँति लाल।

[३७]

की लागि कौतुक देखलों सखि
निमिष लोचन आध
मोर मन-मृग मरम वेधल
विपम वान वेआध ॥२॥
गोरस विरस वासी विसेखल
छिकहु छाड़ल गेह।
मुरली धुनि सुनि मो मन मोहल
त्रिकहु भेल सन्देह ॥४॥
तीर तरंगिनि कदम्ब - कानन
निकट जमुना घाट ।
उलटि हेरइत उलटि परलओं
चरन चीरल काँट ॥६॥
सुकृति सुफल सुनह सुन्दरि
विद्यापति भन सार।
कंसदलन गुपाल सुन्दर
मिलल नन्दकुमार ॥८॥

९—बिम्बफल = ओष्ठ। १०—कीर = नाक। ११—खंजन जोर = आँखों का जोड़ा। साँपिनि = केश। मोर— मोर मुकुट।

१—की लागि = किसलिये। निमिष = एक क्षण। लोचन आध = आधी आँखों से, कनखियो से। २—मरम = हृदय का भीतरी भाग। बिषम = कठोर। ३—बिरस = रसहीन। बासी बिसेखल = विशेषतः बासी। छिकहु = छीकने पर भी। ५—तरंगिनि = नदी।

[३८]

अवनत आनन कए हम रहलिहुँ
बारल लोचन - चोर।
पिया मुख - रुचि पिवए धाओल
जनि से चाँद चकोर ॥२॥
ततहु सयँ हठ हटि मो मानल
धएल चरनन राखि।
मधुप मातल उड़ए न पारए
तइअओ पसारए पाँखि ॥४॥

१, २ अवनत = नीचे। आनन = मुख। बारल = निवारण किया। रोक रक्खा। मुख-रुचि = मुख की शोभा। पिवए = पीने के लिये। धाओल = दौड़ पड़ा। जनि = मानों। से = वह। मैंने अपने मुख को नीचे कर लिया और नयन-रूपी चोरों को (उनकी ओर जाने से) रोक दिया; किन्तु प्रीतम के मुख की शोभा का पान करने के लिये वे दौड़ पड़े, जिस प्रकार चाँद की ओर चकोर दौड़ते हैं। ३, ४ | ततहु = वहाँ। सयँ = से। हटि = हटाकर। मो = मैं। आनल = लाया। धएल राखि = धर रक्खा। मधुप = भौंरा। मातल = मत्त बना, पागल। उड़ए न पारए = नहीं उड़ सकता। तइअओ = तो भी। पसारए = पसारता है। वहाँ से—मुख की ओर से—मैं (आँखों को) हठ पूर्वक रोककर हटा लाई और अपने चरणों पर धर रक्खा—नीचे की ओर देखने लगी। (किन्तु जिस प्रकार) मधु पीकर मस्त बना भौंरा नहीं उड़

माधव बोलल मधुर बानी
से सुनि मुँदु मोयँ कान।
ताहि अवसर ठाम बाम भेल
धरि धनू पँचबान ॥६॥
तनु पसेब पसाहनि भासलि
पुलक तइसन जागु।
चूनि चूनि भए काँचुअ फाटलि
बाहु बलआ भाँगु ॥८॥
भन बिद्यापति कम्पित कर हो
बोलल बोल न जाय
राजा सिबसिंघ रूपनरायन
साम सुन्दर काय ॥१०॥

सकता तोभी पंख पसारता है उसी तरह मेरी आँखें बराबर उस ओर जाने लगीं) ९—मुँदु=मूँद लिया। ठाम=जगह। बाम भेल=विरुद्ध हुआ, बैरी हुआ। पंचबान=कामदेव। ६—उसी समय उसी जगह कामदेव धनुष धारण कर मेरा बैरी हुआ—मुझपर बाणों की बौछार करने लगा। ७—पसेब=पसीना। पसाहनि=प्रसाधनी, ललाट पर की सजावट, अंगराग। भासलि=दह गया, धो गया। पुलक=रोमांच। तइसन=उसी प्रकार। ८—चूनि चूनि भए=खंड-खंड होकर, चिथड़े-चिथड़े होकर। काँचुअ=कंचुकी, चोली। बलआ=चूड़ी। भाँगु—फूट गई। [प्रेमातिरेक से शरीर फूल उठा, जिस कारण चोली फट गई और चूड़ियाँ फूट गईं।] ९—कम्पित कर हो=हाथ काँप रहे हैं। बोलल बोल न जय=बात कही नहीं जाती।

[३९]

सामर सुन्दर ए बाट आएत
तें मोरि लागलि आँखि।
आरति आँचर साजि न भेले
सब सखीजन साखि ॥२॥
कहहि मो सखि कहहि मो
कत तकर अधिवास।
दूरहु दूगुन एड़ि मै आवओं
पुनू दरसन आस ॥:।
कि मोरा जीवन कि मोरा जौवन
कि मोरा चतुरपने।

१—ए बाट = इस रास्ते। तें = इसी कारण। २—आरति = आर्त्तावस्था से, व्याकुलता से। साखि = साक्षी, गवाह। व्याकुलता से—प्रेमावेश से—मैं आँचल को सँभाल भी न सकी-अपने कुचों को भली-भाँति ढक भी न सकी, इस बात को गवाह सभी सखियाँ हैं। ३, ४—मो = मुझसे। कत = कहाँ। तकर = उसका। अधिवास = निवास-स्थान। दूरहु दूगुन = दुगुनी दूरी। एड़ि = अतिक्रमण कर। आवओं = आती हूँ। पुनू = पुनः। कहो, ऐ मेरी सखी, कहो, उसका निवास-स्थान कहाँ है? दुगुनी दूरी। (होने पर भी उसे) अतिक्रम कर मैं पुनः दर्शन पाने की आशा में यहाँ आती हूँ। ५, ६—मुरुछलि = मूर्च्छित। अछओं = हूँ। मेरी जिन्दगी क्या, जवानी क्या और चतुराई क्या—वे सब मिथ्या हैं। काम के बाणों से मैं मूर्च्छित हूँ और

मदन-बान मुरुछलि अछओं
सहओं जीव अपने ॥६॥
आध पद धरइत मोए देखल
नागर-जन समाज
कठिन हिरदय भेदि न भेले
जाओ रसातल लाज ॥८॥
सुरपति-पाए लोचन मागओं
गरुड़ मागओं पाँखि।
नन्द क नन्दन हौं देखि आवओं
मन मनोरथ राखि ॥१०॥

(उसकी मार्मिक पीड़ा) अपने प्राणो में सह रही हूँ। ७.८—नागर जन = चतुर लोग। भेदि = छेदना, विदीर्ण होना। कृष्ण की ओर आधा पग रखते—प्रेमावेश मे उनकी ओर एक पैर बढ़ाते ही—मुझे समाज के चतुर लोगो ने देख लिया। पर, मेरा कठिन हृदय फट नहीं गया, लज्जा पाताल मे धँस गई। ९—सुरपति = इन्द्र। पाए = चरण में। पाँखि = पख। इन्द्र के चरणो मे मैं उनसे सहस्र लोचन माँगता हूँ, गरुड़ से पंख माँगता हूँ। १०—देखि अवओं = देख आऊँ।

Poetry is that, which lifts the veil from the hidden beauty of the world. —*Shelly.*

(४०)

कानु हेरब छल मन बड़ साध।
कानु हेरइत भेल अत परमाद ॥२॥

तबधरि अबुधि मुगुधि हम नारि।
कि कहि कि सुनि किछु बुझिए न पारि ॥४॥

साओन-घन सम झर दु नयान।
अविरत धस धस करए परान ॥६॥

की लागि सजनी दरसन भेल।
रभसे अपन जिउ पर हथ देल ॥८॥

ना जानू किए करु मोहन-चोर।
हेरइत प्रान हरि लेई गेल मोर ॥१०॥

अत सब आदर गेल दरसाइ।
जत बिसरिए तत बिसर न जाइ ॥१२॥

विद्यापति कह सुन वर नारि।
धैरज धरु चिंत मिलव मुरारि ॥१४॥

१—कानु = कृष्ण। हेरब = देखना। छल = था। साध = इच्छा। २—अत = इतना। परमाद = प्रमाद, आपत्ति। ३—तबधरि = तबसे। मुगुधि = मुग्धा। ४—कि = क्या। बुझिए न पारि = नहीं समझ सकती। ५—साओन घन = श्रावण का मेघ। नयान = नयन, आँख। ६—अविरत = हरदम। धस धस करए = धक-धक करता ८—रभसे = कौतुक में ही। पर हथ = दूसरे के हाथ में। ९—किय = क्या। ११—गेल दरसाइ = दिखला गया, बतला गया! १२—जत = जितना। बिसरिए = भूलिये। बिसर न जाइ = नहीं भूलता।

[४१]

कि कहब हे सखि इह दुख ओर।
बाँसि-निसास-गरल तनु भोर।४॥

हठ सयँ पइसए स्रवनक माझ
ताहि खन बिगलित तन मन लाज॥४॥

बिपुल पुलक परिपूरए देह।
नयन न हेरि हेरए जनु केह॥६॥

गुरु-जन समुखहि भाव तरंग।
जतनहि बसन झाँपि सब अंग॥८॥

लहु-लहु चरण चलिए गृह माझ।
आजु दइब बिहि राखल लाज॥१०॥

तनु मन बिबस खसए निबि-बंध।
कि कहब बिद्यापति रहु धन्द॥१२॥

१—कि=क्या। २—बाँसि निसास-गरल=वंशी के निःश्वास के विष से—बंशी की आवाज की मादकता से। तनु भोर=शरीर बेसुध है। ३—हठ सँय=हठपूर्वक। पइसए=पैठता है। स्रबनक=कानों के। माझ=मध्य, में। ४—ताहि खन=उसी समय। बिगलित=दूर हुई, जाती रही। ५—बिपुल=अधिक, असंख्य। पुलक=रोमांच। ६—आंखों से उस ओर—कृष्ण की ओर—नहीं देखती हूँ कि कहीं कोई ऐसा करते देख न ले। ७—गुरुजन—अपने से श्रेष्ठ व्यक्ति। भाव तरंग=भावना की लहर। ६—लहु-लहु=धीरे-धीरे। दइब बिहि=दैव ब्रह्मा। ११—खसए=गिर पड़ता है। १२—धन्द—फिक्र।

[४२]

कत न बेदन मोहि देसि मदना।
हर नहि बला मोहि जुवति जना ॥२॥
बिभुति-भूषन नहि चानन क रेनू।
बघछाल नहि मोरा नेतक बसनू ॥४॥
नहि मोरा जटाभार चिकुर क बेनी।
सुरसरि नहि मोरा कुसुम क स्रेनी ॥६॥
चाँद क बिन्दु मोरा नहि इन्दु छोटा।
ललाट पावक नहि सिन्दुर क फोटा ।८।
नहि मोरा कालकूट मृगमद चारु
फनपति नहि मोरा मुकुता-हारु ॥१०॥
भनइ बिद्यापति सुन देब कामा।
एक पए दूखन नाम मोरा बामा ॥१२॥

अरे कामदेव ! मुझे इतनी वेदना मत दो, मैं महादेव नहीं, वरन् युवती हूँ। (शरीर में लगे) ये विभूति के भूषण (लेप) नहीं, वरन् चन्दन के रेणु है, यह बाघछाला नहीं, वरन् मेरी चुनरी (नेतक बसनू) है (सिर पर) यह जटा का भार नहीं, वरन् केशो की गूंथी हुई वेणी है। गङ्गा नही, वरन् वेणी में गूंथे गये (उजले) फूलो की कतार ह। (कपाल पर) चन्दन की बेंदी अथवा माँगटीका है। द्वितीया का चन्द्रमा (इन्दु छोटा नहीं। ललाट में (तृतीय नेत्र की) अग्नि नहीं, सिंदूर का टीका है। यह विष नहीं, चिबुक पर सुन्दर (काला) मृगमद है। (गले में) अजगर नहीं, किन्तु मेरी मुक्ताओं की माला है। विद्यापति कहते है,

(४३)

मनमथ तोहे की कहब अनेक।
दिठि अपराध परान पए पीड़सि
ते तुअ कौन बिबेक। २॥
दाहिनि नयन पिसुन गन बारल
परिजन वामहि आध।
आध नयन-कोने जब हरि पेखल
तैं भेल अत परमाद।४॥
पुर-बाहिर पथ करत गतागत
के नहि हेरत कान।
तोहर कुसुम-सर कतहु न संचर
हमर हृदय पँचबान। ६॥

हे कामदेव, सुनो, मुझमें दोष है तो केवल एक यही, कि मेरा नाम 'बामा' (रमणी) है [जो महादेव के 'बामदेव' नाम से मिलता है]

१,२. मनमथ = कामदेव। दिठि = दृष्टि, नजर। पीड़सि = पीड़ा देते हो। ३,४–पिसुन = दुष्ट। बारल = मना किया। परिजन = घर के लोग परमाद = प्रमाद, झंझट। दहिने नेत्र को दुष्टों के कारण मना करना पड़ा—दहिने नेत्र से दुष्टों के डर से नहीं देखती—परिवार वालों के कारण बायें नेत्र के आधे को निवारण किया। रह गया बायें नेत्र का आधा भाग-सो आधे नेत्र से ही—बायें नेत्र के कटाक्ष से ही—जब कृष्ण को देखा तो इतना पागलपन मुझमें आ गया। ५-पथ = राह। करत गतागत = आते-जाते। कान = कृष्ण। ६-कुसुम सर = फूलों के वाण। पँचबान = कामदेव के पाँच शर।

(४४)

एक दिन हेरि हेरि हँसि हँसि जाय ।
अरु दिन नाम धए मुरलि बजाय ॥२॥

आजु अति नियरे करल परिहास ।
न जानिए गोकुल ककर बिलास ॥४॥

साजनि ओ नागर-सामराज ।
मूल बिनु परधन माँग बेआज ॥६॥

परिचय नहि देखि आनक काज ।
न करए संभ्रम न करए लाज ।८॥

अपन निहारि निहारि तनु मोर ।
देइ आलिंगन भए बिभोर ॥१०॥

खन खन बैदगधि कला अनुपाम ।
अधिक उदार देखिअ परिनाम ॥१२॥

विद्यापति कह आरति ओर ।
बुझिओ न बूझए इए रस भोर ॥१४॥

२—अरु=और, अन्य ।। ३-नियरे=निकट । परिहास=हँसी, मजाक । ककर=किसका । ५,६—नागर सामराज = चतुरों का सम्राट् । मूल=मूलधन । सखि, वह चतुरों का बादशाह है, देखो तो, दूसरे की सम्पत्ति पर बिना मूल-धन के सूद माँगता है (एक तो धन दूसरे का; उसमें भी मूल-धन गायब, फिर सूद कैसे !) ७—दूसरे का काम देखकर भी नहीं परिचय करता—नहीं समझता ८-संभ्रम=डर । ११—प्रति-क्षण अनुपम विदग्धतापूर्ण कला (दिखाता है) १४—यह रस में बेसुध (कृष्ण) समझकर भी नहीं समझता ।

दूती

कृष्ण की दूती

(४५)

धनि धनि रमनि जनम धनि तोर।
सब जन कान्हु कान्हु करि भूरए
से तुअ भाव बिभोर ॥ २ ॥
चातक चाहि तिआसल अम्बुद
चकोर चाहि रहु चन्दा।
तरु लतिका अवलम्बन करिए
मभु मन लागल धन्दा ॥ ॥
केस पसारि जबे तुहुँ राखलि
उर पर अम्बर आधा।

१—धनि = धन्य। रमनि = रमणी, स्त्री। तोर = तुम्हारा। २-जन = आदमी। कान्हु = कृष्ण। भूरए = जलते, व्याकुलहोते। से = वह। तुअ = तुम्हारे। बिभोर=बेसुध। ३,४—चातक=पपीहा। चाहि=देखना। तिआसल = तृषित,प्यसा। अम्बुद = बादल। तरु = वृक्ष। लतिका = लता। करिए = कर रहा है। मभू = मेरे। लागल = लगा धन्दा=सन्देह। (कैसी विचित्रता है!) तृषित मेघ आज पपीहे की ओर देख रहा है, चन्द्रमा चकोर को देखता है और वृक्ष लतिका का अवलम्बन कर रहा है; (इन विरोधी बातों को देख) मेरे मन में संशय हो रहा है। [कवि का तात्पर्य यह है कि जैसी व्याकुलता आज तुममें होनी चाहिये थी, वह श्रीकृष्ण में है।] ५ पसारि=पसारकर, खोलकर। राखलि=रक्खा।

से सब सुमिरि कान्हु भेल आकुल
कह धनि इथे कि समाधा ॥६॥
हँसइत कब तुहु दसन देखाएलि
करे कर जोरहि मोर।
अलखित दिठि कब हृदय पसारलि
पुनु हेरि सखि कर कोर ॥ ८ ॥
एतहु निदेस कहल तोहे सुन्दरि
जानि तोहे करह बिधान।
हृदय-पुतलि तुहु से सून कलेवर
कवि विद्यापति भान ॥१०॥

उर = छाती, वक्षःस्थल। अम्बर = वस्त्र, अंचल। ६—से = वह। भेल = हुआ। इथे = इसका। धनि = बाले। समाधा = निवारण। ७, ८—दसन = दाँत करे कर जोरहि मोर = हाथ से हाथ जोड़कर मुड़ती हुई। अलखिते = अलक्ष्य रूप से, बिना देखे। पुन = पुनः। हेर = देखकर। कर कोर = कोर कर = कोड़ में करना—रखना, आलिंगन करना। हाथ से हाथ जोड़ कर (अंगड़ाइयाँ लेती हुई) कब तुमने पीछे की ओर मुड़कर, हँसती हुई, मैंने दाँतों की छटा दिखाई, एवम् अलक्ष्य दृष्टि से कब उनके हृदय को प्रसारित कर, पुनः उनकी ओर देखकर, सखी का आलिंगन किया। ९—एतहु = इतना। निदेस = इसारा। कहल = (मैंने) कहा। तोहे = तुम्हे। जानि = जानकर। करह = करो। विधान = उपचार। १०—हृदय-पुतलि = हृदय की पुतली, प्राण। से = वह (कृष्ण)। सून = शून्य। कलेवर = शरीर। भान = कहता है।

[४६]

सुन सुन ए सखि कहए न होए।
राहि राहि कए तन मन खोए ॥ २ ॥

कहइत नाम पेम भए भोर।
पुलक कम्प तनु घरमहि नोर ॥ ४ ॥

गद्-गद् भाखि कहए बर-कान।
राहि दरस बिनु निकस परान। ६ ॥

जब नहि हेरब तकर से मुख।
तब जिउ-भार धरब कोन सुख ॥ ८ ॥

तुहु बिनु आन इथे नहि कोइ।
बिसरए चाह बिसरि नहि होइ ॥ १० ॥

भनइ बिद्यापति नाहि बिबाद।
पूरब तोहर सब मन साध ॥ १२ ॥

१—कहए न होय=कहा नही जाता। २—राहि=राधा। कए=करके कहकर। खोए=खोना, भुला देना। ३—पेम=प्रेम। भोर=बेसुध। ४- पुलक=रोमांच। घरमहि=पसीना भी। नोर=आँसू। शरीर रोमांच होकर काँपने लगता है, पसीना होता है और आँसू प्रवाहित होने लगते हैं। ५—गदगद=रुँधे हुए कंठ से। भाखि=कहना। कान=कृष्ण। ६—निकसे=निकलता है। ७—तकर=उसका। से=वह। ८—धरब=धरूँगा। ९—आन=दूसरा। इथे=यहाँ; तुम्हारे सिवा यहाँ दूसरा कोई नहीं—तुम्हें छोड़कर कृष्ण अन्य किसी को प्यार नहीं करते। १०—बिसरए=विस्मरण होना, भूल जाना। ११-बिबाद=कलह। १२-पूरब पूरी होगी। मन साध=मनःकामना।

[४७]

कंकट माझ कुसुम परगास।
भमर बिकल नहिं पावए पास ॥ २ ॥
भमरा भेल घुरए सबे ठाम।
तोहे बिनु मालति नहिं बिसराम ॥ ४ ॥
रसमति मालति पुन पुन देखि।
पिबए चाह मधु जीव उपेखि ॥ ६ ॥
ओ मधुजीवी तोँन्हे मधुरासि।
साँचि धरसि मधुमने न लजासि ॥ ८ ॥
अपनेहु मने गुनि बुझ अवगाहि।
तसु दूषन बध लागत काहि ॥ १० ॥
भनहि विद्यापति तौं पय जीव।
अधर सुधारस जौं पय पीव ॥ १२ ॥

१—परगास = प्रकाश। २—पाएब = पाता हूँ, जा सकता हूँ ३ भमरा (माधव) ४—मालति (राधा) ६—जीव उपेखि—जीवन की उपेक्षा करके अर्थात् मरेंगे या जीवेंगे इसका कुछ भी ख्याल न करके। ८—साँचि धरसि—संचित करके रक्खा है। ९—अवगाहि = डूबकर अर्थात् इस बात को अपने मन में भली भाँति सोचो समझो। ११—तौं पय जीव = तब जी सकता है। १२—जौं पय पीव = यदि वह पी सके।

(४८)

आजु हम पेखल कालिन्दी कूले।
तुअ बिनु माधव बिलुठए धूले ॥२॥
कत सत रमनि मनहि नहि आने।
किए विष दाह-समय जल दाने ॥४॥
मदन-भुजंगम दंसल कान।
बिनहि अमिअ-रस कि करब आन ॥६॥
कुलवति धरम काँच समतूल।
मदन दलाल भेल अनुकूल ॥८॥
आनल बेचि नीलमनि हार।
से तुहु पहिरबि करि अभिसार ॥१०॥
नील निचोल झाँपबि निज देह।
जनि घन भीतर दामिनि-रेह ॥१२॥
चौदिक चतुर सखी चलु संग।
आजु निकुंज करह रस-रंग ॥१४॥

१-पेखल = देखा। कालिन्दी = यमुना। कूले = किनारे में। २-बिलुठए = लोट रहे हैं। ३-कत = कितने। सत = सौ। आने = लाता है ४-विष की ज्वाला के समय जल के दान से क्या—विष की ज्वाला कहीं पानी से शान्त होती है? ५-भुजंगम = सर्प। दसल = काटा। कान = कृष्ण। ६-अमिअ = अमृत। कि करब = क्या करेगा। आन = अन्य। ८-समतूल = समान। १० से = वह। अभिसार = गुप्त मिलन, प्रियतम के पास गमन। ११-निचोल = चोली। १२-घन = मेघ। दामिनि = बिजली। रेह-रेखा। चौदिक = चारों ओर।

(४९)

आज पेखल नन्द-किसोर।
केलि-विलास सबहु अब तेजल
अह निसि रहत विभोर॥२॥
जब धरि चकित बिलोकि विपिन-तट
पलटि आओलि मुख मोरि।
तबधरि मदन मोहन तरु कानन
लुटइ धीरज पुनि छोरि।४॥
पुनु फिरि सोइ नयन जदि हेरबि
पाओब चेतन नाह।
भुजंगिनि दंसि पुनहि जदि दंसए
तबहि समय विष जाह।६॥
अब सुभ खन धनि मनिमय भूषन
भूषित तनु अनुपाम।
अभिसरु बल्लभ हृदय विराजहु
जनि मनि कांचन-दाम।८॥

२-अह निसि = दिन-रात। बिभोर = बेसुध। ३-जब धरि = जबसे। ४-तब धरि = तबसे। लुटइ = लोटते है। ४--पाओब चेतन = चेतना पायेंगे, सुध में आयेंगे। नाह = नाथ (कृष्ण)। ६--भुजंगिनि = साँपिन। दंसि = काटकर। तबहि समय = उसी समय--उसी हालत में। जाह = जाता है। ८ अभिसरु = अभिसार करो--गुप्त मिलन-स्थान में जा मिलो। बल्लभ = प्यारा, विद्यापति का उपनाम। जनि महि कांचन-दाम = जैसे सोने के धागे में मणियों की माला पिरोई गई हो।

(५०)

प्रथम सिरिफल गरब गम ओलह
जौं गुन-गाहक आवे।
गेल जौवन पुनु पलटि न आवए
केवल रह पछतावे ॥ २ ॥

सुन्दरि, बचन करह समधाने।
तोहि सनि नारि दिवस दस अछलिहुँ
ऐसन उपजु मोहि भाने ॥४॥
जौबन रूप तावेधरि छाजत
जावे मदन अधिकारी।
दिन दस गेले सखि सेहओ पराएत
सकल जगत परिचारी ॥६॥
विद्यापति कह जुवति लाख लह
पड़ल पयोधर-तूले।
दिन-दिन आगे सखि ऐसनि होएबह
घोसिनि घोर क मूले ॥ ८ ॥

१—सिरिफल=श्रीफल, बेल(कुच) । गमओलह=गँवा दिया, खो । २—जौं=जबतक । आवे=आता है । ३—करह समधाने=समधान, विचार करो । ४—सनि=समान । अछलिहु=मैं भी थी । भाने= ...त । ५—छाजत=शोभता है । ६—गेले=जाने पर । सेहओ=वह ...पराएत=भागेगा । ७—पयोधर-तूले=कुच तराजू पर है । ८—आगे =अरी सखि । होएब=हो जाओगी । घोसिनि=ग्वालिन । घोरक— । मूले—मूल्य की ।

(५१)

ए धनि कमलिनि सुन हितबानि।
प्रेम करबि जब सुपुरुष जानि॥ २॥
सुजन क प्रेम हेम समतूल।
दहइत कनक द्विगुन होय मूल॥ ४॥
टुटइत नहि टुट प्रेम अदभूत।
जइसन बढ़य मृनाल क सूत॥ ६॥
सबहु मतंगज मोति नहि मानि।
सकल कंठ नहिं कोइल-बानि॥ ८॥
सकल समय नहिं रीतु वसन्त।
सकल पुरुष-नारि नहि गुनवन्त॥ १०॥
भनइ विद्यापति सुन वर नारि।
प्रेम क रीत अब बुझह बिचारि॥ १२॥

१—धनि = बाला। कमलिनी = पद्मिनी जाति की स्त्री। बानि = वाणी, बात। २—जब प्रेम करो तो सुपात्र ही जानकर। ३—सुजन क = सज्जन का। हेम = सोना। समतुल = समान। ४—दहइत = जलने पर। कनक = सोना। द्विगुन = दो गुण। मूल = मूल्य। ६—जइसन = जिस प्रकार बढ़य = बढ़ता है। मृनाल का = मृणाल का, कमल की डंटी का। सूत = सूत्र, धागा, भीतर का रेशा। ७—मतंगज = हाथी। मोति—मुक्ता। ८—कोइल बानि = कोयल की काकली। १०—सभी स्त्रियाँ और पुरुष गुणवन्त ही नहीं होते। 'बाघ' की एक कहावत इसी भाव की है—

सदा न बागा बुलबुल बोले, सदा न बाग बहारा।
सदा न जवानी रहती यारों, सदा न सुहबत यारा॥

(५२)

राधा की दूती

सुनु मनमोहन कि कहब तोय।
मुगुधिनि रमनी तुअ लागि रोय ॥२॥
निसि-दिन जागि जपय तुअ नाम।
थर-थर काँपि पड़ए सोइ ठाम ॥४।
जामिनि आध अधिक जब होइ।
बिगलित लाज उठए तब रोइ ॥६॥
सखिगन जत परबोधय जाय।
तापिनि ताप ततहि तत ताय ॥८॥
कह कविसेखर ताक उपाय।
रचइत तइहि रयनि बहि जाय ॥१०॥

१—कि=क्या। कहब=कहूँ। तोय=तुझे। २—मुगुधिनि=मुग्धा, प्रेमासक्ता। रमनि=रमणी, स्त्री। तुअ लागि=तेरे लिये रोय=रोती है। ४—पड़ए=(गिर) पड़ती है। ठाम=जगह। ५—जब रात आधी से अधिक बीत जाती है। ६—बिगलित लाज=लाज से रहित होकर। उठए तब रोइ=तब रो उठती है। ७—जत=जितनी। परबोधए=प्रबोध करती हैं, समझाती हैं। ८—तापिनि=ज्वाला से जली हुई। ताप=ज्वाला से। ततहि तत=उतना-ही-उतना। ताय=जलती है। (वह बिरह-ज्वाला से) जली हुई बाला ज्वाला से और भी अधिकाधिक जलती है। ९—ताक=उसका। १०—बहिजाय=बह जाती है, बीत जाती है।

(५१)

माधव ! कि कहब से विपरीत।
तनु भेल जरजर भामिनी अन्तर
चित बाढ़ल तसु प्रीत ॥२॥
निरस कमल-मुख कर अवलम्बइ
सखि माझ बइसलि गोइ।
नयन क नीर थीर नहि बाँधइ
पंक कयल महि रोइ ॥४॥
मरम क बोल, वयन नहि बोलय
तनु भेल कुहु-ससि खीना।
अवनि उपर धनि उठए न पारइ
धएलि भुजा धरि दीना ॥६॥
तपत कनक आनि काजर भेल तनु
अति भेल विरह-हुतासे।
कवि विद्यापति मन अभिलासत
कान्हु चलइ तसु पासे ॥८॥

२--जरजर = जर्जर, अत्यन्त क्षीण। भामिनी = स्त्री। अन्त = भीतर। बढ़ल = बढ़ गया। तसु = उसी प्रकार। ३—निरस = रसहीन, उदास। कर = हाथ। अवलम्बइ = अवलम्बन करके। माझ = मध्य। बइसलि = बैठी। गोइ = छिपाकर। ४—नयन क नीर = आँसू। थीर = स्थिरता। ५-मरम क बोल = मर्म कथा, हृदय के भाव। कुहु-ससि = अमावास्या का चंद्र। ६-उठए न पारइ = उठ नहीं सकती। पृथ्वी पर वह बाला स्वयं उठ नहीं सकती, (सखियां) उस दीना को भुजा पकड़कर (धरती पर से)

(५४)

लोटइ धरनि, धरनि धरि सोइ।
खने खन सॉस खने खन रोइ ॥२॥

खने खन मुरछइ कंठ परान।
इथि पर की गति दैव से जान ॥४॥

हे हरि पेखलौं से वर नारि।
न जीवइ बिनु कर-परस तोहारि ॥६॥

केओ केओ जपय बेद दिठि जानि।
केओ नव ग्रह पुज जोतिअ आनि ॥८॥

केओकेओ कर धरि धातु बिचारि।
बिरह-बिखिन कोइ लखए न पारि ॥१०॥

उठाती हैं। ७—तप्त = तात, तपाये हुए। कनक = सोना। जनि = समान। हुतासे = अग्नि। ८—तसु = उसके।

१—लोटइ = लोटती है। धरनि = पृथ्वी। सोइ = वह, २—खने-खन = क्षण-क्षण में। सॉस = उससे लेती है। रोइ = रोती है। ३—क्षण-क्षण में वह मूर्च्छित हो जाती है और प्राण कंठ तक चले आते हैं (मृत-प्राय हो जाती है)। ४-इथि = इसके। पर = बाद। की = क्या। से = वह। ५- पेखलौं = (मैंने) देखा। ६—जीवइ = जीयेगी। करपरस = हाथ का स्पर्श। ७—केओ = कोई। दिठि = नजर लगना। ८—पुज = पूजता है। जोतिअ = ज्योतिषि। आनि = ले आकर, बुलाकर। ९-धातु = नाड़ी। १०—बिरह-बिखिन = विरह-विक्षीण, विरह से क्षीण हुई। लखए न पारि = लख नहीं सकता।

(५५)

अबिरल नयन गरए जल-धार
नब-जल बिंदु सहए के पार ।२॥
कि कहब सजनी तकर कहिनी।
कहए न पारिअ देखलि जहिनी ॥४॥
कुच-जुग ऊपर आनन हेरु।
चाँद राहु डर चढ़ल सुमेरु ॥६॥
अनिल अनल बम मलयज बीख।
जेहु छल सीतल सेहु भेल तीख ॥८॥
चाँद सतावए सविता हु जीनि
नहि जीअन एकमत भेल तीनि ॥१०॥
किछु उपचार मान नहिं आन।
ताहि वेआधि भेषज पँचबान ।१२॥
तुअ दरसन बिनु तिलओ न जीब।
जइऔ कलामति पीउख पीब ॥१४॥

१—अविरल = लगातार ; गरए—गिरता है। २–नव-जल विन्दु = नवीन जल के कण, आँसू। ३—तकर = उसका । कहिनी = कहानी । ४–जहिनी = जैसी। ५—आनन = मुख। ७—अनिल = वायु। अनल = आग। बम = वमन करता है, उगलता है। मलयज = चन्दन। वीख = विष। ८-छल = था। तीख = तीक्ष्ण। ९–सविताहु = सूर्य से भी। जीनि जैसे, जीतकर, बढ़कर। १०—एकमत भेल तीनि = तीनों (वायु, चन्दन, चन्द्र) एकमत हुए। ११—उपचार = औषधादि। १२—भेषज = दवा पंचबान = कामदेव। १३--तिलओ = तिलमात्र भी, एक क्षण भी।

(५६)

लाखे तरुअर कोटिहि लता
जुअति कत न लेख।
सब फूल मधु मधुर नहीं
फूलहु फूल बिसेख ॥२॥
जे फुल भमर निन्दहु सुमर
बासि न बिसरए पार।
जाहि मधुकर उड़ि उड़ि पड़,
सेहे संसार क सार ॥४॥
सुन्दरि, अदहु बचन सुन।
सवे परेहरि तोहि इछ हरि
आपु सराहहि पुन ॥६॥

जीब=जीयेगी। १४—पीयूस=पीयूष=अमृत

१, २—तरुअर=तरुवर, वृक्षश्रेष्ठ। कत=कितना। न लेख=संख्या नहीं, असंख्य। मधु=पुष्परस। मधुर=मीठा। लाखों पेड़ हैं, करोड़ो लताएँ है, (यों ही) कितनी युवतियां है (जिनकी) गिनती नहीं। किन्तु सभी फूलों का रस मीठा नहीं होता—फूलों में भी कोई विशेष फूल होते हैं। ३—जे=जिस। भमर=भौंरा। निन्दहु=नीन्द में भी। सुमर=स्मरण करता है। बासि= गंध। न बिसरए पार=नहीं विस्मरण कर सकता, नहीं भूल सकता ४—मधुकर=भौंरा। पर=पड़ना, बैठना। से हे=वही। जिसपर भौंरा उड़ उड़कर बैठे वही (फूल) ससार का सार है—संसार में खिलना उसी का सार्थक है।

तोहरे चिन्ता तोहरे कथा
सेजहु तोहरे चाव।
सपनहु हरि पुनु पुनु कए
लए उठए तोर नाव।।८।
आलिंगन दए पाछु निहारए
तोहि बिनु सुन कोर
अकथ कथा आपु अवथा
नयन तेजए नोर।।१०।
राहि राही जाहि मुँह सुनि
ततहि अप्पए कान।
सिरि सिवसिंघ इ रस जानए
कबि विद्यापति भान।।१२।।

५—सुन = सुनो । ६—सबे = सबको । परिहरि = छोड़कर । इछ = इच्छा करता है । आप = अपना । सराहहि = सराहना करो । पुन = पुण्य । ७—तोहरे = तुम्हारा । सेजहु = शय्या पर भी । चाव = चाहना । ८—सपनहु = सपने में भी । पुन पुन कए = बारम्बार । लए उठए = ले उठते हैं । नाव = नाम । दए = देते हैं । पाछु = पीछे । निहारए = देखते हैं । सुन = शून्य, खाली । कोर = गोद । १०—अकथ = न कहने योग्य । आपु = अपनी । अवथा = अवस्था । नोर = आँसू । ११—राहि = राधा । अप्पए = अर्पण करते हैं । १२—भान = कहते हैं

"A poet is a painter of soul."

(५७)

आसायें मन्दिर निसि गमाबए
सुख न सूत सँयान ।
जखन जतए जाहि निहारए
ताहि ताहि तोहि भान ॥२॥
मालति ? सफल जीवन तोर ।
तोर बिरहे भुअन भम्मए
भेल मधुकर भोर ॥४॥
जातकि केतकि कत न अछए
सबहि रस समान ।
सपनहु नहिं ताहि निहारए
मधू कि करत पान॥६॥
बन उपबन कुंज कुटीरहि
सबहि तोहि निरूप ।

१—आसाये=आशा में । गमाबए=बिताता है । सूत=सोता है । सँयान=शयन पर, बिछावन । २-जखन=जब । जतए=जहाँ । जाहि=जिसे । निहारए=देखता है । जब जहाँ जिसे देखता है, उसे वसे ही तुम्हें भान करता है—भ्रमवश सभी को तुम्हें ही समझता है । ४—भुअन=भुवन, संसार । भम्मए=भ्रमण करते । मधुकर=भौंरा । भोर=विभोर, व्याकुल या प्रातःकाल । ५—जातकि=पारिजात । कत=कितना । अछए=हैं । ६—स्वप्न में भी उन्हे देखता तक नहीं, फिर उनका मधु क्यों पान करने चला । ७—सबहि=सभी स्थानों में । निरूप=निरूपण करता है ।

तोहि बिनु पुनु पुनु मुरुछए
अइसन प्रेम सरूप ।८॥
साहर नबइ सउरभ न सह
गुजरि गीत न गाव ।
चेतन पापु चिन्ताए आकुल
हरख सबे सोहाव ॥१०॥
जकर हिरदय जतहि रतल
से धसि ततही जाए ।
जइओ जतने बाँधि निरोधिअ
निमन नीर थिराए ॥१२॥
ई रस राय सिवसिंघ जानए
कबि बिधापति भान ।
रानि लखिमा देइ बल्लभ
सकल गुननिधान ॥१४॥

८—पुनु पुनु =पुन: पुन: बारंबार । मुरुछए=मूर्च्छित होता है। अइसन=इस प्रकार का । ९—साहर=सहकार, आम्र नबइ=नया, नव कुसुमित फूल । सउरभ=सौरभ सुगंध । गुजरि=गुंजार करके । गाव=गाता है। १०—चेतन=चैतन्य, जीव । पापु=पापी चिन्ताए=चिन्ता से । हरख सबे सोहाव=आनन्द में ही सब कुछ सुहाता है । ११—जकर=जिसका । ततहि—वहीं । रतल=अनुरक्त हुआ । से=वह । धसि=घुसकर । ततहि=वहाँ ही । १२—जइओ=यद्यपि । निरोधिअ=रोक रखिये । निमन=नीची जगह । नीर=पानी थिराए=स्थिर होता है ।

नोक-झोंक

(५८)

कर धल करु म हे, पारे
देब में अपरुब हारे, कन्हैया ॥ १॥
सखि सब तेजि चलि गेली।
न जानू कोन पथ भेली, कन्हैया ॥ ॥
हम न जाएब तुअ पासे।
जाएब औघट घाटे, कन्हैया ॥३॥
विद्यापति एहो भाने।
गूजरि भजु भगवाने, कन्हैया। ८।

१—कर=हाथ। धल=धरकर। करु=करो। पारे=उस पार २—देब=दूँगी। में=मैं। हारे=माला। ३-तेजि=छोड़कर। चलि गेली=चली गई। ४-न जानू=न मालूम। कोन पथ भेली=किस रास्ते गई? ५—जाएब=जाउंगी। तुअ=तेरे। पासे=निकट। ६—औघट घाटे=जिस घाट से कोई आता जाता न हो। ७ एहो=यह। भाने=कहते हैं ८—गूजरि=बाला, गोपी।

इस पद में प्रेमिका के हृदय का खासा चित्र विद्यमान है। कहाँ एक ओर कहती है-'हम न जाएब तुअ पासे' तो दूसरी ओर मुँह से निकलता है-'जाएब औघट घाटे'-याने आ रही हूँ निश्चिन्त स्थान में ही अर्थात् चलो, उस एकान्त स्थान में केलि-क्रीड़ा करें। यों ही इसके अन्य पदों मे भी अपूर्व बारीक भाव विद्यमान है। रसिक पाठक गौर करें!

Poetry has something divine in it.—*Bacon.*

(५९)

कुंज-भवन सयँ निकसलि रे
रोकल गिरिधारी।
एकहि नगर बसु माधव हे
जनि कर बटमारी ॥२॥
छाडु, कन्हैया मोर आँचर रे
फाटत नव-सारी।
अपजस होएत जगत भरि हे
जनि करिअ उघारी ॥४॥
संग क सखि अगुआइलि रे
हम एकसरि नारी।
दामिनि आए तुलाएल हे
एक राति अँधारी ॥६॥
भनहिं विद्यापति गाओल रे
सुनु गुनमति नारी।
हरि क संग किछु डर नहि हे
तोंह परम गमारी ॥८॥

१—सयँ=से । निकसहि=निकली । रोकल=रोकदिया ।२—बस=रहते हो । जनि=मत । बटमारी=डकैती, राहजनी ३—नव-सारी=नवीन साड़ी । उघारी=नग्न ।५—संग क=साथ की । अगुआइलि=आगे गई । एकसरि=अकेली । ६—दामिनि आए तुलाएल=बिजली भी चमकने लगी—मेघ छा गाए । अँधारी=अँधेरी, कृष्ण-पक्ष की । ८-हरिक=श्रीकृष्ण के । गमारी =गँवारी, बेवकूफ ।

(६०)

तुअ गुन गौरब सील सोभाब।
सुनि कए चढ़लिहुँ तोहरि नाव ॥२॥
हठ न करिअ कान्हु कर मोहि पार।
सब तहँ बड़ थिक पर-उपकार ॥४॥
आइलि सखि सब साथ हमार।
से सब भेलि निकहि बिधि पार ॥३॥
हमरा भेल कान्हु तोहरोअ आस।
जे अँगिरिअ ता न होइअ उदास ॥८॥
भल मन्द जानि करिअ परिनाम।
जस अपजस दुइ रहत ए ठाम ॥१०॥
हम अबला कत कहब अनेक।
आइति पड़ले बुझिअ बिबेक ॥१२॥
तोहँ पर नागर हम पर नारि।
काँप हृदय तुअ प्रकृति बिचारि ॥१४॥
भनइ विद्यापति गाबे।
राज सिबसिंघ रुपनरायन इ रस सकल से पावे ॥१६॥

२—सुनि कए=सुनकर। ४—सब तहँ=सबसे! थिक=है। ६—भेलि=हुई। निकहि बिधि=अच्छी तरह से। ८-जे=जो कुछ। अँगिरिअ= अंगीकार करता। ता=उससे। होइअ उदास=उदासीन होना, मुकरना। ११—कत=कितना। १२—आइत पड़ले=आ पड़ने पर ही, अवसर आने पर ही। बुझिअ बिबेक=ज्ञान की परख होती है। १३—पर नागर=अन्य पुरुष। १४—प्रकृति=स्वभाव।

(६१)

नाव डोलाव अहीरे
जिवइत न पाओब तीरे
खर नीरे लो।

खेवा न लेअए मोले
हँसि हँसि की दहु बोले
जिव डोले लो॥२॥

किए बिके ऐलिहु आपे
बेढ़लिहु मोहि बड़ सापे
मोरे पापे लो।

करितहुँ पर-उपहासे
परिहरितहुँ तन्हि विधि-फाँसे
नहि आसे लो॥४॥

न बूझसि अबुझ गोआरी
भजि रहु देव मुरारी
नहि गारी लो।

कवि बिद्यापति भाने
नृप सिवसिंघ रस जाने
नव कान्हे लो॥६॥

१—जिवइत=जीती हुई। खर नीरे= तीक्ष्ण धारा। २—मोले= मूल्य में, रुपये-पैसे में। की दहु=न जाने क्या। ३—किए=क्यों। ऐलिहु= मैं आई। बेढ़लिहु=आ घेरा। ४—तन्हि=उसी से। ५—गोआरि=ग्वालिन। गारी=गाली। ६—नव=नवीन, युवक।

सखी-शिक्षा

राधा को शिक्षा

(६२)

प्रथमहि अलक तिलक लेब साजि।
चंचल लोचन काजर आँजि ॥ २ ॥
जाएब बसन आँग लेब गोए।
दूरहि रहब तें अरथित होर ॥ ४ ॥
मोरि बोलब सखि रहब लजाए।
कुटिल नयन देब मदन जगाए ॥ ६ ॥
झाँपब कुच दरसाओब आध।
खन-खन सुदृढ़ करब निबि-बाँध ॥ ८ ॥
मान करए किछु दरसब भाव।
रस राखब तें पुनु पुनु आव ॥ १० ॥
हम कि सिखाओबि अओ रस-रंग।
अपनहि गुरु भए कहत अनंग ॥१२॥
भनइ विद्यापति ई रस गाव।
नागरि कामिनि भाव बुझाव ॥१४॥

१-अलक=केश। तिलक=टीका; बेंदी। लेब=लेना। २-आँजि=लगा देना। ३—बसन=कपड़ा। आँग—अंग। लेब गोए=छिपा लेना। ४—तें=इससे। अरथित=अर्थित, चाहक। ५-मुख मोड़कर बातें करना और बार-बार लज्जित होना। ५—कुटिल=टेढ़ें। झाँपब=ढँकना। निबि-बाँध नीबी का बन्धन। ६—मान करने के कुछ भाव प्रकट करना। ११—अओ=और। १२-अनंग=कामदेव। १४—नागरि-कामिनि=सुचतुरा स्त्री।

(६३)

प्रथमहि सुन्दरि कुटिल कटाख।
जब जोख नागर दे दस लाख ॥ २ ॥
केओ दे हास सुधा सम नीक।
जइसन परहोंक तइसन बीक ॥ ४ ॥
सुनु सुन्दरि नव मदन-पसार।
जनि गोपह आओब बनिजार ॥ ६ ॥
रोस दरस रस राखब गोए।
धएले रतन अधिक मूल होए ॥ ८ ॥
भलहि न हृदय बुझाओब नाहीं।
आरति गाहक महँग बेसाह ॥ १० ॥
भनइ विद्यापति सुनहु सयानि।
सुहित बचन राखब हिय आनि ॥ १२ ॥

१, २—जोखे=तौलकर। पहले, हे सुन्दरि, कुटिल कटाक्ष करना, जिसके (मूल-रूप में) नागर दस लाख प्राण तौलकर देगा। ३—केओ=कोई। हास=हँसी। नीक=अच्छा। ४—परहोंक=बोहनी। बीक=बिक्री होती है। ५—मदन-पसार=कामदेव की दूकान। ६—गोपह=छिपाओ बनिजार=व्यापारी। ७, ८—रोष प्रकटकर प्रेम छिपाये रखना, क्योंकि धरे हुए रत्न की कीमत अधिक होती है। ९—भलहि=अच्छी तरह। १०=आरति=आर्त, आग्रहपूर्ण। महँग=महँगा। वेसाह=खरीद करता है। १२—सुहित=सुहृद, मित्र। हिय=हृदय।

(६४)

सुनु सुनु ए सखि बचन बिसेस।
आजु हम देब तोहे उपदेस ॥२॥
पहिलहि बैठबि सयनक-सीम।
हेरइत पिया मुख मोड़बि गीम ॥४॥
परसइत दुहु कर बारबि पानि।
मौन रहबि पहु करइत बानि ॥६॥
जब हम सौंपब करे कर आपि।
साधस धरबि उलटि मोहि काँपि ॥८॥
बिद्यापति कत इह रस ठाठ।
भए गुरु काम सिखाओब पाठ ॥१०॥

३—सयनक-सीम=शय्या की एक ओर। ४—गीम=ग्रीवा, गरदन। जब प्रीतम मुख देखने लगें तब अपनी गरदन (दूसरी ओर) मोड़ लेना। ५—परसइत=स्पर्श करते। कर=हाथ। बारबि=वारण करना, मना करना। पानि=हाथ। जब वे अंग-स्पर्श करने लगें तब दोनों हाथों से उनके हाथ को रोकना। ६—पहु=प्रभु प्रीतम। करइत बानि=बातचीत करते समय। ७—८—करे=हाथ में। कर=हाथ। आपि=अर्पण कर। साधस=भय। जब मैं उसके हाथ में तुम्हारा हाथ अर्पण कर तुम्हें सौंपूंगी, तो तुम संभ्रम उलटकर कांपते हुए मुझे पकड़ना ९— रस-ठाठ = रस की रीति। १०—भए=होकर।

"रसात्मकं वाक्यं काव्यम्"—साहित्यदर्पण

(६५)

परिहर, ए सखी, तोहे परनाम,
हम नह जाएब से पिआ-ठाम ॥२॥
बचन-चातुरि हम किछु नहि आन।
इंगित न बूझिए न जानिए मान ॥४॥
सहचरि मिली बनाबए भेस।
बाँधए न जानिए अप्पन केस ॥६॥
कभु नहि सुनिए सुरत क बात।
कइसे मिलब हम माधव साथ ॥८॥
से बर नागर रसिक सुजान।
हम अबला अति अलप गेआन ॥१०॥
विद्यापति कह कि बोलब तोए।
आजुक मीलल समुचित होए ॥१२॥

१—ए सखि, (इन बातों को) छोड़ो, मैं तुम्हें प्रणाम करती हूँ २—ठाम=स्थान। ४—इंगित=इशारा। न मैं इशारा समझती हूँ और न मान करना जानती हूँ। ५—सहचरि=सखियाँ। बनावए भेस=भेष बनाती हैं—मेरा शृंगार कर देती है। ६—अप्पन=अपना। ७—सुरत क बात=काम-क्रीड़ा की बातें। ८—कइसे=किस प्रकार। ९—नागर=चतुर। १०—अलप=अल्प थोड़ा। ११—तोए=तुम्हें। १२—आजुक=आज का। मिलल=मिलना।

शेर दर असल हैं वही हसरत'
सुनते ही दिल में जो उतर जाये।

(६६)

काहे डरसि सखि चलु हम संग।
माधव नहिं परसब तुअ अंग ॥२॥
इह रजनी फुल-कानन माझ।
के एक फिरत साजि बहु साज ॥४॥
कुसुम क घोर धनुष धरि पानि।
मारत सर बाला जन-जानि ॥६॥
अतए चलह सखि भीतर कुंज।
जहाँ रह हरी महाबल पुंज ॥८॥
एत कहि आनल धनि हरि पास।
पूरल बल्लभ सुख-अभिलास ॥१०॥

१—काहे=किसलिये । डरसि=डरती है । २—परसब=स्पर्श करेंगे । ३, ६—रजनी=रात । फुल-कानन=पुष्प-वन । माझ=में । के=कौन । एक=अकेले । कुसुम क=फूलों का । धनुष=धनुष । पानि=हाथ । इस रात में, पुष्प वन में, यों नाना प्रकार शृङ्गार करके कौन अकेली घूमती है ? (अरी, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि)फूलों का कठोर धनुष हाथ में धरकर (कामदेव-रूपी तीरन्दाज) बाला स्त्रियों को। खोज-खोजकर बाण मारता है ! ७—अतए=अतएव, इसलिये । ८—हरी=श्रीकृष्ण । महाबल पुंज=बड़े बलशाली। 'महाबलपुंज 'कहकर सखी धैर्य देती है कि श्रीकृष्ण तुम्हें काम के बाण की चोट से बचायेंगे । ९—एत=इतना । आनल=लाई । धनि=बाला। पास=निकट । १०—पूरल=पूरा हुआ ! बल्लभ=विद्यापति का उपनाम ।

(६७)

परिहर मन किछु न कर तरास।
साधस नहि कर चल पिय पास ॥२॥
दुर कर दुरमति कहइम तोए।
बिनु दुख सूख कबहु नहि होए ॥४॥
तिल आध दूख जनम भरि सूख।
इथे लागि धनि किए होइ बिमूख ॥६॥
तिला एक मूनि रहु दु नयान।
रोगि करए जइसे औषध पान ॥८॥
चल चल सुन्दरि करह सिंगार।
बिद्यापति कह एहि से बिचार ॥१०॥

१—परिहर=छोड़ो। तरास=त्रास, डर। २—साधन=भय। ३—दुर कर=दूर करो। दुरमति=दुर्बुद्धि। कहइम=मै कहती हूँ। तोय=तुझे। तिल आध=(मैथिली प्रयोग) एक क्षण के लिये। ६—इथे=इसलिये। किए=क्यों। होइ=होती हो। बिमूख=विमुख, विपक्ष। ७—मूनि रहु=मूँद रक्खो। दु=दो। नयान=आँखें ८—जइसे=जिस प्रकार। पान=पीना। करह=करो। १०-एहि से=यह ही।

A poet is not only a dreamer of dreams, his heart is the mirror of the world's emotions, his songs of gladness are the echoes of the world's laughter, his songs of sorrow reflect the tears of humanity.

—*Sarojini*

श्रीकृष्ण को शिक्षा

(६८)

हमे दरसइत कतहुँ बेस करु
हमे हेरइत तनु झाँप ।
सुरत सिंगारि आज धनि आओलि
परसइत थर थर काँप ॥२॥
सुनु हे कान्हु कहिये अवधारि ।
सकल काज हम बुझल बुझाएल
न बुझल अन्तर नारि ॥४॥
अभिनव काम नाम पुनु सुनइत
रोखत गुन दरसाइ ।
अरि सम गंजए मन पुनु रंजए
अपन मनोरथ साइ ॥६॥
अन्तर जीउ अधिक करि मानए
बाहर न गन तरासे ।
कह कवि-सेखर सहज विषय-रत
बिरराधि केलि बिलासे ॥८॥

१—दरसइत=दिखाकरके । कतहुँ=कितना ही । बेस करु=शृंगार करना । हेरइत=देखते । झाँप=ढाँप लेना । २—सुरत=काम-क्रीड़ा । ३—अवधारि=निश्चय करके । ४—बुझल-बुझाएल=समझा बुझा दिया है । अन्तर=हृदय । ५—अभिनव=नवीन । रोखत=रोष प्रकट करती है । गुन दरसाइ=गुण दिखाकर, कला प्रकट करके । चूंकि

(६९)

सुन सुन सुन्दर कन्हाई । तोहे सौंपल धनि राई ॥ २ ॥
कमलिनि कोमल कलेवर । तुहु से भूखल मधुकर ॥ ४ ॥
सहज करबि मधु पान । भूलह जनि पँचबान ॥ ६ ॥
परबोधि पयोधर परसिह । कुंजर जनि सरोरुह ॥ ८ ॥
गनइत मोतिम हारा । छले परसब कुच भारा ॥ १०॥
न बुझए रति-रस-रंग । खन अनुमति खन भंग ॥ १२॥
सिरिस-कुसुम जिनि तनु । थोरि सहब फुल-धनु ॥ १४ ॥
बिद्यापति कवि गाव । दूति क मिनति तुए पाव ॥ १६ ॥

बिल्कुल ही नवीना है, अतः, काम का नाम सुनते ही कला प्रकट करती हुई कोपित हो उठती है । ६—गंजय=गंजना करती है । रंजए=प्रसन्न करती है । साइ=वह । ८ - हृदय से तो (तुम्हें) प्राणों से अधिक चाहती है, किन्तु बाहर डर से प्रकट नहीं करती ।

२—धनि = बाला । राइ = राधा । ३—कलेवर = शरीर । ४—भूखल = भूखा हुआ । मधुकर = भौंरा । ५—सहज = स्वभाविक ढंग से धीरे-धीरे । करब=करना । जनि नहीं । पचबान = कामदेव । ७—परबोधि=प्रबोधकर, समझा बुझाकर । पयोधर=कुच, स्तन । परसिह = स्पर्श करना । ८—कुंजर = हाथी । सरोरुह=कमल । जिस प्रकार हाथी कमल को रौंदता है, उस प्रकार नहीं । ९—गनइत = गिनते हुए १०—छले = छल से । १२—अनुमति = राजी होना । १३—सिरिस-कुसुम=एक कोमल फूल । जिनि =ऐसा । १४—फुलधनु=काम, का धनु । १६—मिनती = विनती । पाव=पैर ।

(७०)

प्रथम समागम भुखल अनङ्ग।
धनि बल जानि करब रतिरङ्ग ॥२॥
हठ करब अति आरति पाए।
बड़हु भुखल नहि दुहु कर खाए ॥४॥
चेतन कान्हु तोंहहि अति आथि।
के नहि जान महत नव हाथि ॥६॥
बुझ गुन गन कहि कर अनुबोधि।
पहिलहि सबहि हलति परबोधि ॥८॥
हठ नहि करब रती परिपाटि।
कोमल कामिनि बिघटति साटि ॥१०॥
जाबे रभस सह ताबे विलास।
बिमति बुझिअ जयँ न जाएब पास ॥१२॥
धसि परिहरि नहि धरबिए काहु।
उगिलल चाँद गिलए जनि राहु ॥१४॥
भनइ बिद्यापति कोमल-काँति।
कौसल सिरिस-सुमन अलि भाँति ॥१६॥

१—अनङ्ग=कामदेव। २—आरति पाए=व्याकुलता में पाकर। ४—कर=हाथ से। ५—चेतन=चतुर। आथि=अस्ति, हो। ६—महत=महावत। नव=नया (फँसाया हुआ)। ७—अनुबोधि=समझा बुझाकर। हलति=लाई। ९—रती परिपाटि—रती-क्रीड़ा के ढंग। १०—बिघटति साटि=शान्ति घटेगी=पीड़ा होगी। ११ रभस=काम क्रीड़ा। सह=सहन करे। १२—बिमति=राजी नहीं। जयँ=यदि।

[७१]

बुझब छयलपन आज।

राहि मनि रतने आनलि अनि जतने

वंचि सब रमनि-समाज ॥२॥

सिरिस कुसुम जनि अति सुकुमार धनि

आलिंगब दृढ़ अनुरागे।

निर्भय करब केलि केह नहिं बूझे गेलि

भौरं भरे माँजरि न भांगे ॥४॥

पिरीतिक बोलि नियरे वइसाओब

नख हनि आनब कोल।

नहि नहि कर धनि कपट सुतब जनु

यदि कह कातर बोल ॥६॥

१३—एक बार छोड़कर पुनः धसकर दोबारा आगे बढ़कर उसकी बाँह मत पकड़ना। १४—गिळय=निगल जाना। १६—जिस प्रकार भौंरा बड़े कौशल से सिरिस के फूल का रस चूसता है, उसी प्रकार।

१—छयलपन = रसिकता। २—राहि = राधा। मनि रतने = रत्नों में मणि। आनलि = लाई। वंचि = छल करके। ३—जनि = ऐसा। आलिंगब = आलिंगन-करना, छाती लगाना। ४—निर्भय होकर केलि करना, यह किसे नहीं मालूम ह कि भौंरे के शरीर के भार से कोमल मंजरी नहीं टूटती। ५—नियरे = निकट। नख हनि आनब कोले = नख से हनन कर = नख से कुचों को क्षत विक्षत कर—उसे गोदी में बैठा लेना ६—नहि नहि कर धनि=यह बाला यदि नहीं नहीं करे। कातर बोल= दीन वचन।

मिलन

(७२)

सुन्दरि चललिहु पहु-घर ना।
चहुदिस सखि सब कर धर ना॥२॥
जाइतहु लागु परम डर ना।
जइसे ससि काँप राहु डर ना॥४॥
जाइतहि हार टुटिए गेल ना।
भूखन बसन मलिन भेल ना॥६॥
रोए रोए काजर दहाए देल ना।
अदकँहि सिंदुर मेटाए देल ना॥८॥
भनइ विद्यापति गाओल ना।
दुख सहि सहि सुख पाओल ना॥१०॥

१—चललिहु = चलीं। पहु = प्रभु। २—चहुदिस = चारो ओर। कर = हाथ। ३—जइतहु = जाने में। ४—ससि = चन्द्रमा। ७—रोए = रोकर। दहाए देल = बहा दिया। अदकँहि = आतंक से ही, डर से।

स कविः कथ्यते स्रष्टा रमते यत्र भारती।
रसभावगुणीभूतैरलंकारैर्गुणोदयैः॥

—वेंकटाचार्य।

(७२)

कौतुक चललि, भवन कए सजनि गे
सँग दस चौदिस नारी।
बिच बिच सोभित सुन्दरि सजनि गे
जेहि घर मिलत मुरारी ॥२॥
लए अभरन कए षोड़स सजनि गे
पहिर उतिम रँग चीर।
देखि सकल मन उपजल सजनि गे
मुनिहुक चित रहि थीर ॥४॥
नील वसन तन घेरल सजनि गे
सिर लेल घोंघट सारि।
लग लग पहु के चलइत सजनि गे
सकुचल अंकम नारि ॥६॥

१—कौतुक=कुतूहल युक्त होकर। चौदिस=चारों ओर। २—बिच बिच=मध्य भाग में। ३—अभरन=आभरण, गहने। कए—षोड़स=सोलह श्रृंगार करके। उतिम रंग=अच्छे रंग की। चीर=साड़ी। ४-उपजल=(काम) उत्पन्न हुआ। मुनिहुक=ऋषियों का भी। थीर=स्थिर। ५—नील वसन=नील रंग कपड़ा। तन घेरलि=शरीर को लपेटे हुई। घोंघट=घूँघट। सारि लेल=सँभार लिया। ६—लग=निकट। पहु=प्रीतम। सकुचल=सकुचा गया। अंकम=हृदय। प्रीतम के निकट जाने में बाला का हृदय सकुच गया।

सखि सब देल भवन कए सजनि गे
घुरि आइलि सभ नारि।
कर धए लेल पहु लग कए सजनि गे
हेरए बसन उघारि ॥ ८ ॥
भए बर सनमुख बोलइ सजनि गे
करे लागल सबिलास।
नव रस रीति पिरीति भेल सजनि गे
दुहु मन परम हुलास ॥१०॥
विद्यापति कवि गाओल सजनि गे
ई थिक नव रस रीति।
बयस जुगल समुचित थिक सजनि गे
दुहु मन परम पिरीति ॥१२॥

७—देल भवन कए=भवन कए देल=घर में ला रक्खा। घुरि आइलि=लौट आईं। ८—कर धए=हाथ धरकर। पहु लग कए लेल—प्रीतम के निकट ले आये। हेरए=देखता है। बसन=वस्त्र। (अंचल)। उघारि=उघारकर—(अंचल) हटाकर। ९—भए=होकर। बर=प्रीतम। करे लागल=करने लगा। सबिलास=काम-क्रीड़ा। १०—नव=नवीन। हुलास=आनन्द। ११—ई=यह। थिक=है। १२—बयस=अवस्था। जुगल=दोनों को। समुचित=योग्य।

"Poetry is the spontaneous over-flow of powerful feelings."

(७४)

अहे सखि अहे सखि लए जनि जाह।
हम अति बालिक आकुल नाह॥ २॥
गोट गोट सखि सब गेलि वहराय।
बजर किब,ड़ पहु देलन्हि लगाय॥ ४॥
तेहि अवसर पहु जागल कन्त।
चीर सँभारलि जिउ भेल अन्त॥ ६॥
नहि नहि करए नयन ढर नोर।
काँच कमल भमरा झिकझोर॥ ८॥
जइसे डगमग नलनि क नीर।
तइसे डगमग धनि क शरीर॥ १०॥
भन विद्यापति सुनु कबिराज।
आगि जारि पुनि आगि क काज॥१२॥

१—लए जाह=ले जाओ। जनि=मत, नहीं। २—बालिक=बालिका। आकुल=घबराया हुआ। नाह=नाथ, प्रीतम। ३—गोट गोट=एक-एक कर। गेलि=गई। वहराय=बाहर होना। ४—बजर=वज्र-तुल्य। पहु=प्रभु, प्रीतम। देलन्हि=दिया। ५—पहु=प्रीतम (यहां कामदेव से तात्पर्य है)। ६—वस्त्र हटाने का उपक्रम करते ही मालूम हुआ, मेरे प्राण निकल गये। ७—नोर=आंसू। ८—काँच कमल=अधखिला कमल। भमरा=भौंरा। ९—डगमग=हिलता डुलता। नलनिक नीर=कमल (के पत्ते पर) का पानी॥१०—धनिक=धनि के, बाला के १२—आग जलाई जाती है तो भी तो फिर आग की आवश्यकता होती है।

कत अनुनय अनुगत अनुबोधि।
पति-गृह सखिन्हि सुताओलि बोधि ॥२॥

विमुखि सुतलि धनि समुखि न होए।
भागल दल बहुलाबए कोए ।४॥

बालमु बेसनि बिलासिनी छोटि।
मेल न मिलए देलहु हिम कोटि ॥६॥

बसन झपाए बदन धर गोए।
बादर तर ससि बेकत न होए ॥८॥

भुज-जुग चाँप जीब जौं साँच।
कुच कञ्चन कोरी फल काँच ॥१०॥

लग नहि सरए, करए कसि कोर।
करे कर बारि करहि कर जोर ॥१२॥

एत दिन सैसब लाओल साठ।
अब भए मदन पढाओब पाठ ॥१४॥

गुरुजन परिजन दुअओ नेबार।
मोहर मुदल अछि मदन-भंडार ॥१६।

भनइ विद्यापति इहो रस भान।
राए सिवसिंघ लखिमा बिरमान ।१८॥

१—कत = कितना। अनुनय = विनती। अनुगत = खुशामद। अनुबोधि = बुझाना। २—सुताओलि = सुलाई। ३—विमुखि = दूसरी तरफ मुँह करके। ४—बहुलाबए = फेरना। कोए = कौन। ५—बेसनि — व्यसनी, कामी। बिलासिनि = विलास करनेवाली (बाला)। ६—हिम = हेम =

(७६)

सखि परबोधि सयन-तल आनि।
पिय हिय हरषि धएल निज पानि ॥२॥
छुबइत बालि मलिन भइ गेल।
बिधु-कर मलिन कमलनी भेलि।४।
नहि नहि कहइ नयन भर नोर।
सूति रहलि राहि सयनक ओर ॥६।
आलिंगए नीवि-बँध बिनु खोरि।
कर कुच परस येह भेल थोरि।८।
आचर लेइ वदन पर झाँप।
थिर नहि होअइ थर थर काँप ॥१०॥
भनइ विद्यापति धीरज सार।
दिन दिन मदन क होय अधिकार।१२।

सोना। ७—गोइ = छिपाकर। ८—बेकत = व्यक्त प्रगट। ९–१० चाँपि = दबाकर साँच=संचय करना। कोरी = कोरा अछूता। सोने के समान कुचों को कच्चे और अछूते फल समझकर दोनों हाथों से दबाकर प्राणों के समान जोगाती है। ११—लग=निकट। धरए=धाती है। कोर = क्रोड़, गोदी। १३—करे कर बारि अपने हाथ से (नायक) के हाथ निवारण करती है। करइ करजोर=हाथ जोड़ती है, प्रार्थना करती है। सैसव=बचपन। साठ लाओल=संगत निभाई। नेबार=निवारण किया हुआ। मोहर=मुहर देकर।

१—आनि=लाई। २—धएल=पकड़ा। पानि = हाथ। ३—बालि = बाला। ४—बिधुकर = चन्द्रमा की किरणों में। ५—

(७७)

प्रथमहि गेलि धनि प्रीतम पास।
हृदय अधिक भेल लाज तरास॥ २॥
ठाढ़ि भेलन्हि धनि अंगो न डोले।
हेम-मूरति सयँ मुखहु न बोले॥ ४॥
कर दुहु धए पहु पास बइसाए।
रुसल छलि धनि बदन सुखाए॥ ६॥
मुख हेरि ताकए भमर झाँपि लेल।
अंकम भरि कँ कमलमुखि लेल॥ ८॥
भनइ विद्यापति दह इ सुमति मति।
रस बूझ हिन्दूपति हिन्दूपति॥ १०॥

नोर=आँसू। ६—सूति रहल=सो रहीं। राहि=राधा। ओर=सीमा पर (एक ओर)। खोरि=खोलना। ८—सेह=वही।

१—धनि=नायिका। ३—भेलन्हि=हुई। ५—हेम=सोना। सनि=समान। १—पहु=प्रभु प्रीतम। बइसाए=बैठाता है। ६—रुसलि छलि=रूठी हुई थी। ७, ८—हेरि ताकए=भली भाँति (निरीक्षण करके) देखना। भमर=भौंरा [कृष्ण]। अंकम=गोद भरिकँ=भरकर, भौंरा (कृष्ण) उसका मुख भली भाँति-आँखे गड़ाकर-देखता था; अतः नायिका ने उसे ढाँप लिया। किन्तु ज्यों ही उसने अपना मुँह ढाँपा कि मौका पाकर, श्रीकृष्ण ने उसे गोद में ले लिया। ९—दह=दो। विद्यापति कहते है कि हे सुमति, अब यह (मति) अनुमति दो—कृष्ण की प्रार्थना स्वीकार करो। हिन्दूपति=राजा शिवसिंह।

(७८)

जतने आएलि धनि सयन क सीम।
पाँगुर लिखि खिति नत रहु गीम॥ २॥
सखि हे, पिया पास बैठलि राहि।
कुटिल भौंह करि हेरइछि काहि॥ ४॥
नवि वर नारि पहिल पिया मेलि।
अनुनय करइत रात आध गेलि॥ ६॥
कर धरि बालमु अइसाओल कोर।
एक पए कह धनि नहि नहि बोल॥ ८॥
कोर करइत मोड़इ सब अंग।
प्रबोध न मानु, जनि बाल भुजंग॥ १०॥
भनइ विद्यापति नागरि रामा।
अन्तर दाहिन बाहर बामा॥ १२॥

१—सयन क-सीम शय्या की सीमा मे, शय्या के निकट। २—पाँगुर=पदांगुलि, पैर की अंगुली। खिति=पृथ्वी। नत=नीचे किये। गीम=ग्रीवा, गरदन। ३ राहि=राधा ४—हेरइछि=देखती हैं। ५—नवि=नवीना। नवीना सुन्दरी नायिका की प्रथम-प्रथम प्रीतम से भेंट हुई। ६—अनुनय=विनय। ७-कर धरि=हाथ धरकर। अइसाओल कोर=गोदी में बिठलाया। ८—बाला बस एक 'नहीं नहीं' का वचन कहती है—सदा नहीं-नहीं बोलती है। ९—गोदी में बिठलाते ही अपने अंगों को ऐंठती है—भावभंगी दिखलाती है। १०—जनि=मानों। बाल भुजंग=बच्चा साँप। १२—अन्तर=हृदय से। दाहिन=अनुकूल। बाहर=बाहर से ऊपर से। बामा=प्रतिकूल।

(७९)

अधर मँगइते अओंध कर माथ।
सहए न पार पयोधर हाथ॥ २॥

बिघटल नीबो कर धर जाँति।
अंकुरल मदन, धरए कत भाँति॥ ४॥

कोमल कामिनि नागर नाह।
कओन परि होएत केलि निरबाह॥ ६॥

कुच-कोरक तब कर गहि लेल।
काँच बदरि अरुनिम रुचि भेल॥ ८॥

लावए चाहिअ नखर बिसेख।
भौंहनि आमए चाँद क रेख॥ १०॥

तसु मुख सौं लोभे रहु हेरि।
चाँद झपाव बसन कत बेरि॥ १२॥

१—अओंध कर=नीचे करती हैं। २—सहएँ न पार=सह नहीं सकती। पयोधर=कुच। ३—बिघटल=खुली हुई। नीबी=लोंचा फुफनी। कर धर जाँति=हाथ से दबाकर रखती है। अंकुरल=अंकुरित हुआ, पैदा हुआ। भाँति=रूप, आकार। ४—नागर=चतुर। नाह=नाथ, प्रीतम। ६—कओने परि=किस प्रकार। ७—कुच कोरक=कुच की सीमा। ८—बदरि=बेर (छोटे-छोटे कुचों की उपमा)। अरुनिम रुचि लाल रंग की छटा। ९,१०—नखर=नख की रेखा। बिसेख=उत्तम, सुन्दर। (जब प्रीतम) कुच पर नख रेखा देना चाहता है, तब नायिका की भौंहों पर [चन्द्र की रेखा] टेढ़ापन आ जाता है। ११-तसु=उसका। १२—चाँद=चन्द्रमा (मुख)। बसन=कपड़ा (अंचल)।

(८०)

जखन लेल हरि कँचुअ अचोड़ि।
कत परजुगति कएल अंग मोड़ि॥ २॥
तखनुक कहिनी कहल न जाय।
लाजे सुमुखि धनि रहलि लजाय॥ ४॥
कर न मिझाए दूर जर दीप।
लाजे न मरए नारि कठजीव। ६॥
अंकम कठिन सहए के पार।
कोमल हृदय उखड़ि गेल हार॥ ८॥
भनइ बिद्यापति तखनुक भान।
कओन कहल सखि होएत बिहान॥ १०॥

१—जखन=जिस समय। कँचुअ=कंचुकी, चोली। अचोड़ि लेल=उतार लिया। २—कत=कितना। परजुगति=प्रयुक्ति, उपाय। ३—कहिनी=कहानी, कथा। ४—लाजे=लाजसे। ५—कर=हाथ। मिझाए=बुझता है। जर=जलता है। दीप=दीपक। दीपक [शय्या से] दूर पर जल रहा है, अतः वह नायिका के हाथ से नहीं बुझता। कवि-कुल-गुरु कालिदास के मेघदूत में एक ऐसा ही पद्य है, जिसका अनुवाद यों है—"नीवी ग्रंथी शिथिल करके वस्त्र-प्रेमी छुटावे। मुग्धा प्यारी अरुण-अधरा काम क्रीड़ा दिखावे॥ भोली लज्जाविवश तब हो चूर्ण मुष्टी चलावे। पै होती है विफल मणि का दीप कैसे बुझावे।" ६—लाजे=लाज से कठजीव=कठोर-प्राण। ७—अंकम=आलिंगन। सहए के पार=कौन सह सकता है? उखड़ि गेल=उखड़ गया, निसान पड़ गया।

(८१)

ए हरि बले यदि परसबि मोय ।
तिरि-बध-पातक लागए तोय ॥ २ ॥
तुहु रस आगर नागर ढीठ ।
हम न बूझिए रस तीत कि मीठ ॥ ४ ॥
रस परसंग उठओ मझु काँप ।
जन हरिनि जनि कएलन्हि झाँप ॥ ६ ॥
असमय आस न पुरए काम ।
भल जन न कर बिरस परिनाम ॥ ८ ॥
बिद्यापति कह बुझलहुँ साँच ।
फलहु न मीठ होअए काँच ॥ १० ॥

तखनुक=उस समय का। १०—बिहान=प्रातः काल ।

१—बल=बलपूर्वक । परसबि=स्पर्श करना। मोय=मुझे । २—तिरि-बध-पातक=स्त्री के बध का पाप । तोय—तुझे । ३-आगर=अग्रणी, श्रेष्ठ । नागर=चतुर ४-तीत=तिक्त, कड़वा। कि=या । परसंग=चर्चा । ५—मझु=मे । ६—मानों बाण से बेधी जाकर हरिणी उछल उठती हो। ७—कुसमय में करने से न कोई आशा पूरी होती है, और न कोई काम पूरा होता है। ८—भलजन=अच्छे आदमी। न कर=नहीं करते। बिरस=रसहीन, बुरा । परिनाम=अंतिम फल । अच्छे आदमी [ऐसा काम]नहीं करते जिसका परिणाम बुरा हो। बुझलहुँ=मैं समझी। १०—कच्चा फल भी मीठा नहीं होता।

---

(८१)

रति-सुबिसारद तुहु राख मान।
बाढ़िले जौबन तोहे देब दान ॥ २ ॥
आबे से अलप रस न पूरब आस।
थोर सलिल तुअ न जाय पियास ॥ ४ ॥
अलप अलप रति यहि चाहि नीति।
प्रतिपद चाँद-कला सम रीति ॥ ६ ॥
थोरि पयोधर न पूरब पानि।
न दिह नख-रेख हरि रस जानि ॥ ८ ॥
भनइ बिद्यापति कइसन रीति।
काँच दाड़िम प्रति ऐसन प्रीत ॥ १० ॥

१—रति सुबिसारद=कामक्रीड़ा में परम चतुर। तुहु=तुम। मान=मर्यादा। २—आबे=इस समय से=वह। अलप=थोड़ा पूरब=पूरेगा। ३—सलिल=पानी। तुअ=तेरी। न जाय=नहीं जायगी। ५—६—जिस प्रकार प्रतिपदा से चन्द्रमा थोड़ा-थोड़ा बढ़ता है, उसी प्रकार रति भी थोड़ी-थोड़ी करके बढ़ानी चाहिये, यही नीति है। ७—थोरि=छोटा। पयोधर=कुच। पानि=हाथ। अभी कुच छोटे हैं, उनसे तुम्हारे हाथ भी नहीं भरेंगे। ८—हे हरि, उनपर नख की रेखा मत दो—उन्हें नखों से मत बकोटो, तुम तो स्वयं रस की बात जानते हो। ९—कइसन=किस प्रकार की। १०—दाड़िम=अनार [कुच की उपमा]। ऐसन=इस प्रकार।

———

"जहाँ न जाय रवि, तहाँ जाय कवि।"

(८३)

निबि-बंधन हरि किए कर दूर।
एहो पए तोहर मनोरथ पूर ॥ २ ॥
हेरने कओन सुख न बुझ बिचारि।
बड़ सुहु ढीठ बुझल बनमारि ॥ ४ ॥
हमर सपथ जौं हेरह मुरारि।
लहु लहु तब हम पारब गारि ॥ ६ ॥
बिहर से रहसि हेरने कौन काम।
से नहि सहबहि हमर परान ॥ ८ ॥
कहाँ नहि सुनिए एहन परकार।
करए बिलास दीप लए जार ॥ १० ॥
परिजन सुनि सुनि तेजब निसास।
लहु लहु रमह सखीजन पास ॥ १२ ॥
भनइ बिद्यापति एहो रस जान।
नृप सिबसिंघ लखिमा-बिरमान ॥ १४ ॥

१—निबि बंधन = कोंचे का बन्धन। किए = क्यों। २—एहो पए = इससे भी। ३—हेरने = देखने से। ४—बुझल = मैं समझ गई। ५—हेरह = देखो। ६—लहु लहु = धीरे-धीरे। पारब गारि = गाली दूँगी। ७—एकान्त में [चुपचाप] विहार करो? [विहार से रहसि] भला देखने से क्या प्रयोजन। ९—एहन परकार = ऐसा ढंग। १०—काम-क्रीड़ा के समय दीपक जला ले। ११—परिजन = पड़ोसी। तेजब निसास—[केलि-समय में] निःश्वास लेना। १२—रमह = संभोग करो। पास = निकट। १४—बिरमान = पति।

(८४)

सुन सुन नागर निवि-बंध छोर।
गाँठिते नाहि सुरत-धन मोर ॥ २ ॥
सुरत क नाम सुनल हम आज।
न जानिअ सुरत करए कौन काज ॥ ४ ॥
सुरत क खोज करब जहाँ पाब।
घर कि अछए नाहि सखिरे सुधाब ॥ ६ ॥
बेरि एक माधव सुन मझु बानि।
सखि सयँ खोजि माँगि देब आनि ॥ ८ ॥
बिनति करए धनि माँगे परिहार।
नागरि-चातुरि भन कबि-कंठहार ॥ १० ॥

इस पद्य में राधा का विचित्र परिहास, बड़ी सफाई से, वर्णित है। कृष्ण राधा से 'सुरत, माँग रहे है—राधा से काम-क्रीड़ा करने को कह रहे है—इसपर राधा कहती है—"अरे चतुर, सुनो, मेरी नीवी का बन्धन छोड़ो इसकी गाँठ में 'सुरत, रूपी धन नहीं छिपा पड़ा है। मैंने 'सुरत' का नाम तो आज ही सुना है, न जाने 'सुरत' [कौन है और] क्या काम करता है? हाँ, आज से मैं, जहाँ पाऊँगी, सुरत की खोज करूँगी। सखियों से पूछूँगी [सखि रे सुधाब] कि मेरे घर में है कि नहीं। माधव! एक बार मेरी बात सुन लो, सखियों से यदि प्राप्त कर सकूंगी तो खोज ढूँढ़कर तुम्हें ला दूँगी।" यों नायिका बिनती करती और उन्हें मना कर रही है, कवि-कंठहार विद्यापति नागरी नायिका की इस चातुरी का (चतुरता-पूर्ण) वर्णन करते हैं।

(८५)

हरि-कर हरिनि-नयनि तन सौंपलि
सखिगन गेलि आन ठाम
अवसर पाइ धनि कर धरि नागर
बिनति करए अनुपाम ॥ २ ॥
हरिनि-नयनि धनि रामा ।
कानुक सरस परस संभाषन
मेटल लाजक धामा ॥ ४ ॥
सुखद सेजोपरि नागरि नागर
बइसल नव रति-साधे
प्रति अंग चुम्बन रस अनुमोदन
थर-थर काँपए राधे ॥ ६ ॥
मदन-सिंहासन करल अरोहन
मोहन रसिक सुजान ।
भय-गढ़ तोड़ल अलप समाधल
राखल सकल समान ॥ ८ ॥
कह कवि-सेखर गरुअ भूख पर
करु अल थोर अहार ।
अइसन दुहु मन तरफइ पुन पुन
बाढ़ल अधिक बिकार ॥१०॥

४—सरस परस=रसमय स्पर्श, आलिंगन ५—सेजोपरि—शय्या के ऊपर। करल अरोहन=आरोहण किया, चढ़े। ८—अलप समाधल=थोड़े से संतुष्ट किया। समान=मान-सहित। ९—गरुअ=अधिक।

(८६)

सुरत समापि सुतल बर नागर
पानि पयोधर आपी।
कनक संभु जनि पूजि पुजारी
धएल सरोरुह झाँपी ॥ २ ॥
सखि हे माधव, केलि विलासे
मालति रभि अलि ताहि अगोरखि
पुनु रति-रंग क आसे ॥ ४ ॥
बदन मेराए धएल मुख-मडल
कमल मिलल जनि चन्दा।
भमर चकोर दुअओ अरसाएल
पीबि अमिय-मकरन्दा ॥ ६ ॥
भनइ अमीकर सुनह मथुरपति
राधा-चरित अपारे।
राजा सिबसिंघ रूपनरायन
सुकवि भनथि कंठहारे ॥ ८ ॥

१—सुरत=काम-क्रीड़ा। समाति=समाप्त कर। सुतल=सो गया। पानि=हाथ। पयोधर=कुच। आपी=अर्पित कर, रख। २—कनक-संभु=सोने का महादेव। सरोरुह=कमल। ४—अलि=भौंरा। अगोरसि=अगोरे रहता है। ५ मेराए=मिलाकर धएल=रक्खा। बदन""मंडल=कृष्ण ने अपना मुख राधा के मुख से सटाकर रक्खा। ६—दुअओ=दोनों। अरसाएल=अलसा गये। अमीकर=शिवसिंह के मन्त्री। सुकवि-कंठहार=विद्यापति।

(८७)

हे हरि हे हरि सुनिए स्रवन भरि
अब न विलास क बेरा।
गगन नखत छल से अबेकत भेल
कोकिल करइछ फेरा॥ २॥
चकबा मोर सोर कए चुप भेल
उठिए मलिन भेल चंदा।
नगर क धेनु डगर कए संचर
कुसुदनि बस मकरंदा॥ ४॥
मुख केर पान सेहो रे मलिन भेल
अबसर भल नहिं मंदा।
बिद्यापति भन एहो न निक थिक
जग भरि करइछ निंदा॥ ६॥

१—स्रवन भरि=कान भरकर, अच्छी तरह। बिलास क बेरा=केलि का समय। २—गगन=आकाश। नखत=नक्षत्र, तारे। छल=थे। से=वह। अबेकत भेल=अव्यक्त हुए, छिप गये करइछ फेरा=फेरा कर रही है, इधर-उधर पुकार रही है। ३—सोर कए=शोरगुल करके। चुप भेल=चुप हो गये। ४—धेनु=गौ। डगर=राह। संचर=जा रही है। कुमुदिनि बस मकरंदा=कुमुदिनियों से मकरंद (पराग) का झरना (अब) बस (खतम) हो गया अर्थात् ये मुँद गई। मुख केर=मुख का। से हो=वह भी। ५—भल=भला, अच्छा। मन्दा=बुरा। निक=अच्छा, उचित। थिक=है।

(८८)

रयनि समापलि फुलल सरोज।
भमि भमि भमरी भमरा खोज॥ २॥
दीप मंद रुचि अम्बर रात।
जुगुतहि जानलि भए गेल परात॥ ४॥
अबहु तेजहु पहु मोहि न सोहाए।
पुनु दरसन होत मदन दोहाए॥ ६॥
नागर राख नारि मान-रंग।
हठ कएले पहु हो रस-भंग॥ ८॥
तत करिअए जत फाबए चोरि।
पर जन रस लए न रह अगोरि॥ १०॥

१—रयनि=रात। समापलि=बीत गई। सरोज=कमल। २—भ्रमरी घूम-घूमकर भ्रमर की खोज कर रही है—क्योंकि भ्रमरी को छोड़कर भ्रमर पराग लोभ से रात-भर कमलिनी-कोष में कैद था और अब उसके निकलने का समय आ गया है। ३—दीप=दीपक। मंद-रुचि=क्षीण कान्ति, मलिन। अम्बर=आकाश। रात=लाल हुआ। ४—जुगुतहि=युक्ति से ही। जानलि=जान गई। ५—तेजहु=छोड़ो। पहु=प्रभु, प्रीतम। ६—मदन दोहाए=कामदेव की दुहाई। ७—नागर=चतुर। मान-रंग=आदर और प्रेम। ९—फाबए=फबे। परजन=परपुरुष।

"The beauty of poetry is to paint the human life truly."

सखी-सम्भाषण

(८९)

आजु बिपरित धनि देखिअ तोय।
बुझए न पारिअ संसय मोय॥ २॥
तुअ मुख-मंडल पुनिम क चाँद।
का लागि भए गेल ऐसन छाँद॥ ४॥
नयन-जुगल भेल काजर बिथार।
अधर निरस इक कओन गमार॥ ६॥
पीनपयोधर नखरेख देल।
कनक-कुंभ जनि भगनहु भेल॥ ८॥
अंग विलेपन कुंकुम भार।
पीताम्बर धरु इथे कि बिचार॥ १०॥
सुजन रमनि तुहु कुलबति-बाद।
का सयँ भुजलि मरम क साध॥ १२॥
कामिनी कहिनी कह सम्बाद।
कह कवि-सेखर नह परमाद॥ १४॥

१—बिपरित=बदली हुई। ३ - पुनिम क=पूर्णिमा का। ४—का लागि=किस लिये। ऐसन छांद=इस आकार का अर्थात् ऐसा मलिन। ५—बिथार=बिस्तार, फैल जाना। ६ —अधर=ओष्ठ। ७ —पीन-पयोधर=पुष्ट कुच। ८—कनक-कुम्भ=सोने के घड़े (कुच)। भग-नहु=टूट जाना। कुंकुम भार=केशर से भरा हुआ अर्थात् रक्त वर्ण। १०—पीताम्बर धर=पीताम्बर धारण किये हुई हो—शरीर पीला पड़ गया है। इथे=इसका। कि=क्या। १२-का सयँ=किसके संग। भुंजलि=भोग किया। मरम क साध=हृदय की इच्छा। १४ परमाद=प्रमाद, शिकायत

(९०)

आजु देखलिसि कालि देखलिसि
आज कालि कत भेद।
सैसव बापुर सीमा छाड़ल
जऊबन बाँधल फेद॥ २॥
सुन्दर कनककेआ मुति गोरी।
दिन दिन चाँद-कला सयँ बाढ़लि
जऊबन सोभा तोरी॥ ४॥
बाल पयोधर गिरि क सहोदर
अनुपामिए अनुरागे।
कओन पुरुष कर परसए पाओल
जे तनु भितल परागे॥ ६॥
मन्द हास बंकिम कए दरसए
चंगिम भौंह बिभंगे।
काम बेआकुलि सामु न हेरए
आओल नयन-तरंगे॥ ८॥
बिद्यापति कबिवर यह गावए
नव जौबन नव कन्ता।
सिवसिंघ राजा एह रस जानए
मधुमति देवि सुकन्ता॥ १०॥

२—बापुर=बेचारा। फेद (अस्पष्ट)। ३—कनककेआ=कनकीया, स्वर्ण-निर्मिता। मुति=मूर्त्ति। ५—बाल पयोधर=छोटे-छोटे कुच। गिरि क सहोदर=पहाड़ के भाई (पहाड़ के ऐसे)।

(६१)

सामरि हे झामरि तोर देह।
की कह के सयँ लाएलि नेह ॥२॥
नींद भरल अछ लोचन तोर।
कोमल बदन कमल-रुचि चोर ॥४॥
निरस धुसर करु अधर पँवार।
कोन कुबुधि लुटु मदन-भंडार ॥६॥
कोन कुमति कुच नख-खत देल।
हाय-हाय सम्भु भगन भए गेल ॥८॥
दमन-लता सम तनु सुकुमार
फूटल बलय टुटल गुम हार ॥१०॥
केस कुसुम तोर, सिर क सिंदूर।
अलक तिलक हे सेउ गेल दूर ॥१२॥
भनइ विद्यापति रति अवसान।
राजा सिवसिंघ ई रस जान ॥१४॥

अनुपामिए=उपमा देते हैं।६—जितल परागे=पराग को जित लिया—पीला पड़ गया।७—चंगिम=सुन्दर।साम=सामने।

१—सामरि=श्यामा, सुंदरी। झामरि=मलिन। २—की=क्या। के सयँ=किससे। लाएलि=लाई। ३-अछ=है।४—कोमल मुख की कमल-सदृश आभा चोरी चली गई है—वह मंद पड़ गया है। ५-धुसर=धूसर, भूरा। पँवारि=प्रवाल मूँगा। ७ खत=क्षत, घाव। दमन लता=द्रोण पुष्प की लता। १०—बलय=हाथ की चूड़ी। गुम=ग्रीवा,गला। ११-कुसुम=फूल। १२—अलक=आलता, महावर। १४—अवसान=समाप्त।

(९२)

ए धनि पेसन कहथि मोय।
आजु जे कैसन देखिए तोय ॥२॥
नयन बयन आनहि भाँति।
कहइत कहिनि भूलसि पाँति ॥४॥
सुरँग अधर बिरँग भेलि।
का सयँ कामिनि कएल केलि ॥६।
बेकत भए गेल गुपुत काज।
अतए कक्र करह लाज ॥८॥
सघन जघन काँपए तोर।
मदन मथन कएल जोर ॥१०॥
गोर पयोधर रातुल गात।
नखर आँचर झाँपसि हात ॥१२॥
अमिय सागर दुहु से राहि।
मकुंद मातंग बिहर ताहि ॥१४
कह कवि-सेखर कि कर लाज।
कह न कहिनि सखिन समाज ॥१६॥

२—आनहि=अन्य ही। सुरँग=लाल। बिरंग=मलिन। ७—बेकत=व्यक्त, प्रकट। ८ अतए=अतएव, यहाँ। कक्र=किसकी। ९—सघन=पुष्ट। जघन=जाँघ। १ —१२—रातुल=लाल। गोरे=कुचों का रंग लाल हो गया है। नखर=नखों की रेखा १३ अमिअ=अमृत। राहि=राधा। १४—मुकुन्द-मातंग=कृष्ण रूपी हाथी।

(९३)

आजु देखिए सखि बड़ अनमनि सनि
बदन मलिन सन तोरा।
मन्द बचन तोहि कोन कहल अछि
से न कहिए किछु मोरा॥ २॥
आजुक रयनि सखि कठिन बितल अछि
कान्हु रभस कर मंदा।
गुन-अबगुन पहु एकओ न बुझलनि
राहु गरासल चंदा॥ ४॥
अधर सुखाएल केस अरुझाएल
घाम तिलक बहि गेला
बारि बिलासिनि केलि न जानथि
भाल अरुन उड़ि गेला॥ ६॥
भनइ विद्यापति सुन बर जौवति
ताहि करब किए बाधे।
जे किछु देल आँचर बाँधि लेल
सखि सभ कर उपहासे॥ ८॥

१—अनमनि=अनमनी, उदासीन। सनि=समान। बदन=मुख। २—मंद=बुरा। अछि=है। ३-रयनि=रात। रभस=कामक्रीड़ा। मंदा=बुरी तरह से। ४-पहु=प्रीतम। ५—अधर=ओष्ठ। घाम=पसीना। तिलक=टीका। ३- बारि=बालिका। भाल अरुन उड़ि गेला=मस्तक का सिंदूर-बिंदु नष्ट हो गया। ७—किए=कैसे। बाधे=बाधा देना, रोकना। ८— उपहासे=निंदा।

(१४)

न कर न कर सखि मोहि अनुरोध ।
की कहब हमहु तकर परबोध ॥ २ ॥
अलप बयस हम कानु से तरुना ।
अतिहु लाज डर अतिहू करुना ॥ ४ ।
लोभे निठुर हरि कएलन्हि केलि ।
की कहब जामिनि जत दुख देलि ॥ ६ ॥
हठ भेल रस मोर हरल गेआन ।
निवि-बँध तोड़ल कखन के जान ॥ ८ ॥
देल आलिंगन भुज-जुग चापि ।
तखन हृदय मझु उठल काँपि ॥ १० ॥
नयन वारि दरसाओलि रोइ ।
तबहु कान्हु उपसम नहि होइ ॥ १२ ॥
अधर सुरस मझु कएलन्हि मन्द ।
राहु गरासि निवि तेजल चन्द । १४ ॥
कुच-जुग देलन्हि नख-परहार ।
केहरि जनि गज-कुम्भ बिदार ॥१६॥
भनइ विद्यापति रसवति नारि ।
तुहु से चेतन लुबुध मुरारि ॥ १८ ।

२—तकर=उसका । ६—जामिनी=रात । जत=जितना । ८—कखन=कब । ९—भुज जुग=दोनों हाथ । चापि=दबाकर । १०—तखन=उस समय । १२—उपसम=शान्त, ठंढा । १३—अधर =ओष्ठ । १४—तेजल=छोड़ दिया । १५—नख-परहार=नखों की

(९५)

कि कहब हे सखि आजु क बिचार।
से सुपुरुष मोहे कएल सिंगार॥२॥
हँसि हँसि पहु आलिंगन देल।
मनमथ अंकुर कुसुमित भेल॥४॥
आँचर परसि पयोधर हेरु।
जनम पंगु जनि भेटल सुमेरु॥६॥
जब निवि-बंध खसाओल कान।
तोहर सपथ हम किछु जदि जान॥८॥
रति-चिन्हे जानल कठिन मुरारि।
तोहर पुने जीअलि हम नारि॥१०॥
कह कवि-रंजन सहज मधु राई।
न कह सुधामुखि गेल चतुराई॥१२॥

नोट। १७—केहरि=सिंह। गज-कुम्भ=हाथी का मस्तक। बिदार=फाड़ना। १८—चेतन=चतुरा। लबुध=लोभायमान।

२—कएल=किया। ३—पहु—प्रीतम। ४—मनमथ=कामदेव। कुसुमित=फूला हुआ। कामदेव रूपी अंकुर फूल उठा—काम का पूर्ण विकास हुआ। ५—आँचर=अंचल। पयोधर=कुच। हेरु=देखना। ६—पंगु=पगहीन। जनि=मानों। ७—खसाओल=(खोलकर) गिरा दिया। कान=कृष्ण। ९—रति के चिह्न से जाना कि कृष्ण बड़े कठोर-हृदय हैं। १०—पुने=पुण्य से। जीअलि=जीती बची। ११—सहज मधु राई=राई (राधा) स्वभावतः ही मधु (सदृश) है। १२—गेल चतुराई=चतुरता खतम हो गई।

(१६)

दृढ़ परिरम्भन पीड़लि मदने।
उबरि भएलहुँ सखि पुरब पुने॥ २॥
टुटि छिड़िआएल मोतिम हार।
सिंदुर लोटाएल सुरंग पँवार॥ ४॥
सुन्दर कुच जुग नख-खत भरी।
जनि गज-कुंभ बिदारल हरी॥ ६॥
अधर दसन देखि जिउ मोरा काँपे।
चाँद-मंडल जनि राहु क झाँपे॥ ८॥
समुद ऐसन निसि न पारिए ऊर।
कखन उगत मोर हित भए सूर॥ १०॥
मोयँ न जाएब सखि तन्हि पिया-ठाम।
बरु जिव मारि नड़ावथि काम॥ १२॥
भनई विद्यापति हेज भय लाज।
आग जारिये पुनु आगि क काज॥ १४॥

१—परिरम्भन = गाढ़ आलिंगन। पीड़लि = पीड़ित हुई। मदने = काम-द्वारा। २—उबरि भयलहुँ = मैं बच आई। पुने = पुण्य से। ३—छिड़िआएल = बिखर पड़ा। ४—सुरंग = लाल। पँवार = प्रवाल, मूँगा। ५—कुच = स्तन। जुग = दो। नख-खत = नखों द्वारा दिये गये घाव। ६—गज-कुम्भ = हाथी का मस्तक। बिदारल = विदीर्ण किया चीर-फाड़ डाला। हरि = सिंह। ७—ओष्ठ पर दाँतों का आक्रमण करना देख मेरे प्राण काँप उठे। राहु क झाँपे = राहु का आक्रमण। ९—समुद्र, सागर। ऐसन = समान। ऊर = ओर, सीमा।

(९७)

कि कहब हे सखि रातु क बात।
मानिक पड़ल कुबानिक हात ॥२॥
काँच कंचन न जानए मूल।
गुंजा रतन करए समतूल ॥४॥
जे किछु कभु नहि कला रस जान।
नीर खीर दुहू करए समान ॥६॥
तन्हि सौं कहाँ पिरित रसाल।
बानर-कंठ कि मोतिम माल ॥८॥
भनइ बिद्यापति इह रस जान।
बानर-मुँह की सोभए पान ॥१०॥

१०—उगत=उगेगा। सूर=सूर्य। ११—मोंय=में। तन्हि=उस। १२—बरु=भले ही। नड़ावथी=छोड़ दे। १४—आग जलाती है, किन्तु पुनः आग ही की जरूरत होती है।

१ कि कहब=क्या कहूँ। रातु क=रात की। २—मानिक=माणिक्य, मणि। पड़ल=पड़ गया। कुबानिक=अपटु व्यापारी। हात=हाथ। ३—कंचन=सोना। मूल=मूल्य, कीमत। ४—गुंजा=एक प्रकार का लाल फल जो जंगल में विशेष होता है, बनवासी इसकी माला बनाते हैं, घुँघची। रतन=रत्न, मणि। समतूल=समान। ६—नीर=पानी। खीर=क्षीर=दूध। ७— तन्हि सौं=इनसे। रसाल=रसमय। ८ बानर=बंदर। कि=क्या। ९—इह=यह। १०—की=क्या। सोभए=शोभता है।

(६८)

पहिलुक परिचय, पेम क संचय
रजनी आध समाजे ।
सकल कला-रस सँभरि न भेले
वैरिन भेलि मोरि लाजे ॥२॥
साए साए अनुसए रहलि वहुते ।
तन्हिहि सुवन्धु के कहिए पठाइअ
जौं भमरा होअ दूते ॥४॥
खनहि चीर धर खनहि चिकुर गह
करए चाह कुच भंगे ।
एकलि नारि हम कत अनुरंजव
एकहि वेरि सब संगे ॥६॥

१—पहिलुक=प्रथम बार का । परिचय=जान-पहचान । पेम क=प्रेम का । रजनी=रात । पहली बार का परिचय था—प्रथम-प्रथम भेंट हुई थी, अतः प्रेमके संचय में ही—प्रेमोत्पत्ति में ही—आधी रात बीत गई । २—सभरि न भेले=सँभलकर न हुआ—अच्छी तरह नहीं हुआ । भेलि=हुई । ३—साए=सखि । अनुसए=अनुताप, पछतावा । रहलि=रह गया । ४—तन्हिहि=उनके । कहिए पठाइअ=बोल पठाना बुला भेजना । जौं=जिस प्रकार । भमरा=भ्रमर=भौंरा । ५—खनहि=क्षण । चीर=साड़ी । चिकुर=केश । गह=पकड़ना । कुच-भंगे=कुच को विदीर्ण करना । ६—एकलि=अकेली । कत=कितना । अनुरंजब—अनुरंजन करूँगी, प्रेम निबाहूँगी । वेरि=बार ।

तखन बिनय जत से सब कहब कत
कहए चाइल कर जोली ।
नव रस-रंग भंग भए गेल सखि
ओर धरि भेल न बोली ॥ ८ ॥
भनइ बिद्यापति सुनु बरजौबति
पहु अभिमत अभिमाने ।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ बिरमाने ॥ १० ॥

७-तखन = उस समय । जत = जितना । से = वह । कहब = कहूँगी । कत = कितना । कहए चाहल = कहना चाहा । कर-जोली = हाथ जोड़कर । ८—नव = नवीन, नया । भंग भए गेल = भग हो गया । ओर=अन्त । ओर धरि भेल न बोली = अन्त तक कह भी न सके—साफ-साफ बात भी नहीं कह सके । ७—८—इस पद का तात्पर्य यह है कि समागम के समय श्रीकृष्ण यह देखकर कि राधा उनकी प्रत्येक चेष्टा का यथोचित समाधान नहीं करती, दोनों हाथ जोड़कर उस समय उसकी प्रार्थना करने लगे । यों, ऐन मौके पर दोनों हाथ प्रार्थना के लिये जोड़े जाने के कारण रति रंग में भंग हो गया । फिर तो कृष्ण के मुख मे बोली तक न निकली । इस पद का यथार्थ मर्म विदग्ध पाठक ही समझ सकेंगे । ९—पहु = प्रभु, प्रीतम । अभिमत = युक्तियुक्त । १०—बिरमाने = विरमण, प्रीतम, पति ।

कौतुक

(६६)

उठ उठ माधव कि सुतसि मंद ।
गहन लाग देखु पुनिम क चंद ॥ २ ॥
हार-रोमावलि जमुना-गंग ।
त्रिबलि-त्रिबेनी बिप्र-अनंग ॥ ४ ॥
सिंदुर-तिलक तरनि सम भास ।
धूसर मुख-ससि नहि परगास ॥ ६ ॥
एहन समय पूजह पँचबान ।
होअ उगरास देह रतिदान ॥ ८ ॥
पिक मधुकर पुर कहइत बोल ।
अलपओ अवसर दान अतोल ॥ १० ॥
बिद्यापति कबि एहो रस भान ।
राए सिवसिंघ सब रस क निधान ॥१२॥

१—मंद=आलस्य । २—गहन=ग्रहण । ३, ४—रोमावलि= कमर के निकट के रोओं की पंक्ति । त्रिवलि=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ । अनंग=कामदेव । हार और रोमावली क्रमशः गंगा और यमुना है, त्रिवली ही त्रिवेणी है और कामदेव ही विप्र है । ५—सिंदुर-तिलक=सिंदूर का टीका । तरनि=सूर्य । भास=प्रकाशित । ६—धूसर=धूमिल, प्रभाहीन । परगास=प्रकाश । ७—एहन=ऐसा । पँचबान=कामदेव । ८—होअ उगरास=उगरास होगा, ग्रहण छूटेगा । देह रतिदान=रति का दान दो । ९—पिक=कोयल । मधुकर= भौंरा । पुर कहइत बोल=गाँव में कहता फिरता है । १०—अल-पओ=थोड़ा ही । अतोल=अनन्त ।

(१८०)

त्रिवलि तरंगिनि पुर दुग्गम जानि
मनमथ पत्र पठाउ।
जोबन-दलपति तोहि समर लागि
ऋतुपति दूत पठाउ ॥३॥
माधव, अब, देखु साजिए बाला।
तसु सैनव तोहें जे संतापल
से सब आओत पाला ॥४॥
कुण्डल चक्र तिलक अंकुस कए
चँदन कवच अभिरामा।
नयन कमान कटाख बान दए
साजि रहल अछि बामा ॥६॥
सुन्दरि साजि खेत चलि आइलि
विद्यापति कवि भाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमाने ॥८॥

१—त्रिवलि=पेट में पड़ी तीन रेखाएँ । तरंगिनी=नदी। त्रिवली रूपी नदी के तट पर (बसे हुए) नगर को दुर्गम जान कामदेव-रूपी राजा ने (उसे विजय करने को) पत्र भेजा। २—दलपति=सेनापति। समर लागि=युद्ध के लिये। ऋतुपति=वसंत। ४—तसु=उसके। तोहे=तुमसे। संतापल=दुःख दिया। ५—कुंडल चक्र=कुंडल (कर्णफूल) चक्र है। तिलक-अंकुस=टीका ही अंकुश है। चंदन कवच=चंदन का लेप ही शरीर त्राण है। ६—कमान=धनुष। ७—खेत=युद्धभूमि।

(१०१)

अम्बर बदन झपावह गोरी।
राज सुनइ छिअ चाँद क चोरी ॥२॥
घर घर पहरि गेल अछि जोहि।
अबहि दूखन लागत तोंहि ॥४॥
कतए नुकाएब चाँद क चोर।
जतहि नुकाएब ततहि उजोर ॥६॥
हास-सुधारस न कर उजोर।
बनिक-धनिक धन बोलब मोर ॥८॥
अधर क सीम दसन कर जोति।
सिंदूर क सीम बैसाओलि मोति ॥१०॥
भनइ बिद्यापति होह निरसंक।
चाँदहु काँ थिक भेद कलंक ॥१२

१—अम्बर=वस्त्र। बदन=मुख। झपावह=ढाँक लो। २—चाँद क=चन्द्रमा को। ३—पहरि=पहरी पहरुआ। गेल छल जोहि=ढूँढ़ गया है। ४—दूखन=दोष, कलंक। ५—कतए=कहाँ। नुकाएब=छिपेगा। ६—उजोर=प्रकाश। ७,१०—हास=हँसी। सुधारस=अमृत का रस। अधर क सीम=ओठ के निकट। दसन=दाँत। बैसाओलि=बैठाया। हँसकर प्रकाश मत करो, धनी व्यापारी कहेंगे कि ये मेरे ही धन हैं (क्योंकि) ओठ के निकट दाँत प्रकाश फैला रहे हैं (जो मुक्ता के समान हैं) और सिंदूर-बिन्दु मोती से चमक रहे हैं। ११—होह=होओ। १२—थिक=है। चाँद (और तुम्हारे मुख) में भेद है, क्योंकि उसमें कलंक है।

(१०२)

लोलुअ वदन-सिरी अछि धनि तोरि।
जनु लागिह तोहि चाँद क चोरि॥२॥
दरसि हलह, जनु हेरह राहु।
चाँद भरम मुख गरसत राहु॥४॥
धवल नयन तोर जनि तरुआर।
तीख तरल तेहि कटाख क धार॥६॥
निरखि निहारि फास गुन जोलि।
बाँधि हलब तोहि खंजन बोलि॥८॥
सागर-सार चोराओल चंद।
ता लागि राहु करए बड़ दंद॥१०॥
भनइ विद्यापति होउ निरसंक।
चाँदहु की किछु लागु कलंक॥१२॥

लोलुअ=आन्दोलित, चंचल। वदन-सिरी=वदनश्री, मुख की शोभा। अछि=अस्ति, है। धनि=स्त्री। २—जनु=नहीं। ३,४—दरसि हलह=देखकर (झटपट) हट जाओ। 'शृंगार-तिलक' में यों ही लिखा है—"झटिति प्रविश गेहे मा बहिस्तिष्ठ कान्ते, ग्रहण-समय-वेला वर्त्तते शीतरश्मेः। तव मुखमकलंकं वीक्ष्य नूनं स राहुः। ग्रसति तव मुखेन्दुं पूर्णचन्द्रं विहाय॥' ५—धवल=उजला। जनि=ऐसा। तरुआर=तलवार। ६ ६—तीख=तीक्ष्ण। कटाख क=कटाक्ष की। ७ ८—निरखि=नीचे की ओर फास गुन=गुण रूपी फाँस में। जोलि=जोड़कर, बांधकर। हलब=ले जायगा। बोलि=समझकर। ९—सागर-सार=अमृत। १०—दंद=द्वन्द्व। जोर=जुल्म।

(१०३)

साँझ क बेरि उगल नव ससधर
भरम विदित सबिताहु ।
कुंडल चक्र तरास नुकाएल
दूर भेल छेरथि राहु ॥२॥
जनु बइससि रे बदन हाथ लाई ।
तुअ मुख चंगिम अधिक चपल भेल
कति खन धरब नुकाई ॥४॥
रत्तोपल जनि कमल बइसाओल
नील नलिनि दल तहु ।
तिलक कुसुम तहु माझ देखि कहु
भमर आबथि लहु लहु ॥६॥
पानी-पलब-गत अधर बिम्ब-रम
दसन दाड़िम बिज तोरे ।
कीर दूर भेल पास न आएब
भौंह धनुहि के भोरे ॥८॥

१—संध्या के समय नवीन चन्द का उदय हुआ, जिससे सूर्य का भी भ्रम हुआ—मतलब यह है, सूर्यास्त हो रहा था, उसी समय नायिका घर से निकली । सूर्य अभी पूर्णत: अस्त नहीं हुए थे, इन्हें आश्चर्य हुआ कि मेरे अस्त होने के पहले ही यह कौन सा नवीन चन्द्रमा उदित हुआ । २ कुंडल-चक्र=कुंडल (कर्णफूल) रूपी चक्र । नुकाएल=छिपा हुआ । ३—बदन हाथ लाई=मुख हाथ पर रखकर । ४—चंगिम=सुन्दर । कति खन=कबतक ।

(१०४)

बड़ कौसलि तुअ राधे।
किनल कन्हाई लोचन आधे ॥२॥
ऋतुपति हटवइ नहि परमादी।
मनमथ मधथ उचित मूलवादी ॥४॥
द्विज पिक लेखक मसि मकरंदा।
काँप भमर-पद साखी चंदा ॥६॥
बहि रति रंग लिखापन माने।
श्री शिवसिंघ सरस-कवि भाने ॥८॥

५—रक्तोपल=लाल कमल (हाथ)। कमल= (मुख)। नील नलिनी=नील कमल (आँखें)। लहु=वहाँ भी। ६—लहु लहु=धीरे धीरे। ७—पानि-पलव गत=हाथ पल्लव के समान हैं। अधर=ओष्ठ। बिम्ब रत=बिम्ब फल के समान। दाड़िम बिज=अनार के दाने। ८—कीर=सुग्गा। भोरे=भ्रम में।

१—कौसलि=चुचतुरा। किनल=क्रय किया, खरीदा। २—लोचन आधे=आधी आँख से, एक कटाक्ष से। ऋतुपति=वसन्त। हटवए=व्यापारी। नहि परमादी=प्रमादी नहीं, बुद्धिमान्। ४—मनमथ=कामदेव। मधथ=मध्यस्थ, दलाल। मूल=मूल्य। वादी=कहनेवाला। ५—द्विज-पिक लेखक=कोयल-रूपी ब्राम्हण लेखक हैं। मसि=रोशनाई। मकरन्दा=पराग। ६—काँप=काढ़े का कमल। भमर-पद=भौंरे का पैर। साखी=साक्षी, गवाह। बहि=बही, हिसाब की पुस्तक। रति-रंग=कमः बिलास। लिखापन माने=मान लिखा गया। इस पद्य का

(१०६)

कउडि़ पठाओले पाव नहि घोर।
घीव ऊघार माँग मति भोर ॥२॥

वास न पावए माँग उपाधि।
लोभ क रासि पुरुष थीक जाति ॥४॥

कि कहब आज कि कौतुक भेल।
अथदहि कान्हक गौरव गेल ॥६॥

आएल बइसल पाव पोआर।
सेज क कहिनी पूछए बिचार ॥८॥

ओछाओन खँड़तरि पलिया चाइ।
आओर कहब कत अहिरिनि-नाइ ॥१०॥

भनइ विद्यापति पहु गुनमंत।
सिरि सिवसिंघ लखिमा देइ कंत ॥१२॥

७—मनसिज=कामदेव। मदजल=हाथी के मस्तक से चूनेवाला पानी। उमताए=पागल हो। पिअतम-आंकुस=प्रीतम रुपी अंकुस। ९—सुमत=मन में आ जाय १०—मुसइत=(मूष् धातु) खोलने से। मनिहसि=मना करना। १२—महत=मत्त, पायल।

१—कउड़ी=कौड़ी (यहाँ मूल्य)। पठाओले=भेजने पर भी। घोर=मट्ठा। २—घीव=घी। मतिभोर=मूर्ख। ३—वास=रहने की जगह। उपाधि=खाद्य-सामग्री। लोभ क रासि=लोभ का खजाना। थिक=है। ६—अथदहि=अस्थान पर, बुरी जगह। ७—पोआर=पवाल, पुआल। ८—ओछाअन=ओछाओन=बिछावन। खँड़तरि=जीर्ण शीर्ण चटाई। पलिया=पलंग।

अभिसार

(१०७)

धनि धनि चलु अभिसार।
सुभ दिन आजु राजपन मनमथ
पाओब कि रीति बिथार ॥२॥
गुरुजन नयन अंध करि आओब
बांधव तिमिर बिसेख।
तुअ उर फुरत बाम कुच लोचन
कहू मंगल करि लेख ॥४॥
कुलवति धरम करम भय अब सब
गुरु-मंदिर चलु राखि।
प्रियतम संग रंग करु थिर दिन
फलत मनोरथ साखि ॥६॥
नीरद बिजुरि बिजुरि सयँ नीरद
किंकिन गरजन जान।
हरखए बरखए फुल सब साखी
सिखि-कुल दुहु गुन गान ॥८॥

१—अभिसार=गुप्त मिलन। २—राजपन मनमथ=काम का राज्य है। बिथार=विस्तार। ३—गुरुजन=बड़े लोग बांधव=बन्धु, मित्र। तिमिर=अन्धकार। ४—फुरत=फड़कना। उर=हृदय। बाम=बायें। लेख=समझो। ६—साखि=शाखी, वृक्ष। ७—नीरद=मेघ। सयँ=संग में। मेघ बिजली के साथ रहता है और बिजली मेघ के साथ (यों ही राधा कृष्ण के साथ और कृष्ण राधा के साथ)। ८—सिकुखिल=मोर।

(१०८)

कह कह सुन्दरि न कर बेआज।
देखिअ आज अपुरब साज॥ २॥

मृगमद पंक करसि अँगराग।
कोन नागर परिनत होअ भाग॥४॥

पुनु-पुनु चटकि पछिम दिसि हेरि।
कखन आएत दिन कत अछि बेरि॥ ६॥

नूपुर ऊपर कससि थीर।
दृढ़ कए पहिरसि तम सम चीर॥८॥

उठसि बिहँसि हँसि तेजिए सार।
तोर मन भाव कधन अँधिआर॥ १०॥

भनइ बिद्यापति सुनु बर नारि।
धैरज धर मन मिलत मुरारि॥ १२॥

१—बेआज=बहाना। ३—मृगमद पंक=कस्तूरी का लेप (जो काली है)। ४—कोन=कौन। किस नायक का भाग्य परिणत हुआ=किसका भाग्योदय हुआ है। ५—हेरि=देखना। ६—कखन=कब। कत=कितना। अछि—अस्ति=है। बेरि=समय। ७—नूपुर को पैर के ऊपरी भाग में कसकर स्थिर करती हो जिसमें चलने पर शब्द न हो। ८—तम-सम=अन्धकार के समान काला। ९—तेजिए सार=सार त्यागकर, अकारण ही। १०—तोर=तुम्हारे। भाव=अच्छा लगता है। अँधियार=अन्धकार।

(१०६)

माधव, धनि आएलि कत भाँति।
प्रेम-हेम परखाओल कसौटी
भादव कुहु-तिथि राति ॥ २ ॥
गगन गरज घन तहिँ न गन मन
कुलिस न कर मुख बंका।
तिमिर-अंजन अलखार धोर जनि
तें उपजावति संका ॥ ४ ॥
भाग भुजग सिर कर अभिनय, कर-
झाँपल फनिमनि दीप।
जानि सखजन वन से देई चुम्बन
तें तुअ मिलन समीप ॥ ६ ॥
नारि-रतन धनि नागर अजमनि
रस गुन पहिरल हार।
गोविंद चरन मन कह कविरंजन
सफल भेल अभिसार ॥ ८ ॥

—हेम=सोना। कसौटी भादव कुहु-तिथि राति=भादों की अमावस्य की रात रूपी-कसौटी पर। ३—गगन=आकाश। कुलिस=वज्र, ठनका। मुख बंका=मुख टेढ़ा करना, विमुख करना। ४—तिमिर-अंजन=अन्धकार-रूपी अंजन का। जनि=नहीं। ५—भागते हुए सर्प के सिर पर मानों नृत्य करती है और सर्प के मणि को हाथ से ढाँक लेती है। ६—इस भाव का पद गीतगोविन्द में यों है—श्लिष्यति चुम्बति जलधर कल्पम्, हरिरुपगत इति तिमिर मन-

(११७)

चन्दा जनि उग आजुक राति ।
पिआ के लिखिअ पठाओब पाँति ॥ २ ॥
साओन सयँ हम करब पिरीत ।
जत अभिमत अभिसार क रीत ॥ ४ ॥
अथवा राहु बुझाएब हँसी ।
पिबि जनि उगिलह सीतल ससी ॥ ६ ॥
कोटि रतन जलधर तोहें लेह ।
आजुक रयनि घन तम कए देह ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति सुभ अभिसार ।
भल जन करथि पर क उपकार ॥ १० ॥

रूपम् ॥ ७—धनि = बाला (राधे) । नागर=नायक (कृष्ण) ८—कविरजन=विद्यापति का उपनाम ।

१—जनि=नहीं । उग=उदय हो । पठाओब=पठाऊँगी, भेजूँगी । पाँति=पत्र । ३—साओन सयँ=सावन मास से । ४—अभिमत=मनोनीत । जो अभिसार करने की निश्चित रीति है—निश्चित काल है । ६—पिबि=पीकर । उगिलह=उगल दो । ससी=चन्द्रमा । ७—जलधर=मेघ । लेह=लो । ८—रयनि=रजनी,रात । घन=घना, निबिड़ । तम=अंधकार । देह=दो । १०—करथि=करते हैं । पर क=दूसरे का ।

Poetry is an emotion realized in tranquillity.
—Wordsworth

(१११)

आजु मोयँ जाएब हरि-समागम
कत मनोरथ भेल ।
घर गुरुजन निंद निरूपइत
चन्द उदय देल ॥२॥
चन्दा भलि नहि तुअ रीति ।
एहि लगि तोहें कलंक लागल
किछु न गुनह भीति ॥४॥
जगत नागरि मुख जितल जब
गगन गेला हारि ।
तइओ राहु गरास पड़ला
देब तोह कि गारि ॥६॥
एक मास थिहि तोहि सिरिजए
दए कलअओ बल ।
दोसर दिन पुनु पुर न रहसी
एहो पाप क फल ॥८॥
भनइ विद्यापति सुन तोयँ जुवती
न कर चाँद क साति ।
दिना सोरह चाँद क आइत
ताहि पर भलि राति ॥१०॥

२—निंद निरूपइत=नींद का निरूपण करते, सोते न-सोते । ४—भीति=डर । ५—संसार से जब स्त्रियों ने तुम्हारे मुख को जीत लिया—अपनी मुखश्री से तुम्हें पराजित किया—तब तुम हारकर

(११२)

गगन अब घन मेह दारुन, सघन दामिनि झलकई
कुलिस पातन सबद झनझन, पवन खरतर बलगई ॥२॥
सजनी, आजु दुर्दिन भेल।
कंत हमर नितांत अगुसरि सँकेत-कुंजहि गेल ॥४॥
तरल जलधर बरिख झर झर, गरज घन घनघोर।
साम नागर एकले कइसन पंथ हेरए मोर ॥६॥
सुमिरि मझु तनु अबस भेल जनि अथिर थर थर काँप।
इ मझु गुरुजन नयन दारुन, घोर तिमिरहि झाँप ॥८॥
तुरित चल अब किए बिचारह, जीवन मझु अगुसार।
कबीसेखर बचन अभिसर, किए से बिघिन-बिथार ॥१०॥

आकाश में भाग गये। ७—पुर=पूर्ण। ९—लाति=शास्ति, निन्दा। १०—आइति=आयत्त, सीमा। ताहि पर=उसके बाद।

१—गगन=आकाश। घन=घना, निबिड़। दामिनि=बिजली। २—कुलिस-पातन=वज्र का गिरना, उनके की ठनक। खरतर बलगई=अत्यन्त तेजी से सनसनाती हुई बहती है। ४—अगुसरि=अग्रसर होकर, आगे जाकर। संकेत=गुप्त मिलन-स्थान। ५—तरल=अस्थिर, चलायमान। जलधर=मेघ। बरिख=बरसता है। ६—साम=श्याम, श्रीकृष्ण। एकले=अकेले। ७—मझु=मेरा। अथिर=चंचल। ८—ई=यह। गुरुजन=बड़े लोग, श्रेष्ठ पुरुष। तिमिरहि=अन्धकार। ९—तुरति=तुरत। किए=क्या। बिचारतो=हो। मझु=मझ, में। अगुसार=अग्रसर होओ, बढ़ो। १०—अभिसर=अभिसार करो। बिथार=बिस्तार।

(११२)

रयनि काजर बम भीम भुजंगम
कुलिस परए दुरबार।
गरज तरज मन रोस बरिस घन
संसअ पड़ अभिसार ॥ २ ॥
सजनी, बचन छड़इत मोहि लाज।
होएत से होओ बरु सब हम अंगिकरु
साहस मन देल आज ॥ ४ ॥
अपन अहित लेख कहइत परतेख
हृदय न पारिअ ओर।
चाँद हरिन वह राहु कवल सह
प्रेम पराभव थोर ॥६॥

१—रयनि=रात। बम=वमन करता है। रयनि काजर बम=रात अन्धकारपूर्ण है। भीम=विशाल, भयानक। भुजंगम=सर्प। कुलिस=वज्र, ठनका। दुरबार=जिससे बचना मुश्किल है। २—रोस=रोष, क्रोध। ४—होएत से होओ बरु=जो होना होगा, वह भले ही हो जाय। अंगिकरु=अंगीकार करूंगी। ५—अहित=बुराई। लेख=समझना। परतेख=प्रत्यक्ष। ओर=सीमा, अन्त। ६—हरिन=चन्द्रमा में जो हरिण के आकार का काला धब्बा है। वह=धारण करना। कवल=कौर, ग्रास। सह=साथ, सहता है। पराभव=हार। राहु का ग्रास हो जाने पर भी चन्द्रमा हरिण को धारण किये रहता है, प्रेम में पराजय है ही नहीं—किसी विघ्न-बाधा से प्रेम का

चरन बेढ़िल फनि हित मानलि धनि
नेपुर न करए रोर।
सुमुखि पुछओं तोहि सरुप कहसि मोहि
सिनेह क कब दुर ओर ॥८॥
ठामहि रहिअ घुमि प स चिन्हिअ भूमि
दिग मग उपजु संदेह।
हरि हरि सिव सिव तावे जाइअ जिव
जावे न उपजु सिनेह ॥१०॥
भनइ बिद्यापति सुनह सुचेतनि
गमन न करह बिलम्ब।
राजा सिबसिंघ रूपनरायन
सकल कला अवलम्ब ॥११॥

नाश नहीं हो सकता। ७—बेढ़लि=लपेटना घेरना। फनि=सर्प। रोर=शब्द झंकार। पैर में सर्प लिपट जाने पर बाला ने उसे अपना हित समझा, क्योंकि (सर्प लिपट जाने से) नूपुर झंकार नहीं करते थे। ८—सरुप=सत्य। ओर=अन्त। सुन्दरी, मैं तुमसे पुछती हूँ, सच-सच बताओ, प्रेम की अन्तिम सीमा कहाँ पर है? ९—दिग=दिशा। घूम घूमकर एक ही स्थान पर चली आती हूँ। स्पर्श से ही पृथ्वी जानी जाती है (अन्धकार के कारण दीख नहीं पड़ती)। दिशा और राह के विषय में सन्देह है। मालूम होता है कि दिग्भ्रम हो गया है, जिससे मैं राह भूल गई हूँ। १०—तावे=तबतक। जावे=जबतक। ११—सुचेतनी=बुद्धिमती, सुचतुरा। गमन=जाने में।

(११४)

सखि हे, आज जाएब मोहि।
घर गुरुजन डर न मानब
बचन चूकब नहि ॥ २ ॥
चानन आनि आनि अंग लेपब।
भूषन कए गजमोति।
अंजन बिहुन लोचन - जुगुल
धरत धवल जोति ॥ ४ ॥
धवल बसन तनु झपाएब
गमन करब मंदा।
जइओ सगर गगन ऊगत
सहस सहस चंदा ॥ ६ ॥
न हम काहुक डीठि निवारबि
न हम करब ओत।
अधिक चोरी पर सयँ करिअ
एहे सिनेह क सोत ॥ ८ ॥
भन बिद्यापति सुनह जुबती
साहस सफल काज।
बूझ सिबसिंघ इ रस रसमय
सोरम देबि समाज ॥ १० ॥

१—चानन = चंदन । आनि = लाकर । ४—बिहुन = रहित । धवल-उजला ५—मंदा = धीरे-धीरे । ६-सगर = समग्र = समूचे । गगन = आकाश । ७-निवारबि = बचा दूँगी । ओत = ओट । ८—सोत = स्रोत।

(११५)

प्रथम अउवन नव गरुअ मनोभव
छोटि मधुमास रजनि।
जागे गुरुजन गेह रास्रए चाह नेह
संसअ पड़ल सजनि॥ २॥
नलिनी दल निर चित न रहए थिर
तत घर तत हो बहार।
बिहि मोर बड़ मंदा उगि जनु आए चंदा
सुति उठि गगन निहार॥ ४॥
पथहु पथिक संका पय पय धए पंका
कि करति ओ नव तरुनी
चलए चाह धसि पुनु पड़ खसि खसि
जाल क छेकलि हरिनी॥ ६॥
साए साए कओन बेदन तसु जाने।
निकुज बनहि हरि जाइति कओन परि
अनुखन हन पंचबाने॥ ८॥
बिद्यापति भन की करत गुरुजन
नींद निरूपन लागी।
नयन नीर भरि धीर झपावए
रयनि गमावए जागी॥ १०॥

१—मधुमास=चैत्र। २—नलिनी दल निर=कमल के पत्ते पर के पानी क समान। बहार=बाहर। ४—सुति=सोकर। ५ पय=पग। पंका=कीचड़ ६—जाल क छेकलि—जाल में घिरी हुई। ७ साए=सखी। ८—हन=मारना।

अवहु राजपथ पुरजन जागि।
चाँद-किरन नभमंडल लागि॥ २॥
सहए न पारए नव नव नेह।
हरि हरि सुन्दरि पड़लि संदेह॥ ४॥

कामिनि कएल कतहु परकार।
पुरुष क बेस कएल अभिसार॥ ६॥
धम्मिल लोल झोंट कए बंध।
पहिरल बसन आन करि छन्द॥ ८॥

अम्बर कुच नहि सम्बरु भेल।
बाजन-जंत्र हृदय करि लेल॥१०॥
अइसए मिलति घनि कुंज क माझ।
हेरि न चीन्हइ नागर राज॥१२॥

हेरइत माधव पड़लन्हि धंद।
परसइत भाँगल हृदय क दंद॥१४।
भनइ विद्यापति सुन बर नारि।
दूध-समुद्र जनि राज-मरालि॥१६॥

३—सहए न पारए=सह नहीं सकती। नव=नया। ५—परकार=प्रकार, उपाय। ७—धम्मिल=केश, वेणी। लोल=चञ्चल। झोंट=झोंटा, खोंपा, जूड़ा। चंचल वेणी को (साधुओं के ऐसा) जूड़े के समान बाँधा। ८—आन छन्द करि=दूसरी तरह से। ९—अम्बर=कपड़ा। सम्बरु=संभलना। किन्तु कपड़े से ढके जाने पर भी कुच सँभल न सके—छिप न सके। १०—बाजन-जन्त्र=सितार। हृदय करि

(११७)

चरन नूपुर उपर सारी।
मुखर मेखल कर निवारी ॥ २ ॥
अम्बर सामर देह झपाई।
चलहु तिमिर पथ समाई ॥४॥
समुद कुसुम रभस रसी।
अवहि उगत कुगत ससी ॥६॥
आएल चाहिअ समुखि तोरा।
पिसुन-लोचन भम चकोरा ॥८॥
अलक तिलक न कर राधे।
अंग विलेपन करह बाधे ॥१०॥
कुसुमित कानन कालिन्दि- तीर।
तहाँ चलि आओल गोकुल वीर। १२॥
तयँ अनुरागिनि ओ अनुरागी।
दूषन लागत भूषन लागी ॥१४॥
भनइ विद्यापति सरस कवि।
नृपति-कुल-सरोरुह रवि ॥१६॥

लेल=हृदय पर रख लिया। १३--धंद=संदेह। १४--दंद=द्वन्द्व, दुविधा। १६—समुद=समुद्र। राजसरालि—राजहंसिनी।

१, २--पैर के नूपुर को ऊपर चढ़ा लो, और मुखरा (शब्द करने वाली) करधनी को हाथ से निवारण करो। ३--अम्बर=वस्त्र। तिमिर-पथ=अन्धकार पूर्ण राह। समाई=घुसकर। ५--समुद=समूद्र। कुसुम=फूल। रभस=आनन्द। रसी=रस-युक्त। ६--कुगत=जिसका

(११८)

जागल घर पर नींद भेल भोर।
सेज तेजल उठि नंद-किशोर ॥२॥

सघन गगन हेरि नखतर पाँति।
अवधि न पाओल छूटल राति ॥४॥

जलधर रुचिहर सामर काँति।
जुबति-मोहन-बेस धरु कत भाँति ॥६॥

धनि अनुरागिनि जानि सुजान।
घोर अँधियारे कएल पयान ॥८॥

पर-नारी पिरित क ऐसन रीति।
चलल निभृत पथ न मानय भीति ॥१०॥

कुसुमित कानन कालिन्दि-तीर।
तहँ चलि आएल गोकुल बीर ॥१२॥

कविसेखर पथ मीलल जाई।
आएल नागर भेंटल राई ॥१४॥

आगमन अशुभ हो। सखी=चन्द्रमा। ८ पिसुन—दुष्ट। भम=भ्रमण कर रहे हैं। ९—अलक तिलक=महावर और टीका। १०—अंग विलेपन= शरीर में अंगराग लगाना। करह बाधे=बाधा कर दो, मत लगाओ।

१—घर पर जो जगे थे, सभी सो गये। ३-नखतर=नक्षत्र, तारे। ४—रात कितनी बीती, इसका अन्दाज न पाया। ५—जलधर= मेघ। रुचि-हर शोभा हरनेवाला। ६—जुबति मोहन=युवतियों को मोहनेवाला। १० निभृत=सुनसान पूर्ण, अन्धकार। १४—राई=राधा।

(११९)

तपन क ताप तपत भेल महि तल
तातल बालू दहन समान।
चढ़ल मनो-रथ भामिनि चलु पथ
ताप तपत नहिं जान ॥२॥
प्रेम क गति दुरबार।
नविन जौबनि धनि चरन कमल जिनि
तइओ कएल अभिसार।४॥
कुल-गुन-गौरव सति जस-अपजस
तृन करि न मानए राधे।
मन मधि मदन महोदधि उछलल
बूड़ल कुल-मरजादे ।६॥
कत कत बिघिन जितल अनुरागिनि
साधल मनमथ-तंत।
गुरुजन-नयन निबारइत सुबदनि
पाठ करए मन मंत।८॥
केलि कलावति कुसुम-सरिस-कुल
कौसल करल पयान।
जत छल मनोरथ पूरल मनमनमथ
इह कविसेखर भान ॥१०॥

१—तपन क=सूर्य की। ताप=गर्मी। तपत=तप्त, जलता हुआ। तातल=गर्म हो गया। दहन=अग्नि। २—मनो-रथ=इच्छा-रूपी रथ। भामिनी=स्त्री। ३—दुरबार=प्रबल। ४—जिनि=

निअ मंदिर सयँ पग दुइ चारि।
घन घन बरिस मही भर बारि॥ २॥
पथ पीछर वड़ गरुअ नितम्ब।
खसु कत बेरि नहीं अवलम्ब॥ ४॥
बिजुरि-छटा दरसावए मेघ।
उठए चाहे जल धारक थेघ॥ ६॥
एक गुन तिमिर लाख गुन भेल।
उतरहु दखिन भान दुर गेल॥ ८॥
ए हरि जानि करिअ मोयँ रोस।
आजुक बिलम्ब दइब निअ दोस॥१०॥

समान। तइओ=तो भी। ५—सति=सती स्त्रियों का। ६—मधि—मध्य, में। महोदधि—महा समुद्र। उछलल=उछलने लगा, तरंगित होने लगा। ७—मनमथ=कामदेव। तंत=यन्त्र। ८—निवारइत=बचती हुई। मन्त=मन्त्र। ९—कुसुम=फूल। सरसि=सरसी, तालाब। कुल (कूल)=किनारे। कौसल=छल से। १०—छल=था।

१—निअ=अपना। सयँ=से। पग=डेग। २—घन घन=घने बादल। महि भर बारि=पृथ्वी जल से भर गया। ३—पीछर=जिसपर पैर फिसल जायँ। गरुअ=भारी। नितम्ब=चूतड़। ४—खसु कत बेरि=कितनी बार गिर पड़ी। ६—जल धारा बाँधकर—मूशलधार—बरसना चाहता है। ७—तिमिर=अन्धकार। ८—उत्तर और दक्षिण का ज्ञान दूर ही हो गया दिशा-ज्ञान नहीं रहा।

माधव, करिअ सुमुखि समधाने।
तुअ अभिसार कएलि जत सुन्दरि
कामिनि करु के आने ॥ २ ॥
बरिस पयोधर धरनि बारि भरि
रयनि महा भय भीमा।
तइओ चललि धनि तुअ गुन मन गुनि
तसु साहस नहि सीमा ॥ ४ ॥
देखि भवन-भित लिखित भुजँग-पति
तसु मन परम तरासे।
से सुवदनि कर झपइत फनिमनि
बिहुसि आएलि तुअ पासे ॥ ६ ॥
निअ पहु परिहरि अइलि कमल-मुखि
परिहरि निअ कुल गारी।
तुअ अनुराग मधुर मद मातलि
किछु न गुनलि वर नारी ॥ ८ ॥
ई रस-रसिक बिनोद क बिन्दक
कवि विद्यापति गावे।
काम प्रेम दुहु एक मत भए रहु
कखने की न करावे ॥ १० ॥

२—के=कौन। २—आनें=दूसरा। ४—पयोधर=बादल। भीमा=डरावनी। ५—भित=दीवाल। भुजंग=सर्प। ७—कर=हाथ। फनिमनि=सर्प के मणि को। ७—पहु=प्रभु, प्रीतम। गारी—

(१२२)

राहु मेघ भए गरसल सूर।
पथ परिचय दिवसहि भेल दूर ॥२॥

नहि बरिसए अबसन नहि होए।
पुर परिजन संचर नहि कोए ॥४॥

चल चल सुन्दरि कर गए साज।
दिवस समागम सपरत आज ॥६॥

गुरुजन परिजन डर करु दूर।
बिनु साहस अभिमत नहि पूर ॥८॥

एहि संसार सार बतु एक।
तिला एक संगम, जाव जिब नेह ॥१०॥

भनइ बिद्यापति कबिकंठहार।
कोटिहुँ न घट दिवस-अभिसार ॥१२॥

गालो, शिकायत। मेघ—कखने ''''''=कब क्या नहीं कराता।

१—मेघ ने राहु बनकर सूर्य को ग्रस लिया है—मेघ के कारण सूर्य हीनप्रभ हो गये हैं। २—पथ-परिचय=राह की पहचान। दिवसहि=दिन में ही। ३—अबसन=अवसन्न, समाप्त। मेघ न बरसता बरसता है, न खुल जाता है ४—गाँव में लोग नहीं आते-जाते। ५—कर गए साज=जाकर साज करो—श्रृंगार करो। ६—दिवस-समागम=दिन का मिलन। सपरत=सम्पूर्ण होगा। ८—अभिमत=मनोवाञ्छा। ९—सार=तत्त्व, सत्य। बतु=वस्तु। १०—एक क्षण के लिये रति-क्रीड़ा और जीवन-भर प्रेम करना। ११—कोटिहु=करोड़ों उपाय करने पर भी। न घट=न घट सकता, न हो सकता।

(१२३)

आज पुनिम तिथि जानि मोयँ अएलिहुँ
उचित तोहर अभिसार।
देह-जोति ससि-किरन समाइति
के बिभिनावए पार॥ २॥
सुन्दरि अपनहु हृदय बिचारि।
आँखि पसारि जगत हम देखलि
के जग तुअ सम नारि॥ ४॥
तोहें जनि तिमिर हीत कए मानह
आनन तोर तिमिरारि।
सहज बिरोध दूर परिहरि धनि
चलु उठि जतए मुरारि॥ ६॥
दूती बचन हीत कए मानल
चालक भेल पँचबान।
हरि-अभिसार चललि बर कामिनि
बिद्यापति कबि भान॥ ८॥

१—पुनिम पूर्णिमा। अएलिहुँ=मैं आई। २—देह-जोति=शरीर की कांति। ससि-किरन—चन्द्रमा की किरण (में)। समाइति=घुल जायगी, मिल जायगी। के=कौन। बिभिनावए पार=विभिन्न कर सकता है, अलग कर सकता है। ४—जनि=नहीं। तिमिर=अन्धकार। हीत=मित्र। आनन=मुख। तिमिरारि=अन्धकार का शत्रु, चन्द्र। ६—जतए=जहाँ। ७—चालक=प्रेरक पँचबान=काम। हरि-अभिसार=कृष्ण से गुप्त मिलन करने को।

१२४

अरुन किरन किछु अम्बर देल।
दीप क सिखा मलिन भए गेल ॥२॥
तेँ तज माधव जएबा देह।
राखब चाहिअ गुपुत सनेह ॥४॥
दुरजन जागत परिजन कान।
सगर चतुरपन होएत मलान ॥६॥
भमर कुसुम रमि न रह अगोरि।
केओ नहि बेकत करए निअ चोरि ॥८॥
अपनयेँ धन हे धनिक धर गोए।
परक रतन परगट कर कोय ॥१०॥
फाब चोरि जौं चेतन चोर।
जागि जाए पुर परिजन मोर ॥१२॥
भनइ विद्यापति सखि कहु सार।
से जीवन जे पर उपकार ॥१४॥

१—अरुन-किरन=सूर्य की किरणें। अम्बर=आकाश। २—सिखा=लौ,टेम। ३—तज छोड़ो। जएबा देह=जाने दो। ४—गुपुत=गुप्त, छिपा हुआ। ६—सगर=सब। मलान=म्लान, मलिन। ७—भमर=भौंरा। रमि=रमण कर, बिहार कर। अगोरि=अगोरकर रहना। ८—बेकत=व्यक्त, प्रकट। ९—१०—धनी लोग अपने धन को भी छिपाकर रखते हैं। फिर दूसरे के धन को कहीं कोई प्रकट करता है? ११—फाब=फबना, शोभता। चेतन=चतुर। १३—सार=सत्य।

(१२५)

दुहु रुप लावनि मनमथ मोहनि
निरखि नयन भुलि आय।
रजनि-जनित रति विशेष अलापन
अलस रहल दुहु गाय॥२॥
चाँचर कुन्तल ताहे कुसुम-दल
लोलत आनहि भाँति।
दुहु दुहु हेरि मुख हृदय बाढ़ए सुख
बोलत भूलत पाँत॥४॥
निज निज मन्दिर नागरि नागर
चलइत करु अनुबन्ध।
विरह-विषानल दुहु तनु जारल
लोचन लागल धन्द॥६॥
भीतक चीत पुतुलि सन दुहु जन
रहल विदायक बेला।
प्रेम-पयोनिधि उछलि उछलि पड़
चेतन अचेतन भेला॥८॥
दुहु जन चीत-रीत हेरि सहचरि
छन छन गगनहि चाय।
रजनि पोहाओल सब जन जागल
से डर अधिक डराय॥१०॥
सेखर बुझि तब करि कत अनुभव
दुहु सँग भंग कराव।
निज निज मन्दिर गमन करल दुहु
गुरुजन भेद न पाव॥१२॥

झलना

(१२६)

मन्दिर अछलों सहचरि मेलि ।
परसंगे रजनि अधिक भई गेलि ॥ २ ॥
जब सखि चलल्हु अप्पन गेह ।
तब मझु नींद भरल सब देह ॥ ४ ॥
सूति रहल हम करि एक चीत ।
दैब-बिपाक भेल बिपरीत ॥ ६ ॥
न बोल सजनि सुन सपन-सम्बाद ।
हँसइत केहु जनि कर परिवाद ॥ ८ ॥
बिषाद पड़ल मझु हृदयक माँझ ।
तुरित धोंचायलौं नीबिक काज ॥१०॥
एक पुरुष पुनु आओल आगे ।
कोप अरुन आँखि अधरक दागे ॥१२॥
से भय चिकुर चीर आनहि गेल ।
कपाल काजर मुख सिंदुर भेल ॥ १४ ॥
भतर कहल केह अपजस गाब ।
विद्यापति कह के पतिआब ॥ १६ ॥

१—अछलौं = मैं थी । सहचरि = सखी । २—परसगे = बातचीत में । रजनि = रात । ५—सूति रहल = सो रही । चीत एक करि = चित्त एकाग्र करके । ६—बिपाक = फल । ७—सपन = स्वप्न । ८—परिवाद = प्रवाद, शिकायत । १०—धोंचायलौं = शिथिल कर दिया । नीबिक काज = नीवी का बंधन । १२—अरुन = लाल । अधरक दागे = ओष्ठ पर चिह्न बना दिया ।

(१५७)

कुसुम तोरए गेलहुँ जाहाँ।
भमर अधर खंडल ताहाँ ॥ २ ॥
तैं चलिएलहुँ जमुना तीर।
पवन हरल हृदय चीर ॥ ४ ॥
ए सखि सरुप कहल तोहि।
आनु किछु जनि बोलसि मोहि ॥ ६ ॥
हार मनोहर बेकत भेल।
उजर उरग सबअ लेल ॥ ८ ॥
तैं धसि मजूर जोड़ल झाँप।
नखर गाड़ल हृदय काँप ॥ १० ॥
भन विद्यापति उचित भाग।
बचन पाटव कपट लाग ॥ १२ ॥

१३—ते भय=उस डर से। चिकुर=केश। चीर=साड़ी। आनहि गेल=दूसरे ही ढंग का हो गया। १४—कपाल=मस्तक। १५—अंतर=हृदय की बात। १६—पतिआब=विश्वास करेगा।

१—कुसुम=फूल। गेलहुँ=मैं गई। २—भमर=भौंरा। अधर=ओष्ठ। ३—तैं=वहाँ से। ४—हृदय चीर—वक्षःस्थल की साड़ी, अंचल। ५—सरुप=सत्य। आनु=अन्य। ७—बेकत=व्यक्त, प्रकट। धवर=उज्ज्वल। उरग=सर्प। ९—झाँप जोड़ल=झपट पड़ा। १०—नखर गाढल=नख गड़ा गया। १२—पाटव=पटुता, चतुरता।

(१२८)

सखि हे तोहे हमर बहु सेवा।
ऐसनि बानि कबहु जनि बोलबि
जाति कुल किए मोर लेवा ॥ २ ॥
गोकुल नगर कान्हु रति-लम्पट
जौबन सहज हमारा।
तुहु सखि रभसि मोहे जनि बोलबि
लोक करब पतिआरा ॥४ ॥
केसर कुसुम हेरि हम कौतुक
भुज जुग मेटल ताहि।
दाड़िम भरम पयोधर ऊपर
पड़लहु कीर लोभाहि ॥ ६ ॥
चकित उभय भुज इति उति पेखल
तैं बेम भए गेल आन।
इथे परिबाद कहसि मोहे बैरिनि
इह कबि सेखर भान ॥ ८ ॥

१—हे सखि, मै तुम्हारी बहुत सेवा करूँगी। २—बानि=बोली। जाति कुल ''=मेरा जाति-कुल क्यों लोगी, क्यों नष्ट करोगी। ४—रभसि=दिल्लगी में। पतिआरा—विश्वास। ५—केशर के फूल देखकर, कौतुकवश, उसे दोनो हाथों से मसल दिया [जिस कारण मेरे अंगों में अंगराग लगे दीख पड़ते हैं]। ६—अनार समझकर सुग्गे मेरे कुचों पर लुभा गये। [उनकी चोंचों के आघात से कुच क्षतविक्षत हो गये, जिसे तुम नख रेखा समझ रहे हो]। ७—उभय=

(१८९)

खरि नरि-बेग भासलि नाई।
धरए न पारथि बाल कन्हाई ॥ २ ॥
ते धसि जमुना फेलहुँ पार।
फूटल वलआ टूटल हार ॥ ४ ॥
ए सखि ए सखि न बोल मंद।
बिरह बचन बढ़ाए दंद ॥ ६ ॥
कुंडल खसल जमुन माँझ।
ताहि जोहइत पड़लि साँझ ॥ ८ ॥
अलक तिलक तें बहि गेल।
सुध सुधाकर वदन भेल ॥ ११ ॥
तटिनि रह न पाइअ बाट
तें कुच गड़ल कठिन काँट ॥ १२ ॥
भनइ विद्यापति अपसाद।
बचन-कओसल जितिअ बाद ॥ १४ ॥

दोनों। भुज=हाथ। तें= इससे। बेष= रूप—आन=दूसरा।

१—खरि=तीव्र। नरि=नदी। भासलि=भग गई। बह चलि। नाइ=नाव, नौका। ३—धसि=तैरकर। ४—वलआ=चूड़ी। ५—मंद=बुरी बात। ६—बिरह=विरस, कठोर। दंद=झगड़ा। ७—खसल=गिर पड़ा। ८—जोहइत=खोजने में। ९—अलक=अलता, महावर। तिलक=टीका। १०—सुध=शुद्ध, निष्कलंक। सुधाकर=चन्द्रमा। ११—तटनि=नदि। धार=रस्ता। १२—गड़ल=गड़ गया। १३—अपसाद=राजन।

ननदी सरुप निरूपह दोसे।
बिनु बिचार बेभिचार बुझओबह
सासू करतन्हि रोसे॥ ४॥
कौतुक कमल नाल सयँ तोरल
करए चाहल अवतंसे।
रोष कोष सयँ मधुकर आओल
तेंहि अधर करु दंसे॥ ४॥
सरबर-घाट बाट कंटक-तरु
देखहि न पारल आगू।
साँकरि बाट उबटि कहु चललहु
तें कुच कंटक लागू॥ ६॥

१४—बचन कओसल = वचन-चातुरी। बाद=मुकदमा।

१—सरूप = स्वरूप, आकृति। निरूपह = निरूपण करती हो मेरी ननद, तुम आकृति देखकर मुझे दोष लगाती हो। २—बेभिचार = व्यभिचार, पाप कर्म। बुझओबह = समझाओगी। रोसे=क्रोध। ३—नाल सयँ = मृणाल से। अवतंसे = सिर का आभूषण। ४—रोष=क्रोधित होकर। कोष=कमल का भीतरी भाग। मधुकर = भौंरा। तेहि=उसीने। दंसे करु=काट लिया (जिससे ओष्ठ मलिन हो गये) ५—सरबर = तालाब। बाट = राह। कंटक तरु=काँटों के पेड़। देखहि न पारल=देख न सकी। आगू= आगे। ६—साँकरि=संकीर्ण पतली। तें=इसमें। कुच = स्तन।

गरुअ कुम्भ सिर थिर नहिं थाकए
तेँ उघसल केस-पास।
सखि जन सयँ हम पाछे पड़लिहु
तेँ भेल दीघ निसास ॥ ८ ॥
पथ अपवाद पिसुन परचारल
तथिहु उतर हम देला
अमरख चाहि धैरज नहि रहले
तेँ गदगद सर भेला ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन वर जौवति
ई सभ राखल गोई।
ननदी सयँ रस रीति बढ़ावह
गुपुत वेकत नहि होई ॥१२॥

७—गरुअ = भारी। कुम्भ = घड़ा। सिर थिर नहि थाकए = सिर स्थिर नहीं रहता। उघसल = शिथिल हो गया। ८—सयँ = से। पीछे पड़िलिहु = पीछे पड़ गई। दीघ भेल = तीव्र हुआ। निसास = ऊँची साँस, उच्छ्वास। मैं सखियों के पीछे पड़ गई, अतः दौड़कर उन्हें पाने की चेष्टा करने के कारण साँस जल्दी-जल्दी आ रही है। ६—पथ = राह। अपवाद = शिकायत। पिसुन = दुष्ट। परचारल = प्रचारित किया, फैलाया। तथिहु = वहाँ। उत्तर देला = उत्तर दिया। १०-अमरख चाहि = अमर्ष वश, क्रोध के आवेग से। गदगद सर = भर्राई आवाज। ११—ई सभ = यह सब। गोई = छिपाकर। गुपुत वेकत नहि होई = जो प्रकट है, वह छिप नहीं सकता।

१३१

जाहि लागि गेल हे ताहि कहाँ लइलि हे
ता पति बैरि पितु काहाँ।
अछलि हे दुख सुख कहह अहन्त मुख
भूषन गमओलह जाहाँ ॥ २ ॥
सुन्दरि, कि कए बुझाओब कंते
जन्हिका जनम होइत तोहे गेलिहु
अइलि हे तन्हिका अंते ॥ ४ ॥
जाहि लागि गेलहु से चलिआएल
तें मोयँ धाएल नुकाई।

१—जाहि लागि=जिसके लिये (जल के लिये)। गेलि=गई। ताहि=उसे। कहाँ लाइलि=कहाँ लाई (नहीं लाई)। ता पति बैरि पितु कहाँ=उसके (जल के) पति=समुद्र, समुद्र का बैरी=अगस्त्य, अगस्त्य का पिता=घट, घड़ा; घड़ा—घड़ा=कहाँ हैं? २—अछलि=थी। भूषण=अंगराग आदि। गमओलह=खो दिया। जहाँ अंगराग आदि। (रति क्रीड़ा की मस्ती में) नष्ट हो गये, वहाँ के सुख-दुःख अपने ही मुख से कहो। ३—कि कए=क्या कहकर। बुझाओब=समझाओगी। ४—जन्हिका जनम होइत=जिसका (दिन का) जन्म होते ही—प्रातःकाल ही। अइलि हे तन्हिका अन्ते=उसके (दिन के) अन्त में—संध्या को आई। ५—जिसके लिये (जल के लिये) मैं गई, वह (जल-वृष्टि, वर्षा) चला आई—वर्षा होने लगी, जिससे मुझे दौड़कर छिपना पड़ा।

से चलि गेल ताहि लए चललिह्नु
तें पथ भेल अनेआई ॥ ६ ॥
संकर-वाहन खेड़ि खेलाइत
मेदिनि-वाहन आगे ।
जे सब अछलि सँग से सब चकालि भँग
उबरि अएलहुँ अति भागे ॥ ८ ॥
जाहि दुइ खोज करइ छथि सासुन्हि
से मिलु अपना संगे ।
भनइ बिद्यापति सुन बर जौबति
गुपुत नेह रति-रंगे ॥ १० ॥

६—से=वह (जल वृष्टि) चली गई तब उसे (जल) लेकर चली । तें=इस कारण । पथ=राह । अनेआई=अन्याय । ७-संकर-वाहन=बैल । खेड़ि खेलाइति=खेल कर रहा था, आपस में लड़ रहा था । मेदिनि वाहन=सर्प । आगे=आगे था । ८—अछलि=थो । भाँग=छिटककर । उबरि अएलहुँ=उबर आई, बच आई । भागे=भाग्य से ही । ६—जिन दोनों (जल और घड़ा) की खोज सासुजी कर रही हैं, वे दोनों अपने साथियों से मिल गये-(वर्षा हो रही थी कि घड़ा फूट गया-घड़े का पानी वर्षा के पानी में मिल गया । और मिट्टी का घड़ा मिट्टी में मिल गया) । १०—जौबति=युवती । गुपुत नेह=गुप्त प्रेम । रति-रंगे=रति क्रीड़ा ।

When passion and philosophy meet in a single individual, we have a great poet —Browning.

मान

खनहि खन महँघि भइ किछु अरुन नयन कइ
कपट धरि मान सम्मान लेही।
कनक जयँ प्रेम कसि पुनु पलटि बाँक छवि
आधि लयँ अधर मधु-पान देहि ॥ ॥
अरेरे इंदुमुखि अढ़ न कर पिअ हृदय खेद हर
कुसुम-सर रंग संसार सारा ॥ ३ ॥
बचन बस होसि जनु ससरि भिन्न होइत तनु
सहज बरु छाड़ि देब सयन सीमा।
प्रथमे रस भंग भेल तासे मुख सोभ गेल
बाँधि भुज-पास पिय धरब गीमा ॥ ५ ॥
जदि नयन-कमल-भर मुकुल कल कान्ति धर
खर नखर-घात कइ सेहे बेला।
परम पद लाभ सम मोद चिर हृदय रम
नागरि सुरत सुख अमिअ मेला ॥ ६ ॥
सरसकवि सुरस भन चारु तर चतुरपम
नारि अराहिआइ पंचबान।
सकल जन सुनन गति राम लखिमाक पति
रूप नारायन सिवसिंघ जाना ॥ ९ ॥

[मान-शिक्षा] १—महँघि=महँगा । २—अढ़=टालमटूल । कुसुम-सर=कामदेव । ५—गीमा=ग्रीवा, गरदन । ६—यदि नयन रूपी कमल कली का रूप धारण करे—आँखें झिपने लगें—तो उस समय नख का विकट प्रहार करना।

लोचन अरुन बुझल बड़ भेद।
र उजागर गहब निवेद॥२॥
तत हि जाह हरि न करह लाथ।
रयनि गमओलह जन्हिके साथ॥४॥
कुच कुंकुम माखल हिय तोर।
जनि अनुराग राँगिकरु गोर॥६॥
आनक भूषन तोर बलङ्क।
चइओ भेद मन्द ओ परसङ्क॥८॥
चिटि-गुन चुपइलि राइक पोरि।
लओले ताम्बुल भेल चोरि॥१०॥
भनइ विद्यापति चजयहु हाद।

(११४)

कुंकुम लओलह नख-त गोइ।
अधरक काजर अएलह धोइ ॥२॥
तइओ न छपल कपट-बुधि तोरि।
लाचन अरुन बेकत भेल चोरि। ४॥
चल चल कान्ह बोलह जनु आन।
परतख चाहि अधिक अनुमान ॥ ६ ॥
कानओ प्रकृति बुझओं गुनसीला।
जस तोर मनोरथ मनसिज-लीला ॥ ८ ॥
बचन नुकाबह बेकतओ काज।
तोय हँसि हेरह मोय बड़ लाज ॥ १० ॥
अपथहु सपथ बुझाबह राधे।
कोन परि खेओम सठ अपराधे ॥ १२ ॥
भनइ बिद्यापति पिअ अपराध।
उदघट न कर मनोरथ साध ॥१४॥

१—नायिका ने जो अपने नखों मे बकोटकर तुम्हारे वक्षस्थल पर चिह्न बना दिया था, उसे कुंकुम लगाकर छिपा लाये हो। २—अधरक=ओष्ठ का। अएलह =आये हो। ३—छपल=छिपसका। ४—अरुन=लाल। बेकत=व्यक्त, प्रकट। ५—आन=अन्य। ६—परतख=प्रत्यक्ष। ७—प्रकृति=स्वभाव। ८—जस=जैसा। मनसिज=कामदेव। ९—नुकावह=छिपाते हो। १०—तुम हंसकर (मेरी ओर) देखते हो, किन्तु मुझे लज्जा आती है। ११—अपथहु=बुरी राह जाने पर भी। १२—कोन परि=किस प्रकार। खेओम=क्षमा करुँगी। १४—उदघट=प्रकाश। साध=इच्छा।

(१९५)

आध आध मुदित भेल दुहु लोचन
बचन बोलत आध आधे ।
रति-आलस सामर तनु झामर
हेरि पुरल मोर साधे ॥२॥
माधव, चल चल चल तन्हि ठाम ।
जसु पद-जावक हृदयक भूषन
अबहु जपत तसु नाम ॥४॥
कत चंदन कत मृगमद कुंकुम
तुअ कपोल रहु लागि ।
देखि सौति अनुरुप कएल बिहि
अतए मानिए बहु भागि ॥६॥

१—मुदित=मुँदे हुए । २—रति आलस=काम क्रीड़ा-जनित थकावट । सामर=श्यामता । झामर=मलिन । हेरि=देखकर । साधे=हौसला । ३—चल=जाओ । तन्हि ठाम=उसी जगह । ४—जसु=जिसके । पद जावक=पैर का महावर । जिसके पैर का महावर तुम्हारे हृदय आभूषण हुआ है, उसीका नाम तुम अब भी जप रहे हो। [अकस्मात् कृष्ण के मुँह से उस नायिका का नाम निकल गया था] । ५—कत=कितना । मृगमद=कस्तूरी । कुंकुम=केशर । कपोल=गाल । ६—अनरूप=समान ।
६—मैं तो इसीमें अपना सौभाग्य मानती हूँ कि ब्रह्मा ने मुझे एक योग्य सौत दी है ।

सुन सुन सुन्दरि कर अवधान।
बिनु अपराध कहसि काहे आन ॥२॥
पुजलौं पसुपति जामिनि जागि।
गमन बिलम्ब भेल तेहि लागि ॥४॥
लागल मृगमद कुंकुम दाग।
उचरइत मंत्र अधर नहि राग ॥६॥
रजनि उजागर लोचन घोर।
ताहि लागि तोहे मोहे बोलसि चोर ॥८॥
नवक बसेखर कि कहब तोय।
सपथ करह तब परतीत होय ॥१०॥

१—अवधान=मनोयोग, ध्यान देना। कहसि काहे आन=दूसरी बात क्यों कह रही हो। पसुपति=महादेव। जामिनि=रात। ४-गमन=आने में, चलने में। तेहि लागि=इसी लिये। ५—६—उचरइत=उच्चारन करने। राग=लालिमा। कस्तुरी और केशर से शिव की पूजा की शरीर पर उन्हींके चिह्न है। बार बार मंत्र उच्चारण करने के कारण ओष्ठ की ललाई नष्ट हो गई। ७-रजनि=रात। उजागर=जागरण, घोर=भयानक (लाल) ८—इसी लिये तुम मुझे चोर कहती हो। ९—१०—विद्यापति कहते हैं—तुम क्या कहोगे, जब शपथ करो, तो तुम्हारी बातों पर विश्वास हो।

[अगले पद में श्रीकृष्ण की विचित्र शपथ पढ़िये और गौर कीजिये]

ए धनि मानिनि करह संजात।
तुअ कुच हेम-घट हार भुजंगिनि
ताक उपर धर हात ॥ २ ॥
तोहे छोड़ि जदि हम परसब कोय।
तुअ हार-नागिनि काटब मोय ॥ ४ ॥
हमर बचन यदि नहि परतीत।
बुझि करह साति जे होय उचीत ॥ ६ ॥
भुज-पास बाँधि जघन-तर तारि।
पयोधर-पाथर हिय दह भारि ॥ ८ ॥
उर-कारा बाँधि राख दिन-राति।
बिद्यापति कह उचित इह साति। १० ॥

१—धनि=बाला। करह संजात=संयत करो, क्रोध छोड़ो। २—हेम-घट=सोने का घड़ा। भुजंगिनि=सर्पिणी। ताक=उसके। [यदि विश्वास न हो तो शपथ करा लो। सोना छूकर शपथ खाना प्रामाणिक माना जाता है, सो] तेरे कुच रूपी सोने के घड़े तथा हार रूपी सर्पिणी के उपर हाथ रखकर मैं शपथ खाता हूँ। ३—छोड़ि=छोड़कर। परसब=स्पर्श करूँगा। कोय=किसी को। ६—साति=शास्ति, दण्ड। ७—भुज-पास=भुजा रूपी जंजीर। जघन तर=जाँघों के बीच में। तारि=ताड़ना करके, खूब ठोक-पीट के। ८—स्तनरूपी भारी पत्थर हृदय पर रख दो। ९—उर-कार=हृदय रूपी जेलखाने में। राख=रक्खो। १०—इ=यह। साति=शास्ति, दंड।

(१३८)

अरुन पुरब दिसा बितलि सगर निसा
गगन मगन भेला चंदा।
मूदि गेलि कुमुदिन तइयो तोहर धनि
मूदल मुख अरबिंदा ॥२॥
चाँद बदन कुबलय दुहु लोचन
अधर मधुरि बिरमान।
सगर सरीर कुसुम तोंए सिरिजल
किए दहु हृदय पखान ॥४॥
अस कति करइ ककन नहि पहिरह
हार हृदय भेल भार।
गिरि सम गरुअ मान नहि मुँचसि
अपरुब तुअ बेवहार ॥६॥
अवगुन परिहरि हेरह हरखि धनि
मानक अवधि बिहान।
राजा सिबसिंघ रूप नरायण
कबि विद्यापति भान ॥८॥

१—अरुन=लाल। बितलि=बीत गई। सगरि=समग्र, समूची। मगन=मग्न, डूब जाना। २—अरबिंदा=कमल। ३—बदन=मुख। कुबलय=कमल। मधरि=एक लाल फूल। ४—कुसुम=फूल। सिरिजल=बनाया। किए दहु=क्यों दिया। पखान=पत्थर। ५—अस=ऐसा। कति=क्यों। ककन=कँगन। ६—गरुअ=भारी। मुंचसि=छोड़ती हो। ७—बिहान=प्रातःकाल।

मदन-कुञ्ज पर बइसल नागर
बृन्दा सखि मुख चाहि।
जोड़ि जुगुल कर बिनति करए कत
तुरित मिलाबह राहि ॥ २ ॥
हम पर रोखि बिमुख भइ सुन्दरि
जबहु चललि निज गेहा।
मदन हुताशन मझु मन जारल
जीव न बाँधइ थेहा ॥ ४ ॥
तुअ अति चतुर सिरोमनि नागर
तोहे कि सिखाओब बानि।
तुहु बिनु हमर मरम कोन जानत
कइसे मिलाएब आनि ॥ ६ ॥
चन्दन चाँद पवन भेल रिपु सम
बृन्दाबन बन भेल।
कोकिल मयूर झंकार देत कत
मझु मन मनमथ सेल ॥ ८ ॥
छल छल नयन बयन भरि रोअत
चरन पकड़ि गहि जाब।
हा हा ये धनि हमए न हेरब
सिंह भूपति रस गाब ॥ १० ॥

१—चाहि = देखना । २—राहि=राधा । ४—मदन-हुताशन= कामदेव रूपी अग्नि । जीव न बाँधइ थेहा=जीव स्थैर्य

माधव, इ नहि उचित विचार।
जनिक एहन धनि काम-कला सनि
स किय करु व्यभिचार ॥ २ ॥

प्रानहु ताहि अधिक कए मानब
हृदयक हार समान।
कोन परजुगति आन के ताकब
की थिक तोहर गेआन ॥ ४ ॥

कृपन पुरुष के केओ नहिं निक कह
जग भरि कर उपहास।
निज धन अछइत नहिं उपभोगब
केवल परहिक आस ॥ ६ ॥

भनइ विद्यापति सुनु मथुरापति
इ थिक अनुचित काज।
मांगि लायब बित से जदि हो नित
अपन करब कोन काज ॥ ८ ॥

नहीं बांधते, प्राण स्थिर नहीं होते ८—मनमथ = कामदेव।

२—जनिक—जिसको। एहन = ऐसी। सनि=समान। ४—परजुगति = प्रयुक्ति। आन के ताकब=दूसरे को देखना। की=क्या। थिक=है। ५—कृपन = सूम। निक = नीक, अच्छा। उपहास = हँसी,। ६—अछइत = रहते। परहिक = दूसरे की। ८—यदि माँगा हुआ धन नित्य रहता-यदि मंगनी की चीज से ही काम चल जाता—तो लोग अपने धन के लिये क्यों कष्ट उठाते ?

(१४१)

विरह व्याकुल बकुल तरुतर
पेखल नन्द-कुमार रे।
नील नीरज नयन सयँ सखि
ढरइ नीर अपार रे॥ २॥
पेखि मलयज-पङ्क मृगमद
तामरस घनसार रे।
निज पानि-पल्लव मूँदि लोचन
धरनि पड़ असँभार रे॥ ४॥
बहइ मन्द सुगन्द सीतल
मन्द मलय-समीर रे।
जनि प्रलय कालक प्रवल पावक
दहइ सून सरीर रे॥ ६॥
अधिक वेपथ टूटि पड़ खिति
मसृन मुकुता-माल रे।
अनिल तरल तमाल तरुवर
मुंच सुमनस जाल रे॥ ८॥
मान-मनि तजि सुदति चलु जहि
राए रसिक सुजान रे।
सुखद स्तुति अति सरस दण्डक
कबि विद्यापति भान रे॥१०॥

१—बकुल=मौलिश्री, मनसरी। २—नीरज=कमल। ३—मलयज=चन्दन। मृगमद=कस्तूरी। तामरस=कमल। घन-

रामा, कि अब बोलसि आन।
तोहर चरन सरन से हरि
अबहु मेटह मान ॥ ९ ॥
गोबर्धन गिरि बाम कर धरि
कएल गोखुल पार।
बिरह से खिन करक कंकन
गरुअ मानए भार ॥ ४ ॥
दमन कालो कएल जे जन
चरन जुगल-बरे।
अब भुजंगम भरम भूलल
हृदय हार न धरे ॥ ६ ॥
सहज चातक छाड़ए न बरत
न बइसे नदी तीर।
नबिन जलधर-बारि विनु
न पिबए ताहरि नीर ॥८॥

सार=कपूर। ४—पानि=हाथ। ६-पावक=अग्नि। सून=शून्य। ७—वेपथ=व्यथित। खिति=पृथ्वी। मसृन=चिकना। ८-अनिल-तरल वायु द्वारा आन्दोलित। मुंच=गिरना। सुमनस=फूल। ९—सुदति= सुन्दरी। १० सुति=सुनने में। दंडक=इस छद का नाम दंडक है।

१—रामा=सुन्दरी। आन=अन्य। ४—करक=हाथ का। गरुअ=अधिक, कठिन। ६—दमन=दलित, नष्ट। बरे=श्रेष्ठ। भुजंगम=सर्प। ७—बरत=व्रत। बइसे=बैठता। जलधर=बादल।

सखि हे बूझल कान्ह गोआर।
पितरक टाँड़ काज दहु कओन लह
ऊपर चकमक सार ॥ २ ॥
हम तो कएल मन गेलहि होएत भल
हम छलि सुपुरुख भाने।
तोहर बचन सखि कएल आँखि देखि
आमिअ-भरम विष पाने ॥ ४ ॥
पसुक संग हम जनम गमाओल
से कि बुझथि रतिरंग।
मधु-जामिनि मोर आज विफल गेलि
गोप गमारक संग ॥ ६ ॥
तोहर बचन कूप धसि जाएब
तैं हमे गेलहु अबाट।
चंदन भरम सिमर आलिंगल
सालि रहल हिय काँट ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति हरि बहुबल्लभ
कएल बहुत अपमान।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
लखिमा पति रस जान ॥१०॥

२—पितरक=पीतल का। टाँड़=हाथ का एक गहना। ३—गेलहि=जाने से। छलि=थी। मधुजामिन=वसंत की रात। ७—अबाट=कुपथ। ८—सिमर=सेमल। ६-बहुबल्लभ=बहुत स्त्रियों के पति।

मधु सम बचन कुलिस सम मानस
प्रथमहि जान न भेला।
अपन चतुरपन पिसुन हाथ देल
गरुअ गरब दुर गेला ॥ २ ॥
सखि हे, मन्द प्रेम परिनामा।
बड़ कए जीवन कएल अपराधिन
नहि उपचर एक ठामा ॥ ४ ॥
झाँपल कूप देखहि नहि पारल
आरति चललहु धाई।
तखन लघू-गुरु किछु नहि गूनल
अब पछताबक जाई ॥ ६ ॥
एक दिन अछलहु आन भान हम
अब बूझिल अवगाहि।
अपन मूँड़ अपने हम चाँछल
दोख देब गए काहि ॥ ८ ॥
भनइ बिद्यापति सुनु बर जौवति
चित्त गनब तहि आने।
पेमक कारन जीउ उपेखिए
जग जन के नहि जाने ॥१०॥

१—कुलिस=वज्र। २—पिसुन=दुष्ट। ४-उपचर=शान्ति। ५—आरति=शीघ्रता में। ६—गूनल=समझा। ७—मानभान=नासमझ। अवगाहि=अन्तःप्रवेश करके। ८—चांछल=छील लिया। १०—उपखिए=उपेक्षा करो।

(१४५)

माधव, दुज्जय मानिन-मानि ।
बिपरित चरित पेखि चकरित भेल
न पुछल आधहु बानि ॥ २ ॥
तुअ रूप साम अखर नहि सुनए
तुअ रूर रिपु सम मानि ।
तुअ जन सयँ सम्भास न करई
कइसे मिलाएब मानि ॥ ४ ॥
नील बसन बर, काँचन चुरि कर
पौतिक माल उतारि ।
करि-रद चुरि कर मोति माल बर
पहिरल अरुनिम सारि ॥ ६ ॥
असित चित्र उर पर छल, मेटल
मलयज देह लगाइ ।
मृदमद तिलक धोइ दृगंचल, कच
सयँ मुख लए छपाइ ॥ ८ ॥

२—बिपरित=उलटा। चकरित=चकित। ३—साम=श्याम (कृष्ण)। अखर=अक्षर। ४—सयँ=से। सम्भास=बातचीत। काँचन चुरि कर=हाथों की काँच की चूड़ी। पौतिक=पिरोना, नील मणि। ६—करि रद-चुड़ी=हाथी के दाँत की चूड़ी। अरुनिम=लाल। सारि=साडी। —असित चित्र काला गोदना। छल=था। मलयज=चंदन। ८—मृगमद=कस्तूरी (काली होती है) दृगंचल=आंख के कोने। कच=केश। ९—तील=तिल, तिलशा।

एक तील छल चारु चिबुक पर
निन्दि मधुप-सुत सामा।
तृन-अग्रे करि मलयज रजल
ताहि छपाओल रामा ॥१०॥
जलधर देखि चन्द्रातप झाँपल
सामरि सखि नहि पास।
तमाल तरु गन चुना लेपल
सिखि पिक दूरि निवास ॥१२॥
मधुकर डर धनि चम्पक-तरु तल
लोचन जल भरिपूर।
सामर चिकुर हेरि मुकुर पटकल
टूटि भए गेल सत चूर ॥१४॥
तुअ गुन-गाम कहए सुक पंडित
सुनतहि उठल रोसाइ।
पिजर झटकि फटकि पर पटकत
धाए धएल तहि जाइ ॥१६॥
मेरु सम मान सुमेरु कोप सम
देखि भेल रेनु समान।
बिद्यापति कह राहि मनावए
आपु सिधारह कान ॥१८॥

चिबुक = ठुड्डी। निन्दि ... ... = जो भौंरे के बच्चे की श्यामलता को भी लज्जित करता था। १०—घर के नोंक से चंदन लगाकर उस सुन्दर ने उसे मिटा दिया। ११—जलधर = मेघ। चन्द्रातप =

(१४६)

मानिनि हम कहिए तुअ लागी।
नाह निकट पाइ जे जन वंचए
तेकर बड़हि अभागी ॥ २ ॥
दिनकर-बन्धु कमल सब जानए
जल तेहि जीवन होई।
पङ्क बिहिन तनु भानु सुखावए
जल पटाव बरु कोई ॥ ४ ॥
नाह समीप सुखद जत वैभव
अनुकुल होएत जोई।
तेकर बिरह सकल सुख सम्पद
खन खन दगधए सोई ॥ ६ ॥
तुहु धनि गुनमति बूझ करह रति
परिजन ऐसन भास।
सुनइत राहि हृदय भेल गदगद
अनुमति कएल प्रगास ॥ ८ ॥

चँदोबा। १२—काले तमाल के वृक्ष को चूने से पोत दिया और (काले) मयूर तथा कोयल को खदेड़ दिया। १३—चिकुर=केश। मुकुर- आईना। १४—सत चूर=सौ टुकड़े। १५—गाम=समूह। सुक=सुग्गा। रोसाइ=क्रोधित होकर। फटिक=स्फटिक पत्थर। १७—रेनु=धूल।

१-तुअ लागी=तुम्हारे लिये। २-नाह=पति। ३-दिनकर=सूर्य। ४-बिहिन=हीन। भानु=सूर्य। पटाब=छिड़कना। ६-दगधए=जलाता है।

मानिनि आब उचित नहि मान

एखनुक रंग एहन सन लगइछ

जागल पए पचबान ॥ २ ॥

जूड़ि रयनि चकमक करु चाँदनि

एहन समय नहि आन ।

एहि अवसर पिय-मिलन जेहन सुख

जकरहि होए से जान ॥ ४ ॥

रभसि-रभसि अलि बिलसि बिलसि करि

करए मधुर मधु पान ।

अपन-अपन पहु सबहु जेमाओलि

भूखल तुअ जजमान ॥ ६ ॥

त्रिबलि तरंग सितासित संगम

उरज सम्भु निरमान ।

आरति पति मगइछ परतिग्रह

करु धनि सरबस दान ॥ ८ ॥

दीपक-दिप सम थिर न रहय मन

दृढ़ करु अपन गेआन ।

सञ्चित मदन बेदन अति दारुन

विद्यापति कवि भान ॥१०॥

२—इस समय का समा (रंग) कुछ ऐसा मालूम होता है, मानों कामदेव सोते से जग पड़ा हो। ३—जूड़ि = शीतल। ४—जेहन = जैसा। जकरहि = जिसको। ६—रभसि = उमंग में आकर।

(१४८)

अखिल लोचन तम-ताप-विमोचन
उदयति आनन्दकन्दे ।
एक नलिनि-मुख मलिन करए जदि
इथे लागि निन्दह चन्दे ॥ २ ॥

सुन्दरि, बूझल तुअ प्रतिभाति ।
गुन गन तेजि दोप एक घोषसि
अन्त अहीरनि जाति ॥ ४ ॥

सकल जीव-जन जीव समीरन
मन्द सुगन्ध सुमीते ।
दीपक-जोति परस जदि नासए
इथे लागि नीन्द मारुते ॥ ६ ॥

अलि = भौंरा । ६—पहु = प्रीतम । जेमाओोलि = खिलाया । ७—त्रिवली की तरग में गंगा यमुना (हार और रोमावलि) का संगम हुआ है, जहाँ कुच रूपी शिव की भी स्थापना है । ८—आरति = आर्त, व्याकुल । परतिग्रह = प्रतिग्रह = दान । ९—दीपक-सिख = दीपक की शिखा, लौ । १०—मदन = कामदेव ।

१—अखिल = समूचा (संसार) । तम = अंधकार । ताप = गर्मी, ज्वला । विमोचन = नाश करनेवाला । उदयति = उगता है । कंद = मूल, जड़ । २—नलि = कमलिनी । इथे = इसलिये । निन्दह = निंदा करती हो । ३—प्रतिभाति = बुद्धि । ४—घोषसि = बार-बार कहना । ५—जीव-जन = प्राणी । जीव = प्राण । समीरन = वायु । ६—परस = स्पर्श । नीन्द = निन्दा । करना । मारुते = पवन को ।

स्थावर जंगम कीट पतंगम
सुखद जे सकल सरीरे।
कागद पत्र परस जओं नासए
इथे लागि निन्दह नीरे ॥८॥
खन-खन सकल कुसुम मन तोषए
निसि रहु कमलिनि सगे।
चम्पक एक जइओ नहि चुम्बए
इथे लागि निन्दह भृंगे ॥१०॥
पाँच पाँच गुन दस गुन चौगुन
आठ दुगुन सखि माझे।
विद्यापति कान्हु आकुल तो बिनु
विषाद न पावसि लाजे ॥१२॥

७—स्थावर=वृक्ष आदि अचल जीव। जंगम=मनुष्य आदि चलनेवाले जीव। कीट=कीड़े। पतंगम=फतगे आदि। ८—कागद पत्र=कागज के पन्ने। परस=स्पर्श। जओ=यदि। नीर=पानी। ९—खन=क्षण। कुसुम=फूल। तोषय=संतुष्ट करता है। निसि=रात। १०—चम्पक=चम्पा। जइओ=यदि। भृंग=भौंरे को। ११—(५×५×१०×४×८×२) =१६००० सखियों के मध्य में। १२—कान्हु=श्रीकृष्ण। विषाद =दुःख। पावसि=पाती हो।

"सा कविता सा वनिता यस्याः श्रवणेन दर्शनेनापि।
कविहृदयं विटहृदयं सरलं तरलं च सत्वरं भवति॥"

(१४६)

चानन भरम सेवलि हम सजनी
पूरत सब मनकाम ।
कंटक दरस परम भेल सजनी
सीमर भेल परिनाम ॥२॥

एकहि नगर बसु माधव सजनी
पर-भामिनि बस भेल ।
हम धनि एहन कलावति सजनी
गुन गौरव दुर गेल ॥४॥

अभिनव एक कमल फुल सजनी
दोना नीमक डार ।
सेहो फुल ओतहि सुखायल छथि सजनी
रसमय फुलल नेवार ॥६॥

विधि बस आज आएल सजनी
एत दिन ओतहि गमाय ।
कोन परि करब समागम सजनी
मोर मन नहि पतिआय ॥८॥

भनई विद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनसाइ ।
उठ बधाव करु मन भरि सजनी
आज आओत घर नाह ॥१०॥

१—चानन=चंदन । भरम=भ्रम से । सेवलि=सेवा की ।
२—कंटक=काँटा । सीमर=सेमल । ३—पर-भामिनि=

सजनी अपद न मोहि परबोध ।
तोड़ि जोड़िअ जहाँ गाँठ पड़ए तहाँ
तेज तम परम बिरोध ॥ २ ॥
सलिल सनेह सहज थिक सीतल
इ जानए सब कोई ।
से जदि तपत कए जतने जुड़ाइअ
तइओ विरत रस होई ॥ ४ ॥
गेल सहज हे कि रिति उपजाइअ
कुल—ससि नीली रंग ।
अनुभवि पुनु अनुभवए अचेतन
पड़ए हुतास पतंग ॥ ६ ॥

दूसरे की स्त्री । ४—एहनी=ऐसी । दुर गेल=दूर हो गया । ५—एक नये कमल के फूल को (अर्थात् मुझे) नीम की डाली पर डाल दिया, वह वहीं सूख गया, और नेवार का फूल रसयुक्त होकर खिला । ७—छथि=है । ओतहि=वहीं । ८—समागम=भेंट । १०—आओत—आवेगा ।

१—अपद=पस्थान अनुचित रूप से । परबोध=समझाओ । ३—सहज सीतल थिक =स्वभावतः ही ठंढा है । ४—तपत कए गर्म करके । जतनें=यत्नपूर्वक । जुड़ाइअ=ठंढा कीजिये । तइओ=तोभी । बिरत रस=रसहीन । ५—कुल-रूपी चंद्रमा में नीला धब्बा पड़ जाने पर तथा कितना भी प्रयत्न करने पर क्या उसमें स्वाभाविक रंग उत्पन्न हो सकता है । ६—अनुभवि=अनुभव करके । पुनु=पुनः । अनुभवए=अनुभव करता है । हुतास=अग्नि ।

(१५१)

कबहु रसिक सयँ दरसन होए जनु
दरसन होए जनु नेह।
नेह बिछोह जनु काहुक उपचए
बिछोह धरए जनु देह ॥ २ ॥
सजनी दुर करु ओ परसंग।
पहिलहि उपजइत प्रेमक अंकुर
दारुन विधि देल भंग ॥ ४ ॥
दैवक दोष प्रेम जदि उपजए
रसिक सयँ जनु होय।
कान्ह से गुपुत नेह करि अब एक
सवहु सिखाओल मोय ॥ ६ ॥
एहन औषध सखि कहि नहि पाइअ
जनि जौवन जरि जाव।
असमंजस रस सहए न पारिअ
इह कवि सेखर गाव ॥ ८ ॥

सयँ=से । जनु=नहीं । २—बिछोह=जुदाई । काहुक=किसीको । ३—दुर करु=अलग करो, बंद करो । परसंग=विषय, बातचीत । ४—दारुन = कठोर । भग देल = तोड़ डाला, कुचल डाला । ५—दैवक दोष = विधि विडम्बना से । ६—कृष्ण से गुप्त प्रेम करके मैं यही एक शिक्षा लोगों को देती हूँ । ७—ऐसी दवा मैं कहीं भी नहीं पाती, जिसके खाने से यह जवानी जल जाती । ८—असमंजस=दुविधा । सहए न पारिअ=सहा नहीं जाता ।

(१५२)

जनम होअए जनु; जौं पुनि होई
जुवती भए जनमए जनु कोई ॥ २ ॥
होई जुवति जनु हो रसमंति।
रसओ बुझए जनु हो कुलमंति ॥ ४ ॥
ई धन माँगओं बिहि एक पए तोहि।
थिरता दिहह अवसानहु मोहि ॥ ६ ॥
मिलि सामी नागर रसधार।
परवस जनु होए हमर पिआर ॥ ८ ॥
होए परबस कुछ बुझए बिचारि।
पाए बिचार हार कओन नारि। १०।
भनइ विद्यापति अछ परकार।
दद-समुद होअ जीव दए पार ॥१२॥

१—जौं=यदि। जनु=नहीं। २—जुबती=नौजवान स्त्री। ३, ४—यदि युवती होकर जन्म मिले तो सुरसिका न हो, और यदि सुरसिका हो तो ऊँचे कुल की नहीं हो। ५-ई=यह। धन=(यहाँ) बरदान। बिहि=ब्रह्मा। एक पए=एक ही। ६-थिरता=स्थिरता। दिहह=देना। अवसानहु=अन्तिम अवस्था में भी। ७—सामी=स्वामी, पति। नागर=चतुर। रसधार=रसिक। ८—परबस=दूसरे के वश। ९—१०—यदि परवश भी हो जाय तो कुछ समझ बूझ रक्खे, क्योंकि समझ बुझ होने पर (वह निश्चय कर सकेगा कि) कौन स्त्री गले का हार हो सकती है। ११—अछ=है। परकार=उपाय। दद=कलह। समुद=समुद्र। प्राण देकर कलह-रूपी समुद्र से पार हो जाओ।

२०१

(१५३)

चरन-नखर मनि-रंजन छांद।
धरनि लोटायल गोकुलचांद ॥ ४ ॥
ढरकि ढरकि परु लोचन नोर।
कतरुप मिनति कएल पहु मोर ॥ ४ ॥
लागल कुदिन कएल हम मान।
अबहु न निकसए कठिन परान ॥ ६ ॥
रोस तिमिर अत बेरि किए जान।
रतनक भए गेल गौरिक भान ॥८॥
नारि जनम हम न कएल भागि।
मरन सरन भेल मानक लागि ॥१०॥
विद्यापति कह सुनु धनि राइ।
रोअसि काहे कह भल समुझाइ ॥१२॥

१, २—मेरे चरण के नख रूपी मणि को रंजित करने के बहाने वह गोकुलचन्द (श्रीकृष्ण) पृथ्वी में लोट गया। ३—नोर = आंसू। ४—कतरु = कितने प्रकार से। मिनति = विनय। पहु = प्रीतम। ६—निकसए = निकलता है। ७, ८—क्रोध रूपी अन्धकार में मैं उस समय क्या जानने गई, रत्न को मैंने गेरू मिट्टी समझा। ९—भागि = भाग्य। १०—मान के कारण मुझे मृत्यु की शरण लेनी पड़ी। ११—राइ = राधा। १२—रोअसि = रोती है। काहे = किसलिये। भल समुझाइ = अच्छी तरह समझाकर।

(१५४)

धनि भलि मालिनि सखि गन माँझ।
अनुनय करइत उपजए लाज ॥ २ ॥
पिरितक आरति विरति न सहई।
इंगित भंगिय दुहु सब कहई ॥ ४ ॥
राहि सुचेतनि कान्हु सयान।
मनहि समाधल मन अभिमान ॥ ६ ॥
अधर मुरलि जौं धएल मुरारि।
फोइ कवरि धरि बाँधि समारि ॥ ८ ॥
जौं निज पुर-पथ धएल मुरारि।
सखि लखि अनतए चलु बर नारि ॥१०॥
हरि जब छाया कर धनि पाय।
धनि संभ्रम बइसलि कर लाय ॥१२॥
कह कवि सेखर बुझय सयान।
इंगित रस पसारल पंचबान ॥१४॥

१—धनि=बाला । ३—आरति=आतुरता, शीघ्रता। प्रेम की आतुरता उदासीनता नहीं सहती। ४—इंगित भगिए=इशारे से। ५—राहि=राधा, सुचेतनि=सुचतुरा। ६—समाधल=समाधान किया। ८—फोइ=खुले हुए कबरि=केश। धनि=बाला। समारि=सँभालकर। ९—पुर-पथ=गाँव का रास्ता। १०—अनतए=अन्यत्र। सखिओं की ओर देखकर (वह चतुर स्त्री) दूसरी ओर चली। ११—जब श्रीकृष्ण (रास्ते में) राधा को पाकर उसपर छाया की तब राधा झटपट उनका हाथ पकड़ बैठ गई।

(१५५)

(श्रीकृष्ण का मान)

राधा-माधव रतनहि मंदिर
निवसय सयनक सुख।
रस रस दारुन दंद उपजल
कान्ह चलल तब रूस ॥ २ ॥
नागर-अंचल कर धरि नागरि
हँसि मिनती करु आधा।
नागर-हृदय पाँचसर हनलक
उरज दरसि मन बाधा ॥ ४ ॥
देख सखि झूटक मान।
कारन किछुओ बुझए न पाइए
तब काहे रोखल कान ॥ ६ ॥
रोख समापि पुन रहस पसारल
भेल मन्मथ पंचबान।
अवसर जानि मनावथि राधा
कवि विद्यापति भान ॥ ८ ॥

१—रतनहि = रत्न का बना। निवसय=निवास करते हैं। सयनक सुख=शय्या के सुख में — मिलनानन्द में। २—रस-रस=धीरे-धीरे। दारुन = कठोर। दंद = कलह रूस = रूठकर। ३—अंचल = चादर की खूँट। कर = हाथ। ४- पाँचसर = कामदेव। हनलक = मारा। उरज=कुच। दरसि=देखकर। मन-बाधा = मन में बाधा उपस्थित हुई, मन चंचल हो उठा। ६—रोखल=क्रुद्ध

(१५६)

एत दिन छलि नव रीति रे।
जल मीन जेहन पिरीति रे॥ २॥
एकहि बचन बीच भेल रे।
हँसि पहु उतरो न देल रे॥ ४॥
एकहि पलँग पर कान रे।
मोर लेख दूर देस भान रे॥ ६॥
जाहि बन केओ नहि डोल रे।
ताहि बन पिया हँसि बोल रे॥ ८॥
धरब योगिनिया के भेस रे।
करब में पहुक उदेस रे॥ १०॥
भनइ बिद्यापति भान रे।
सुपुरुष न कर निदान रे॥ १२॥

हुआ। ७—समाधि=समाप्त कर। रहस पसारल=काम क्रीड़ा में लगा। मधथ=मध्स्थ, पंच। ८—अब समय जानकर राधा मानवती बन गई। भान=कहते हैं।

१—एत=इतने। छलि=थी। नव=नवीन। २—मीन=मछली। जेहन=जैसा। ३—बीच भेल=अन्तर पड़ गया। ४—पहु=प्रीतम। उतरो=उत्तर भी। ५—कान=कन्हैया, कृष्ण। ६—मोर लेख=मेरे लिये। भान=मालूम होता है। ७—केओ=कोई। डोल=आता जाता है। ९—धरब=धरूँगी। जोगिनीया=योगिनि। १०—पहुक=प्रीतम का। उदेस=तलाश। ११—निदान=अंत।

(१५७)

जतहि प्रेम रस ततहि दुरन्त।
पुन कर पलटि पिरित गुनमन्त ॥ २॥
सबतहु सुनिये अइसन बेवहार।
पुनु टूटए पुनु गाँथिए हार ॥ ४॥
ए कन्हु कन्हु तोहहि सयान।
बिसरिय कोप करए समधान ॥ ६॥
प्रमक अंकुर तोहे जल देल।
दिन-दिन बाढ़ि महातरु भेल ॥ ८॥
तुअ गुन न गुनल सउतिन आछ।
रोपि न काटिए बिषहुक गाछ ॥ १०॥
जे नेह उपजल प्रानक ओल।
से न करिअ दुर दुरजन बोल ॥१२॥
समत विदित भेल तोह हम नेह।
एक परान कपल दुइ देह ॥१४॥
भनइ विद्यापति न कर उदास।
बड़क वचन करिए बिसबास ॥१६॥

१,—२— जहाँ प्रेम-रस है, वहीं दौरात्म्य कलह भी है। अतः गुणवान् एक बार टूटने पर पुनः प्रीति करते हैं। ३—सबतहुं= सर्वत्र ही। ६—समधान=समाधान। ७—तोहे=तुमने गुण कुछ न देखा और सौतिन कर लाये। १०—बिषहुक गाछ=विष का भी वृक्ष। ११—प्राणक ओल=प्राणों की ओर, अन्तस्तल में। १२—दुर=दूर, भिन्न। १३—तोह हम—तुम्हारा और मेरा।

(१५८)

की हम साँझक एकसरि तारा
भादव चौठिक ससी।
इथि दुहु माझ कओन मोर आनन
जे पहु हेरसि न हसी । २ ॥
साए साए कहह कहह कन्हु कपट करह जनु
कि मोरा भेल अपराधे ॥
न मोयँ कबहु तुअ अनुगति चुकलिहुँ
बचन न बोलल मंदा ।
सामि समाज प्रेम अनुरंजिए
कुमुदिनि सन्निधि चंदा ॥ ५ ॥
भनइ बिद्यापति सुनु बर जौबति
मेदिनि मदन समाने ।
राजा सिबसिंघ रूपनरायन
लखिमा देबि रमाने ॥ ७ ॥

१—२—क्या मैं संध्याकाल की अकेली तारा हूँग (जिसे लो देखना नहीं चाहते) या मैं भादो शुक्ल चतुर्थी का चन्द्रमा हूँ (जिसे देखने से कलंक लगता है)। मेरा मुख इन दोनों में क्या है, जो हे प्रियतम, उसे तुम हँसकर नहीं देखते। (कैसा अच्छा तर्क है!) ३—साए=सखि। कहह=कहो। कन्हु=श्रीकृष्ण। ४—अनुगति=पीछे जाना—आज्ञा मानना। सामि=स्वामी, पति। अनुरंजिए=अनुरंजन किया, निभाया। सन्निधि=निकट। ५—मेदिनि-मदन=पृथ्वी में कामदेव-स्वरूप।

(१५९)

करतल कमल नयन ढर नीर।
न चेतए समरन कुंतल चीर ॥ २ ॥
तुअ पथ हेरि-हेरि चित नहिं थीर।
सुमिरि पुरुब नेहा दगध सरीर ॥४॥
कत परि माधव साधव मान।
बिरही जुवति माँग दरसन दान ॥ ६ ॥
जल-मध कमल गगन-मध सूर
आँतर चान कुमुद कत दूर ॥ ८ ॥
गगन गरज मेघ सिखर मयूर।
कत जन जानसि नेह कत दूर ॥ १०॥
भनइ विद्यापति विपरित माइ।
राधा बचन लजाएल कान्ह ॥१२॥

१—करतल=हथेली। कमल=(मुख)। नीर=आँसू। २—चेतए=संभालती है। समरन=आभरण, गहने। कुन्तल=केश। चीर=वस्त्र। ३—तुअ पथ=तेरी राह। हेरि हेरि=देख-देख कर। थीर=स्थिर। ४—पुरुब=पहला। दगध=जलता है। ५—कत परि=कब तक। साधव मान=मान किये रहोगे। ७—मध=मध्य। सूर = सूर्य। = आँतर=अन्तर, बीच। चान = चन्द्रमा कुमुद = कोई। कत=कितना। ९—गरज = गरजता है। सिखर = पहाड़ की चोटी। १०—जन = आदमी। जानसि = जानते हैं। ११-१२— यह विपरीत मान कैसा? [मान स्त्रियाँ करती हैं, पुरुष नहीं] राधा का यह बचन सुन श्रीकृष्ण लज्जित हुए।

मान-भंग

(१६०)

बड़ई चतुर मोर कान।
साधन बिनहि भाँगल मझु मान ॥ २ ॥
जोगी बेस धरि आओल आज।
के इह समुझत अपरुब काज ॥ ४ ॥
सास बचन हम भीख लइ गेल।
मझु मुख हेरइत गदगद भेल ॥ ६ ॥
कह तब—'मान-रतन दह मोह।'
समझल तब हम सुकपट सोय ॥ ८ ॥
जे किछु कहल तब कहइत लाज।
कोई न जानल नागर-राज ॥ १० ॥
विद्यापति कह सुन्दरि राई।
किए तुहु समुझबि से चतुराई ॥ १२॥

२—भाँगल = तोड़ा। मझु=मेरा। ३—आओल = आया। ४—के = कौन। अपरुब=अपूर्व। ५—सास वचन = सास के कहने से। लइ गेल=ले गई। ६—हेरइत=देखते। ७—तब कहा—'मुझे मान रूपी रत्न दो।' ८—सोय = वह। १०—जानल= जाना। नागर-राज = चतुरो का बादशाह। ११— राई= राधा। १२—किए=कैसे।

"सुभाषितेन गीतेन युवतीनां च लीलया।
मनो न भिद्यते यस्य स योगीह्यथवा पशुः ॥"

(१६१)

जटिला सास फुकरि तहि बोलल
बहुरि बेरि काहे ठाढ़ि।
ललिता कहल अमंगल सूनल
सति पतिभय अवगाढ़ि ॥२॥

सुनि कह जटिला घटल की अकुसल
घर सयँ बाहर होय।
बहुरिक पानि धरि हेरह जोगी
किये अकुसल कह मोहि ॥४॥

जोगेस्वर फेरि बहुरिक पानि धरि
कुसल करब वनदेव।
इहे एक अंक बंक बिसंकओ
वन मधि पसुपति सेब ॥६॥

१—फुकरि=चिल्ला कर। बहुरिया, पतोहू। बेरि=विलम्ब,। २—अवगाढ़ि=निश्चय। जटिला सास चिल्लाकर बोली बहुरिया, उतनी देर से वहाँ क्यों खड़ी हो? ललिता ने कहा—कुछ अमंगल सुना जा रहा है। सती को पति-भय निश्चित है। ३—घटल को अकुसल=कौन-सा अमंगल घटा है। ४—बहुरिक पानी=बहुरिया के हाथ। हेरह=देखो। ५ ६—अंक=रेखा। वंक=टेढ़ा। बिसकओ=शंकायुक्त। मधि=में। तब योगेश्वर ने बहुरिया का हाथ धरकर कहा—वन-देवता कुशल करें, यही हाथ की एक रेखा कुछ टेढ़ी है, जिससे अकुशल की आशंका है। इसके निवारण के लिये वन में पशुपति की सेवा करनी होगी।

पुजनक तंत्र-मंत्र बहु आछए
से हम किछु नहि जान।
जटिला कह आन देव कहाँ पाओब
तुहु बीज कर इह दान ॥८॥

एत सुनि दुहु जन मंदिर पइसल
दुहु जन भेल एक ठाम।
मनमथ मंत्र पढ़ाओल दुहू जन
पूरल दुहू मनकाम ॥१०॥

पुनु दुहु जन मंदिर सयँ निकसल
जटिला सयँ कह भाखी।
जब इह गौरि अराधन जाओब
विधवा जन घर राखी ॥१२॥

एव कहि सबहु चलति निज मंदिर
जोगी चरन प्रणाम।
विद्यपति कह नटबर सेखर
साधि चलल मन काम ॥१४॥

७,८—पूजा के बहुत से मंत्र-तंत्र हैं, हम कुछ नहीं जानते। जटिला सास ने कहा—तुम्हारे ऐसा देवता फिर कहाँ मिलेगा।—तुम इसे बीजमात्र दो—झाड़-फूँक कर दो। ९—पइसल = प्रवेश किया। ११—सयँ = से। १२—जब यह गौरी की अराधना करने जाय, तब विधवा को घर में ही रख लेना—विधवा इसके साथ न जाय। [बेचारी सास विधवा थी, अतः बहू अकेली जायगी, तो मिलने में सुविधा होगी] १४—मनकाम = मनःकामना, इच्छा।

(१६२)

गोकुल देवदेयासिनि आओल
नगरहिं ऐसे पुकारि।
अरुन बसन पेन्हि जटिल वेस धरि
कान्ह द्वार माझ ठारि ॥ २ ॥

सुनि धनि जटिला तुरित चल आओल
हेरइत चमकित भेल।
हमर बधुक रीति देखि जनि आनमति
कहि मंदिर लइ गेल ॥ ४ ॥

देवदेयासिनि कान।
जटिला वचन सुधामुखि नियरहि
एक दीठि हेरइ बयान ॥ ६ ॥

कह तब अतनु देव इथे पाओल
हृदि-मधि पइसल काल।

१—देवदेयासिनि = वह स्त्री जो झाड-फूँक करती है। आओल=आई। नगरहि = नगर में। २—अरुन = लाल। बसन = वस्त्र। पेन्हि = पहनकर। जटिल = योगिनी। माझ = में। ३—जटिला धनि = सास। चमकते = आश्चर्यित। ४—बधुक = बधू की, पतोहू को। जनि = जैसे। आनमति = कुछ दूसरी ही तरह की। लइ गेल = (श्री कृष्ण को) ले गई। ६—जटिला = सास। सुधामुखि = चन्द्रवदनी (बाला)। नियरहि = निकट हो। एक-दीठि = एकटक। बयान=मुख। ७—अतनु देव = कामदेव। इथे = इसे। हृदि-मधि = हृदय में। पइसल=प्रवेश किया।

निरजन होइ मंत्र जब झाड़िए
तब इह होएब भाल ॥ ८ ॥
एत सुनि जटिला घर दोहे लेअज
निरजन दुहु एक ठाम।
सब जन निकसल बाहर बइसल
पुरल कान्ह मनकाम ॥१०॥
बहु खन अतनु मंत्र पढ़ि झारल
भागल तब से हो देवा।
देवदेवाखिनि घर सयँ निकसल
चातुरि बूझब केबा ॥१२॥
जटिला बहुत भकति करि हरखित
कतक भीख आनि देल।
कह कबिसेखर भीख लिए तब
से हो देयामिनो गेल ॥१४॥

८—निरजब=एकान्त में। झाड़िये=झाड़-फूंक करूं। इह=यह। भाल=अच्छी, ६—एत=ऐसा। जटिला=सास। घर दोहे लेअल=दोनों को घर में ले आई। ठाम=जगह। ११—निकसल=निकल गई। बइसल=बैठी। मनकाम=मनःकामना, इच्छा ११—भागल=भाग गया। से हो=वह। १२ केवा=किसने अर्थात किसीने नहीं। १३—भकति=भक्ति। कतक=कितना (बहुत)। आनि देल=ला दिया। १४—गेल=गई।

"कलेजे की सबसे गुप्त एवं मधुर रागिणी का नाम कविता है।"

(१६३)

बर नागर साजइ नागरि वेषा ।
मुकुट उतारि सीमंत सँवारल
बेनी बिरचित केसा ॥ २ ॥
चंदन धोइ सिंदुर भाल रंजल
लोचन अंजन अंका ।
कुंडल खोलि कर्नफूल पहिरल
भरि तनु केसर-पंका ॥ ४ ॥
बेसर खचित सतेसरि पहिरल
चूरि कनक कर कंजे ।
चरन-कमल पास जावक रंजन
तापर मंजिर गंजे ॥ ६ ॥
कुंचुकि माँझ कदम्ब-कुसुम भरि
आरम्भल कुच आभा ।
अरुनाम्बर वर सारी पहिरल
वस्त्र बिलोकन सोभा ॥ ८ ॥

१—चतुर कृष्ण स्त्री का वेष बना रहे हैं। २—सीमंत=माँग । बिरचित=बनाया । ३—रंजल=अनुरंजित करते हैं, लगाते हैं । अंका=रेखा । ४—केसर-पंका=केशर का लेप । ५—चूरि कनक कर कंजे=कमल-रूपी हाथ में सोने की चूड़ी । ६—जावक=महावर । गंजे=गुंजार कर रहा है। ७—चोली में कदम्ब के फूल रखकर आभायुक्त उभड़ते हुए कुच बनाये । ८—अरुनाम्बर=लाल कपड़ा ।

धरि परिबादिन स्याम मिलन हित
शुभ अनुकूल पयाने।
पहिलहि बाम चरण तुलि मोहन
त्रियागति लच्छन भाने ॥१०॥
ऐसन चरित मिलन जहाँ सुन्दरि
दूरहि एकलि ठाहि।
कर धरि यंत्र तंत्र सँवारत
को इह लखइ न पारि ॥१२॥
राइक निकट बजाओल सुन्दरि
सुनइत भइ गेल साधा।
ए नव यौवनि नबिन बिदेसिनि
आओो पुकारइ राधा ॥१४॥
सुनइत स्याम हरखि चित आओल
उठि धनि आदर देल।
बाँह पकड़ि निज आसन बइसाओल
कत कत हरखित भेल ॥१६॥

—परिबादिनि=वीणा। पयान=जाना। १०—पहले बायाँ पैर बढ़ाना, क्योंकि स्त्रियों की यही रीति है। ११—एकलि=अकेली। १२—कर=हाथ। यंत्र=वीणा। तंत्र=तार। को इह=कोई भी। लखइ न पारि=देख नहीं सकती। १३—राइक=राधा के। साधा=इच्छा। १५—धनि=वाला। १६—बाँह=हाथ। कत कत=कितना।

× × ×

जबहि बजाओल बीन सुमाधुरि
रीझि देहल मनि-माल।
अइसे बजावए हमर जंतरिया
मोहन जंत्र रसाल ॥२०॥

नाम गाम कह कुल अवलम्बन
ब्रज आगम किए काजा।
सुखमइ नाम, मथुरापुर जदुकुल
गुनीजन पीड़इ राजा ॥२२॥

धनि कह तुअ गुन रीझि प्रसन्न भेल
माँगह मानस जोय।
मनोरथ कमे जौंचलि जदि सुन्दरि
मान रतन देह मोय ॥२४॥

हँसि मुख मोड़ि पीठि देइ बइसल
कान्ह कएल धनि कोर।
टूटल मान बढ़ल कत कौतुक
भूपति के करु ओर ॥२६॥

१६—देहल=दिया। २०—बजावए=बजाता है। जंतरिया=वीणा बजानेवाला। यंत्र=वीणा। २२—मेरा नाम सुखमयी है, गाँव मथुरा, कुल यदुवंश, वहाँ के राजा गुणियों को पीड़ा देते हैं, इसलिये आई हूँ। २३—मानस=हृदय। —मान रतन=मान रूपी रत्न। देह=दो। २५—कोर=गोद। २६—भूपति=शिवसिंह।

विदग्ध-विलास

(१६४)

आजुक लाज तोहे कि कहब माई।
जल देह धोइ जदि तबहु न जाई ॥ २ ॥

नहाइ उठल हम कालिंदी तीर।
अंगहि लागल पातल चीर ॥ ४ ॥

तैं वेकत भेल सकल सरीर
तहि उपनीत समुख जदुबीर ॥ ६ ॥

बिपुल नितम्ब अति बेकत भेल।
पालटि तापर कुंतल देल ॥ ८ ॥

उरज उपर जब देहल दीठ।
उर मोरि बैसल हरि करि पीठ ॥१०॥

हँसि मुख मोड़ए ढीठ कन्हाई।
तनु-तनु झँपइते झाँपल न जाई ॥१२॥

बिद्यापति कह तुहु अगेआनि।
पुनु काहे पलटि न पैसलि पानि ॥१४।

१— आजुक = आज का। माई = अरो दैया २—जल देइ=जल से। ३—नहाइ=स्नान कर। ४—पतली सारी शरीर से सट गई। ५—तैं=इससे रोकत=व्यक्त, प्रकट। ६—तहि= वहीं। उपनीत= बैठा हुआ। जदुबीर=कृष्ण ७,८ पालटि=उलट-कर। तापर=उसपर। कुंतल=केश। ९—देहल दीठ=(श्रीकृष्ण ने) दृष्टि डाली। १०—मोरि=मुड़कर। बइसइ =से बैठ गई। हरि पीठ करि=कृष्ण की ओर पीठ करके १२—तनु तनु=अंग। अंग। १४—पुनः लौटकर पानी में क्यो न पैठ गई ?

(१६५)

हम अबला सखि किये गुन जान।
से रसमय तनु रसिक सुजान ॥ २ ॥
कतहु जतन मोर कोर बइसाई।
बाँधल बेनि से कबरि खसाई ॥ ४ ॥
कंचुक देल हृदय पर मोर।
परसि पयोधर भै गेल भोर ॥ ६ ॥
कंठ पहिराओल मनिमय हार।
अंग बिलेपल कुंकुम भार ॥ ८ ॥
बसन पेन्हाओल कए कत छंद।
किंकिन जालहि नीवि निबंध ॥१०॥
निज कर-पल्लव मझु मुख माज।
नयनहि कएल सु काजर साज ॥१२॥
अलक तिलक दए चोलि निहारि।
कह कविसेखर जाँओ बलिहारि ॥१४॥

१—किये गुन जान=क्या गुन जानने वाई। से=वह। ३—कतहु=कितने। मोर=मुझे। कोर बइसाइ=गोद में बिठला कर। ४—कबरि=केश। खसाई=खोलकर। ५ कंचुक=चोली। ६—परसि—स्पर्शकर, छूकर। पयोधर=कुच। भोर=बेसुध। ८—विलेपल=लेप किया। कुकुम=केसर। ९—पेन्हाओल=पहनाया। कए कत छंद=कितने छल करके। १०—किंकिनि जाल=करधनी। नीवि निबंध=नीवी को बांधा। १२ माज=मांजना। पोछना। १३—अलक तिलक=महावर और टीका। चोली,=कंचुकी।

(१६६)

ए धनि रंगिनि कि कहब तोय।
आजुक कौतुक कहल न होय ॥२॥
एकलि सुतल छलि कुसुम सयान।
मनमथ कर-धनुबान ॥४॥
नूपुर झुन-झुन आओल कान।
कौतुक मुँदि हम रहल नयान ॥६॥
आओल कान्हु बइसल मझुपास।
पास मोड़ि हम लुका-ओल हास ॥८॥
कुतल कुसुमदाम हरि लेल।
बरिहा माल पुनहि मोहि देल ॥१०॥
नासा मोतिम गोमक हार।
जतने उतारल कत परकार ॥१२॥
कुंचुकि फुगइत पहु भेल भोर।
जागल मनमथ बाँधल चोर ॥१४॥
कवि बिद्यापति एह रस भान।
तुहु रसिका पहु रसिक सुजान ॥१६॥

१—रंगिनि=सुरसिका। ३—एकली=अकेली। सुतल छलि= सोई थी। कुसुम सयान=पुष्पशय्या पर। ४—मनमथ=कामदेव। कर=हाथ। ५—आओल=आया। ७—बइसल=बैठा। मझु=मेरे। ८—मुँह फेरकर मैंने अपनी हँसी छिपाई। कुंतल= केश। कुसुमदाम=फूल की माला। हरि लेल=हर लिया, उतार लिया। १०—बरिहा=मयूर की पूँछ। ११—गोमक=पले

(१६७)

हरि धरि हार चऔंकि परु राधा।
आध माधव कर गिम रहु आधा ॥२॥
कपट कोप धनि दिठि धरु फेरी।
हरि हँसि रहल वदन-विधु हेरी ॥४॥
मधुरिम हास गुपुत नहि भेला।
तखने सुमुखि-मुख चुम्बन देला ॥६॥
करु धरु कुच, आकुल भेलि नारी।
निरखि अधर-मधु पिवए मुरारी ॥८॥
चिकुर-चमर झरु कुसुमक धारा।
पिबि कहु तम जनि बम नव तारा ॥१०॥
विद्यापति कह सुन्दरि वानी।
हरि हँसि मिलति राधिका रानी ॥१२॥

का। १३—फुगइत=खोलते। पहु=प्रीतम। भोर=बेसुध। १५—भान=कहते हैं।

१, २—राधिका सोई हुई थी कि कृष्ण ने चुपके निकट जाकर उसका हार पकड़ लिया। राधिका चौंक पड़ी। हार टूट गया। आधा हार कृष्ण के हाथ मे रहा और आधा राधिका के गले में। ३—कपट कोप=झूठमूठ का क्रोध। दिठि धरु फेरी=आँखें फेर लीं। ४—वदन बिधु=मुखचन्द्र। हेरी=देखना। ५, ६—राधा की मधुर मुस्कान छिप न सकी उसी समय कृष्ण ने उसके मुख को चूम लिया। ८—अधर=नीचे का ओष्ठ। ९—चिकुर=केश। १०—मानों अंधकार तारे को निगलकर पुनः उसे उगल रहा हो।

(१६८)

सासु सुतल छलि कोर अगोर।
तहि अति ढ़ीठ पीठ रहु चोर ॥ २ ॥
कत कर आखर कहब बुझाई।
आजुक चातुरि कइल कि जाई ॥ ४ ॥
नहि कर आरति ए अबुझ नाह।
अब नहि होएत वचन निरवाह ॥ ६ ॥
पीठ आलिंगन कत सुख पाब।
पानिक पियास दूध किए जाब ॥ ८ ॥
कत मुख मोरि अधर रसलेल।
कत निसबद कए कुच कर देल ॥१०॥
समुख न जाए सघन निसोआस।
किए कारन भेल दसन बिकास ॥१२॥
जागल सास चलल तब कान।
न पूरल आस बिद्यापति भान ॥१४॥

१--सुतल छलि=सोई थी। कोर अगोर=अपनी गोद में लेकर। २--तहि=वहाँ भी। ३--शब्दों में इसे कहाँ तक समझा कर कहूँ। ४--कहल की जाई=क्या कहा जाता है ? ५--आरति= आतुरता, शीघ्रता। नाह=प्रीतम। ७, ८--मेरी पीठ के आलिंगन से उन्हें क्या सुख मिला--पानी की प्यास कहीं दूध से जाती है। ९--मोरि=मोड़कर। १०--निसबद कए=निःशब्द होकर, चुपचाप। ११--निसोआस=निश्वास, साँस : ऊँची साँस सम्मुख नहीं छोड़ता कि कहीं उस साँस के स्पर्श से मेरी सास न

(१६६)

कि कहब हे सखि आजुक रंग।
सपन हि सूतल कुपुरुष संग ॥ २ ॥
बड़ सुपुरुख बलि आओल धाई।
सूति रहल आँचर झँपाई ॥ ४ ॥
काँचलि खोलि आलिगन देल।
मोहे जगाए आपु निंद गेल ॥ ६ ॥
हे विहि हे विहि बड़ दुख देल।
से दुख रे सखि अबहु न गेल ॥ ८ ॥
भनए विद्यापति इस रस धंद।
भेक कि जान कुसुम-मकरंद ॥१०॥

लग जाय। १२—न मालूम क्यों, उसी समय दाँत चमक उठे १३—कान=कृष्ण। १३—न पूरल आस=आशा नहीं पुरी हुई।

१—रंग=रस वार्त्ता। २—आज मैं स्वप्न में—भ्रम आकर—कुपुरुष के साथ सोइ। ३—बलि=समझकर। आओल धाइ—दौड़कर आई आंचर झँपाई=अंचल से ढँककर। ५—काँचलि=चोली। आलिगन देल=छाती से लगाया। ६—मझे जगाकर पुनः आप सो रहा। ७—बिहि=ब्रह्मा। ६—रस धंद=रस को विचित्रता। १०—भेक=मेढ़क, बेंग। कि=क्या। कुसुम-मकरंद=फूल का पराग।

"भ्रमरहिता सा कचवत्स्त्रीणां कुचवच्च सरसहिता।
लसदक्षरपीयुषाधरवत्कविता महात्मनां जीयात ॥"

(१७०)

आकुल चिकुर बेढ़लि मुख सोभ।
राहु कएल ससि-मंडल लोभ ॥२॥
बड़ अपरुब दुइ चेतन मिलि।
बिपरित रति कामिनि कर केलि ॥४॥
कुच बिपरीत बिलम्बित हार।
कनक कलस बम दूधक धार ॥६॥
पिअ मुख सुमुखि चूम तजि ओज।
चाँद अधोमुख पिवए सरोज ॥८॥
किंकिन रटत नितम्बनि छाज।
मदन-महारथ बाजन बाज ॥१०॥
फूजल चिकुर माल धरु रंग।
जनि जमुना मिलु गंगतरंग ॥१२॥
बदन सोहाओन स्रम-जल बिन्दु।
मदन मोति लए पूजल इन्दु ॥१४॥
भनइ विद्यापति रसमय बानी।
नागरि रम पिय-अभिमत जानी ॥१६॥

१—आकुल=व्यग्र, चंचल, छिटके हुए। चिकुर=केश बेढ़लि=घेर लिया। ३—दुइ चेतन=दो चतुर (राधा-कृष्ण)। ५—विलम्बित=लटका हुआ। ६—बम=वमन करता है, उगलता है। ७—ओज= (यहाँ) लाज। ९—रटत=बजती हुई। नितम्बिनि=स्त्री। छाज=शोभती है। ११—फूजल=खुले हुए। १६ रम=रमती है। अभिमत=इच्छा।

(१७१)

विगलित चिकुर मिलित मुखमंडल
चाँद वेढ़ल घनमाला।
मनिमय कुंडल स्रवन दुलित भेल
घाम तिलक वहि गेला ॥२॥
सुन्दरि तुअ मुख मङ्गल-दाता।
रति-विपरीत समर जदि राखवि
कि करब हरि हर-धाता ॥४॥
किंकिन किनिकिनि कंकन कनकन
घनघन नूपुर वाजे।
रति-रन मदन पराभव मानल
जय-जय डिमडिम वाजे ॥६॥
तिल एक जघन सघन रव करइत
होअल सैनक भग।
विद्यापति कबि इ रस गावए
जामुन मिलली गंग ॥८॥

१—विगलित=बिखरे हुए। घनमाल=मेघसमूह। २—स्रवन=कान। दुलित=डोलता हुआ। ४—समर युद्ध। राखबि=रक्षा करोगे। धाता=ब्रह्मा। ६—आज रति। युद्ध में कामदेव हार गया है, उसीको-जय भरी बज रही है। ७—तिल एक=एक क्षण के लिये सघन जघन=पुष्ट जांघ। रव=शब्द। होअल=हो गया ८—जामुन=जमुना।

(१७२)

सखि हे कि कहब किछु नहि फूर।
सपन कि परतेख कहए न पारिए
किए नियरे किए दूर ॥ २ ॥
तड़ित-लता तल जलद समारल
आँतर सुरसरि धारा।
तरल तिमिर ससि सूर गरासल
चौदिस खसि पड़ु तारा ॥ ४॥
अम्बर खसल धराधर उलटल
धरनी डगमग डोले।
खरतर बेग समीरन संचरु
चंचरिगन करु रोले ॥ ६ ॥
प्रनय-पयोधि-जले तन झाँपल
इ नहि जुग अवसान।
के बिपरीत कथा पतिआयत
कबि बिद्यापति भान ॥ ८॥

१—किछु नहि फूर=कहने की स्फूर्ति नहीं होती। २—परतेख=प्रत्यक्ष। किए=क्या। नियरे=निकट। ३—तड़ित-लता=बिजली (राधा)। तल=नीचे। जलद=मेघ (कृष्ण)। आँतर=बीच में। सुरसरि धारा=गंगा (हार)। ४—तरल तिमिर=चंचल अंधकार (केश)। ससि=चंद्रमा (मुख)। सूर=सूर्य (सिन्दूर-बिन्दु)। खसि=पड़ु=गिर पड़े। तारा=नक्षत्र (माथे पर के फूल)। ५—अम्बर=(१) आकाश (२) वस्त्र।

(१७३)

दुहुक संजुत चिकुर फूजल।
दुहुक दुहू बलाबल बूझल ॥ २ ॥
दुहुक अधर दसन लागल।
दुहुक मदन चौगुन जागल ॥ ४ ॥
दुअओ अधर करए पान।
दुहुक कंठ आलिंगन दान ॥६॥
दुअओ केलि सयँ सयँ भेलि।
सुरत सुखे बिभावरि गेलि । ८ ॥
दुअओ सअन चेत न चीर।
दुअओ पियासल पीबए नीर ॥ १० ॥
भन विद्यापति संसय गेल।
दुहुक मदन लिखन देल ॥१२॥

धराधर=(१) पर्वत (२) कुच । उलटल=उलट पड़ा । धरनी=(१) पृथ्वी (२) नितम्ब । ६—खरतर=तीव्र । समीरए=(१) हवा (२) निःश्वास । चंचरिगन=(१) भ्रमर (२) किंकिणी आदि । रोले=शोर । ७—प्रनय-पयोधि=प्रेम का समुद्र । जुग_ पवसान=युग का अंत विपरीत रति का वर्णन है । १—संजुत=साथ ही साथ । चिकुर=केश । फूजल=खुल गया । २—बलाबल=ताकत और कमजोरी । ३—अधर=नीचे का ओष्ठ । दसन=दाँत । ७—केलि=कामक्रीड़ । सयँ सयँ = साथ ही साथ । ८—बिभावरि=रात । ९—दोनों ही शय्या पर अपने-अपने वस्त्र तक नहीं सँभालते । १०—पिआसल=प्यासा ।

वसंत

(१७४)

माघ मास सिरि पंचमी गँजाइलि
नवम मास पंचम हरुआई।
अति घन पीड़ा दुख बड़ पाओल
बनसपति भेलि धाईं हे॥ २॥
सुभ खन बेरा सुकुल पकख हे
दिनकर उदित-समाई।
सोरह सम्पुन बतिस लखन सह
जनम लेल ऋतुराई हे॥ ४॥
नाचए जुबतिजना हरखित मन
जनमल बाल मधाई हे।
मधुर महारस मङ्गल गावए
मानिनि मान उड़ाई हे॥ ६॥

१—सिरिपंचमी=माघ शुक्ल पंचमी। गँजाइलि=पूर्णगर्भा हुई। नवम मास=बैसाख में वसंत का अंत होता है, ज्येष्ठ से माघ तक नौ महीने हुए। पंचम हरुआई=पाँचवाँ दिन होने पर। (वैद्यक के अनुसार नौ महीने पाँच दिन पर पुष्ट बालक पैदा होता है)। २-घन=अधिक। ३—खन=क्षण। बेरा=बेला, समय। सुकुल पक्ख=शुक्लपक्षी। दिनकर=सूर्य। उदित समाई=उदय के समय। ४—सोरह सम्पुन=सोलह अंगों से सम्पूर्ण। बतिस लखन=बत्तिस लक्षण। ऋतुराई=बसंत। ५—जनमल=जन्म लिया। मधाई=माधव (वसंत)। ६—उड़ाई=उड़ा ले गया, नष्ट किया।

वह मलयानिल ओत उचित है
नव घन भओ उजियारा।
माधवि फूल भेल मुकुता तुल
ते देल बन्दनबारा ॥ ८ ॥

पीअरि पाँड़रि महुअरि गावए
काहरकार धतूरा।
नागेसर--क संख धूनि पूर
तकर ताल समतूरा ॥ १० ॥

मधु लए मधुकर बालक दएइलु
कमल-पंखरी-लाई।
पओनार तोरि सूत बाँधल कटि
केसर कएलि बघनाई ॥ १२ ॥

नव नव पल्लव सेज ओछाओल
सिर देल कदम्बक माला।
बैसलि भमरी हरउद गावए
चक्का चन्द निहारा ॥ १४ ॥

७—मलय पवन वह रहा है, उससे ओट करना उचित (क्योंकि शिशु को हवा लगने का भय है ; अतः नवीन मेघ छा गये। ८—मुकुता तुल=मुक्ता के समान। पीअरि पाँड़रि=फूल विशेष। महुअरि=गीत विशेष। काहरकार=तुरही। तकर=उसका। समतूरा=समान। ११—(जन्म होने पर शिशु को पहले मधु चटाया जाता है)। दएहलु=ला दिया। १२—पओनार=पद्मनाल। कटि=कमर में। [लड़के की कमर में सूत बांधा जाता है]। बघनाइ=

कनअ केसुअ सुति-पत्र लिखिए हलु
रासि नछत कए लोला ।
कोकिल गनित-गुनित भल जानए
रितु बसंत नाम थोला ॥१६॥

× × × ×

बाल बसंत तरुन भए धाओल
बढ़ए सकल ससारा ॥ १८ ॥
दखिन पवन घन अंग उगारए
किसलय कुसुम-परागे ।
सुललित हार मजरि घन कज्जल
अखितौ अंजन लागे ॥ २० ॥
नव बसंत रितु अगुसर जौवति
बिद्यापति कवि गावे ।
राजा सिवसिंह रूपनरायन
सकल कला मनभावे ॥ २२ ।

बाघनख (लड़के की कमर में पहनाया जाता है) । १३—ओछाओल = बिछाया । सिर ·· = कदम्ब की माला सिरहाने (तकिये के रूप में) रक्खी । १४—हरडव=रलने का गीत । भमरी=भ्रमरी । १५—कनअ = सोना । केसुअ = पलास । सुति-पत्र = जन्मपत्र । नक्षत = नक्षत्र । १६—कोकिल गणित की गणना खूब जानती थी, उसीने बसंत नाम रक्खा । १८—बीच की एक पंक्ति गायब है । १९,२०—दक्षिण पवन किसलय और पुष्प-पराग लेकर उस शरीर में उबटन लगाता है । मंजरी की सुन्दर हार गले में है, मेघ ने उसकी आँखों में काजल लगा दिया ।

(१७५)

आएल रितुपति राज वसंत।
धाओल अलिकुल माधवि-पंथ ॥ २ ।
दिनकर-किरन भेल पौगंड।
केसर कुसुम धएल हेमदंड ॥ ४ ॥
नृप-आसन नव पीठल पात।
कांचन कुसुम छत्र धरु माथ ॥ ६ ॥
मौलिक रसाल-मुकुल भेल ताय।
समुख हि कोकिल पञ्चम गाय। ८ ॥
सिखिकुल नाचत अलिकुल यंत्र।
द्विजकुल आन पढ़ आसिख मंत्र ॥ १० ॥
चन्द्रातप उड़े कुसुम पराग।
मलय पवन सह भेल अनुराग। १२ ॥

१—आएल=आया। २—धाओल=दौड़ा। अलिकुल=भ्रमर-समूह। माधवि-पंथ माधवी की ओर। ३—दिनकर=सूर्य। भेल=हुआ। पौगंड=किशोरावस्था, कुछ-कुछ तीव्र। हेमदंड=सोने का डंडा, आगा। "मदन-महीपति कनकदंड रुचि केसर-कुसुमविकास—गीतगोविन्द।" ५—पीठल=वृक्ष-विशेष, पिठवा। पात=पत्ता। काँचनकुसुम=चम्पा। ७—मौलि=किरीट। रसाल मुकुट=आम की मंजरी। ताय=उसके। ९—सिखि=मोर। अलिकुल यंत्र=भौरे बाजा बजा रहे हैं। १०—द्विजकुल=(१) पक्षी (२) ब्राह्मण (पक्षी को द्विज इसलिये कहा जाता है कि इसका भी जन्म दो बार होता है, एक बार अंडे के रूप में, पुनः

कुंदवल्ली तरु धएल निसान।
पाटलतून अशोक-दलबान ॥१४॥

किसुक लवॅग-लता एक संग।
हेरि सिसिर रितु आगे दल भंग ॥१६॥

सैन साजल मधु-मखिका कूल।
सिसिरक सबहु कएल निरमूल ॥ १८ ॥

उधारल सरसिज पाओल प्रान।
निज नव दल करु आसन दान ॥२०॥

नव वृन्दावन राज बिहार।
बिद्यापति कह समयक सार ॥२१॥

पक्षी के रूप में।)आन=आकर। आशिख मंत्र=आशीर्वादात्मक श्लोक। ११—चंद्रातप=चँदोवा। फूलों के पराग ही चँदोवे से उड़ रहे हैं। १२—मलय पवन=मलयाचल से आनेवाली हवा, दक्षिण पवन। सह=साथ। कुंदवल्ली=वृक्ष विशेष। निशान=पताका। पाटल तून=पाटल के पत्ते ही तूण (तरकश] है। अशोक दलबान=अशोक के पत्ते बाण है। १५—किंसुक=पलास। [धनुष के समान] लवँगलता [ताँत के समान। १६—आगे दल भंग=पहले ही सैन्य भंग हो गया। १७—कूल=कुल। १९—उधारल=उद्धार किया। पाओल=पाया। २०—दल=पत्ता।

अर्थो गिरामपिहितः पिहितश्च कश्चित्।
सौभाग्यमेति मरहट्टवधूकुचाभः॥
नान्ध्रीपयोधरइवातितरां प्रकाशो।
नो गुर्जरीस्तन इवातितरां निगूढः॥

(१७६)

नव वृन्दावन नव नव तरुगन
नव नव विकसित फूल।
नवल बसंत नवल मलयानिल
मातल नव अलि कूल ॥ २ ॥
बिहरइ नवलकिसोर।
कालिंदी-पुलिन-कुंज वन सोभन
नव नव प्रेम-बिभोर ॥ ४ ॥
नवल रसाल-मुकुल-मधु मातल
नव कोकिल कुल गाय।
नवयुवती गन चित उमताअई
नव रस कानन धाय ॥ ६ ॥
नव जुवराज नवल वर नागरि
मीलए नव नव भाँति।
निति निति ऐसन नव नव खेलन
विधापति मति माति ॥ ८ ॥

१—नव=नवीन। विकसित=खिले हुए। २—मलयानिल=मलय-पवन। मातल =पागल बना। अलिकूल=भौरे। ३—बिहरइ=विहार करता है। नवल किसोर=युवक कृष्ण। ४—कालिंदी=यमुना। पुलिन=किनारे। सोभन =सुशोभित। प्रेम विभोर=प्रेम में बिसुध। ५—नई आम की मंजरी के मधु में मस्त बनी नई कोयल गा रही है ६—उमताअई=उन्मत्त हो जाता है। ८—ऐसन=इस प्रकार का। खेलन=क्रीड़ा। मति =मत्त बनी।

(१७७)

लता तरुअर मंडप जीति।
निरमल ससधर धवलिए भीति॥ २॥
पउँअ नाल अइपन भल भेल।
रात परीहन पल्लव देल॥ ४॥
देखह माइ हे मन चित लाय।
बसन्त-बिबाहा कानन-थलि आय॥ ६॥
मधुकरि-रमनी मंगल गाब।
दुजबर कोकिल मंत्र पढाब॥ ८॥
करु मकरंद हथोदक नीर।
बिधु बरआती धीर समीर॥ १०॥
कनअ किसुक मुति तोरन तूल।
लावा बिथरल बेलिक फूल॥ १२॥
केसर कुसुम करु सिंदूर दान।
जओतुक पाओल मानिनि मान॥ १४॥
खेलए कौतुक नव पँचबान।
बिद्यापति कवि दृढ़ कए भान॥ १६॥

१—लता और वृक्ष ने मानो मंडप को जीत लिया—लता और वृक्ष ही मंडप है। २—निरमल=स्वच्छ। ससधर—चंद्रमा। धवलिए =उज्जवल कर दिया (चूना पोत दिया)। भीति—दीवार। ३—पउँअ नाल=पद्मनाल, कमल का नाल। अइपन=अरिपन (जमीन पर का मांगलिक चित्र)। ४—रात=लाल। परीहन=परिधान, वस्त्र। ५—माइ हे=अरी मैया। ६—कानन थलि=बनस्थली। ७—मधुकरि-रमनी=

(१७८)

नाचहु रे तरुनी तजहु लाज।
आएल बसन्त रितु बनिक राज ॥ २ ॥
हस्तिनि, चित्रिनि, पदुमिनि नारि।
गोरी सामरी एक वूढ़ि बारि ॥ ४ ॥
विविध भाँति कएलन्हि सिंगार।
पहिरल पटोर गृम भूल हार ॥ ६ ॥
केओ अगर चंदन घसि भट कटोर।
ककरहु खोइँछा करपुर तमोर ॥ ८ ॥
केओ कुमकुम मरदाव आँग।
ककरहु मोतिअ भल छाज माँग ॥ १० ॥

गौरी रूप स्त्री। ८—दुजबर=द्विज, श्रेष्ठ। ९—हथोदक=हस्तोदक, जो पानी हाथ में लेकर विवाह का संकल्प पढ़ा जाता है। १०—बिव=चंद्रमा। समीर=पवन। ११—कनअ=सोना। तोरन तून=तोरन के समान। १२—लावा=शादी के समय धान का लावा (खील) छींटा जाता है। —१४जओतुक=दहेज।

२—बनिक-राज=व्यापारी-श्रेष्ठ। ४—बारि=बाला, नवयुवती। ६—पटोर=रेशमी वस्त्र। गृम=गले में ७—घसि=घिसकर। ८—ककरहु=किसी के। करपुर=कपूर। तमोर=पान। ९—कुमकुम=केशर। मरदाव=मर्दन कराती है। मलवाती है। १०—मोतिय=मोती। छाज=शोभता है। माँग=सींथ, सीमंत।

Poets are long-lived race than heroes; they breathe more of the air of immortality-Hazlite

(१७६)

अभिनव पल्लव बइसक देल ।
धवल कमल फुल पुरहर भेल ॥२॥
करु मकरंद मंदाकिनि पानि ।
अरुन असोग दीप दहु आनि ॥४॥

माइ हे आज दिवस पुनमंत ।
करिए चुमाओन राय बसंत ॥६॥
सपुन सुधानिधि दधि भल गेल ।
भमि भमि भमरि हँकारइ देल ॥८॥

टेसु कुसुम सिंदुर सम भास ।
केतिक-धुलि बिथरहु पटबास ॥१०॥
भनइ बिद्यापति कविकंठहार
रस बुझ सिवसिंघ सिव अवतार ॥१२॥

१—अभिनव=नवीन। बइसक=बैठने के लिये। २—धवल=स्वच्छ। पुरहर=ब्याह की डाली, मांगलिक कलश जो चूने से पुता रहता है। ३—मकरंद=पुष्परस। मंदाकिनी-पानि=गंगा का पानी। ४—अरुण=लाल। असोग=अशोक। दीप=दीपक। वहु आनि=ला दिया। ५—पुनमंत=पुण्यमय शुभ। ६—वसंत रूपी दुलहे का चुमाओन करो, चूमो। ७—सपुन=सम्पूर्ण, पूर्ण। सुधानिधि=चंद्र। दधि भेल=दही बना। ८—भमि=भ्रमण कर। भमरि=भ्रमरी, भौंरी। हंकारइ देल=बुलावा दे आई। ९—टेसू=पलाश। कुसुम=फूल। भास=मालूम होता है। १०—धूल=पराग। बिथरहु=बिखेर दिया है। पटबास=रेशमी वस्त्र। मांगलिक वाग।

(१८०)

दखिन पवन बह दस दिस रोल।
से जनि बादी भाषा बोल ॥२॥

मनमथ काँ साधन नहि आन।
निरसाएल से मानिनि मान ॥४॥

माइ हे सीत-बसंत बिबाद।
कओन बिचारब जय-अवसाद ॥६॥

दुहु दिस मधथ दिवाकर भेल।
दुजवर कोकिल साखी देल ॥७॥

नव पल्लब जयपत्रक भाँति।
मधुकर-माला आखर-पाँति ॥१०॥

बादी तह प्रतिबादी भीत।
सिसिर-बिन्दु हो अन्तर सीत ॥१२॥

कुंद-कुसुम अनुपम बिकसंत।
सतत जीत बेकताओ बसंत ॥१४॥

बिद्यापति कबि एहो रस भान।
राजा सिवसिंघ एहो रस जान ॥१६॥

१—रोल=शोर करता हुआ। ४—निरसाएल=नीरस कर दिया। ६—जय अवसाद=जीत और हार। ७—मधथ=मध्यस्थ। ८—दुजवर=(१) द्विज श्रेष्ठ (२) पक्षी श्रेष्ठ ६, १०—नये पल्लव जय-प त्र (जिस पर फैसला लिखा जाय) है और भौंरो के समूह अक्षरों की षि तियाँ हैं। ११,१२—मुद्दई (वसंत) से मुद्दालह डर गया और शीत ग शिर की ओस-बूँद में जा रहा। १४—वेकतओ=प्रकट किया।

(१८१)

अभिनव कोमल सुन्दर पात।
सबारे बने जनि पहिरल रात ॥२॥

मलय-पवन डोलय बहु भाँति।
अपन कुसुम रस अपने माति ॥४॥

देखि देखि माधव मन हुलसंत।
बिरिदावन भेल बेकत बसंत ॥६॥

कोकिल बोलय साहर भार।
मदन पाओल जग नब अधिकार ॥८॥

पाइक मधुकर कर मधु पान।
भमि-भमि जोहए मानिनि-मान ॥१०॥

दिसि दिसि से भमि विपिन निहारि।
रास बुझावए मुदित मुरारि ॥१२॥

भनइ विद्यापति ई रस गाव।
राधा-माधव अभिनव भाव ॥१४॥

१—अभिनव=नवीन । पात=पत्ते । २—सबारे=सम्पूर्ण । रात=लाल (वस्त्र)। मानो समूचे वन ने लाल वस्त्र पहन लिया हो। ३—डोलए=बह रहा है । ४—माति=मत्त होकर । फूल अपने रस में आप ही पागल है । ५—हुलसंत=हुलसित हुआ । ६—बेकत भेल=प्रकट हुआ । ७—साहर=आम्रमंजरी । ८—मदन=कामदेव । ९—पाइक=पायक, दूत। मधुकर=भौंरा । १०—भमि-भमि=भ्रमण कर । जोहए=खोजता है । ११—विपिन=वन। निहारि=देखकर । १२—प्रसन्नचित्त कृष्ण रासलीला कर रहे हैं।

(१८२)

चल देखए जाऊ रितु बसंत।
जहां कुंद-कुसुम केतकि हसंत ॥ २ ॥

जहां चंदा निरमल भमर कार।
जहां रयनि उजागर दिन अँधार ॥ ४ ॥

जहां मुगुधलि मानिनि करए मान।
परिपंथिहि पेखए पंचबान ॥ ६ ॥

भनइ सरस कवि-कंठ-हार।
मधुसूदन राधा बन बिहार ॥ ८ ॥

(१८३)

मधुरितु मधुकर पाँति। मधुर कुसुम मधुमाति ॥
मधुर बृंदाबन मांझ। मधुर मधुर रसराज ॥
मधुर जुबति जन संग। मधुर मधुर रसरंग ॥
मधुर मृदंग रसाल। मधुर मधुर करताल ॥
मधुर नटन-गति भंग। मधुर नटनी नट संग ॥
मधुर मधुर रस गान। मधुर बिद्यापति भान ॥

३—निरमल=स्वच्छ। भमर=भ्रमर, भौंरा। कार=काला। ४—जहाँ रात उजली-प्रकाशमय (फूलों और चन्द्र के कारण) और दिन अंधकार पूर्ण (भौंरों और गुल्म-लताओं के कारण)। ६—परिपंथिहि=पथिकों को, विरोधियों को। पेखय=देखता है। पंचवान=कामदेव।

मधुरितु=बसंत। मधुकर=भौंरा। मधुमाति=मधू से मत्त। मांझ=में। रसराज=शृंगार। मधुर नृत्य का गति-भंग (भावभंगी) और मधुर नाचनेवाली के साथ (मधुर) नट का (मधुर) संग।

(१८४)

बाजत द्रिगि द्रिगि धौद्रिम द्रिमिया।
नटति कलावंत माति श्याम संग
कर करताल प्रबन्धक ध्वनिया ॥२॥

डम डम डंफ डिमिक डिम मादल
रुनु झुनु मंजीर बोल।
किंकिनि रनरनि बलआ कनकनि
निधुवन रास तुमुल उतरोल ॥४॥

बीन, रबाब, मुरज स्वरमंडल
सा रि ग म प ध नि सा बहु निधि भाव।
घटिता घटिता धुनि मृदंग गरजनि
चंचल स्वरमंडल करु राव ॥६॥

स्रम भर गलित लुलित कबरीयुत
मालति माल बिथारल मोति।
समय बसंत रास-रस वर्णन
विद्यापति मति छोभित होति ॥८॥

२—नटति=नाच रही है। माति=मत्त होकर। ध्वनिया=आवाज। ३—मादल=एक बाजा। ४—बलआ=कँगना। निधुवन......=निधवन में रासलीला जोश के साथ हो रही है। ५—रबाब=सारंगी के ढंग का एक बाजा। स्वरमंडल=वीणा का एक भेद। ६—राव=स्वर। ७—परिश्रम के कारण पसीना चल रहा है, केश चंचल हो इधर-उधर छिटके हैं और मालती की माला मोती बिखेर रही है। ८—छोभित=क्षोभित, चंचल।

(१८५)

रितुपति-राति रसिक रसराज ।
रसमय रास रभस रस मांझ ॥२॥
रसमति रमनि-रतन धनि राहि ।
रास रसिक सह रस अवगाहि ॥४॥
रंगिनि गन सब रंगहि नटई ।
रनरनि कंकन किंकिन रटई ॥६॥
रहि-रहि राग रचय रसवंत ।
रतिरत रागिनि रमन बसंत ॥८॥
रटति रेवाब महतिक पिनास ।
राधारमन करु मुरलि बिलास ॥१०॥
रसमय बिद्यापति कवि भान ।
रूपनारायन भूपति जान ॥१२॥

(१८६)

मलय पवन वह । वसंत बिजय कह ॥
भमर करइ रोर । परिमल नहि ओर ॥
रितुपति रँग देला । हृदय रभस भेला ॥
अनंग मंगल मेलि । कामिनि करथु केलि ॥
तरुन तरुनि संगे । रयनि खेपवि रगे ॥
बिहरि बिपदि लागि । केसु उपजल आगि ॥
कवि बिद्यापति भान । मानिनी जीवन जान ॥
नृप रुद्रसिंह बरु । मेदिनि कलपतरु ॥

महतिक = बड़ी वीणा । पिनास = एक वाद्ययंत्र । खेपबि = बितायेगा ।

विरह

(१८७)

सखि हे बालम जितब विदेस।
हम कुलकामिनि कहइत अनुचित
तोहहुँ दे हुनि उपदेस ॥ २ ॥

ई न बिदेसक बेलि।
दुरजन हमर दुख न अनुमापब
तेँ तोहे पिया लग मेलि ॥४॥

किछु दिन करथु निवास।
हम पूजल जे सेहे पए भुंजब
राखथु पर-उपहास ॥६॥

होयताह किए वध-भागी।
जेहि खन हुन मन जाएब चितब
हमहु मरब धसि आगी ॥८॥

विद्यापति कवि भान।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ रमान ॥१०॥

१—जितब=जीतगे । (अपशकुन समझकर 'जायेंगे' ऐसा नहीं कहती) । २—तोहहुँ=तुम भी । हुनि=उनको) ३—बेलि=वेला, समय । ४—अनुमापब=समझेंगे । तें तोहे पिया लग मेलि=इसी लिये तुम्हें प्रीतम के निकट भेज रही हूँ ५—करथु=करें ।६—जैसी पूजा (काम) की होगी, वैसा फल मैं भोगूंगी, वे मुझे केवल दूसरे की निन्दा से बचा लें । ७—होएताह=होवेंगे । किये=क्यों । वध भागी=हत्या का भागी ८—जाएब चितब=जाने को सोचेंगे ।

(१८८)

माधव, तोहें जनु जाह विदेस।
हमरा रंग रभस लए जएबह
लएबह कोन सँदेस ॥२॥
बनहि गमन करु होएति दोसर मति
बिसरि जाएब पति मोरा।
हीरा मनि मानिक एको नहि माँगब
फेरि माँगब पहु तोरा ॥४॥
जखन गमन करु नयन नीर भरु
देखहु न भेल पहु ओरा।
एकहि नगर बसि पहु भेल परबस
कइसे पुरत मन मोरा ॥६॥
पहु सँग कामिनि बहुत सोहागिनि
चंद्र निकट जइसे तारा।
भनइ विद्यापति सुनु वर जौबति
अपन हृदय धरु सारा ॥८॥

१—जनु जाह=मत जाओ। २—रंग रभस=आमोद प्रमोद। ३—मोरा बिसरि जायब=मुझे भूल जाओगे। ५—नीर=आँसू। पहु ओरा=प्रीतम की ओर। ६—पुरत=पूरा होगा। ८—सारा=(यहाँ) धैर्य।

———

"सत्सूत्रसंविधान सदलंकारं सुवृत्तमच्छिद्रम्।
को धारयति न कण्ठे सत्काव्यं माल्यमर्घ्यं च ॥"

(१८९)

कालि कहल पिया ए सांझहि रे
जाएब मोयँ मारुश्र देस ।
मोयँ अभागलि नहि जानलि रे
सँग जइतश्रों जोगिन वेस ॥२॥
हृदय मोर वड़ दारुन रे
पिया विनु विहरि न जाए ॥३॥

× × × ×

एक सयन सखि सूतल रे
आछल वालम निसि मोर ।
न जानल कति खन तेजि गेल रे
बिछुरल चकेवा जोर ॥४॥
सून सेज हिय सालए रे
पिया बिनु घर मोयँ आजि ।
बिनति कराश्रों सहलोलिनि रे
मोहि देह अगिहर साजि ॥७॥
बिद्यापति कवि गाश्रोल रे
आबि मिलब पिय तोर ।
लखिमा देइ वर नागर रे
राय सिवसिंघ नहि भोर ॥८॥

(१९०)

मधुपुर मोहन गेल रे
मोरा बिहरत छाती ।
गोपी सकल बिसरलनि रे
जत छल अहिबाती ।।२।।
सूतलि छलहुँ अपन गृह रे
निन्दइ गेलउँ सपनाई ।
करसौं छुटल परसमनि रे
कोन गेल अपनाइ ।।४।।
कत कहबो कत सुमिरब रे
हम भरिए गरानि ।
आनक धन सों धनवंती रे
कुबजा भेल रानि ।।६।।

१—मधुपुर=मथुरा । गेल=गया । मोरा=मेरा । बिहरत= फटती है । २—बिसरलनि— बिस्मरण हो गये, भूल गये । जत= जितनी । छल=थीं । अहिवाती=सौभाग्यवती । ३—सूतलि= सोई । छलहुँ=(मैं) थी । अपन=अपने । निन्दइ गेलउँ सपनाइ= नींद में स्वप्न देखने लगी । ४—कर=हाथ छूटल=छूट गया । परसमनि=स्पर्शमणि, पारस । कोन—कौन । गेल अपनाइ= अपना गया । ५—कत=कितना । कहबो=कहूँगी । सुमिरब= स्मरण करूँगी । भरिए गरानि=ग्लानि से भर गई हूँ । ६—आनक= दूसरे का । सो=से । भेल=हुई ।

गोकुल चान चकोरल रे
चोरी गेल चंदा।
बिछुड़ि चलति दुहु जोड़ी रे
जीव दइ गेल धंदा ॥८॥
काक भाख निज भाखह रे
पहु आओत मोरा।
खीर खाँड भोजन देव रे
भरि कनक कटोरा ॥१२॥
भनहि विद्यापति गाओल रे
धैरज धर नारी।
गोकुल होयत सोहाओन रे
फेरि मिलत मुरारी ॥१२॥

७—गोकुल का चन्द्रमा चकोर बन गया—जो यहाँ चन्द्रमा के समान था—जिसे हजार-हजार गोपियाँ चकोरी की तरह देखती थीं—वही आज स्वयं चकोर बनकर दूसरी को—कुब्जा को देख रहा है। हा! मेरा चन्द्र चोरी चला गया। ८—बिछुड़ि=बिछुड़कर। चलति=चली। दुहु जोड़ी=दोनो (राधा-कृष्ण) की जोड़ी। जीव दइ गेल धंदा=प्राणों में सन्देह दे गया। ६ काक=काग, कौआ। भाख=बोली। भाखह=बोलो। पहु=प्रीतम। आओत=आयेगा। १०—खीर=दूध। देव=दूँगी। कनक=सोना। १२—सोहाओन=शोभायमान।

"सुधासितरसास्वादबद्धरोमाञ्चकञ्चुका।
विनापि कामिनीसंगं कवयः सुखमासते॥"

(१९१)

सरसिज विनु सर सर बिनु सरसिज
की सरसिज बिनु सूरे।
जौवन बिनु तन तन बिनु जौवन
की जौबन पिय दूरे ॥२॥
सखि हे मोर वड़ देब विरोधी।
मदन वेदन वड़ पिया मोर बोलछड़
अबहु देहे परबोधी ॥ ४ ॥
चौदिस भमर भम कुसुम-कुसुम रम
नीरसि माँजरि पीवइ।
मंद पवन चल पिक कुहु-कुहु कह
सुनि बिरहिनि कइसे जीवइ ॥६॥
सिनेह अछल जत हम भेव न टूटत
बड़ बोल जत सब थीर।
अइसन के बोल दहु निज सिम तेजि कहु
उछल पयोनिध नीर ॥ ८ ॥
भनइ विद्यापति अरेरे कमलमुखि
गुनगाहक पिया तोरा।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
सहजे एको नहि भोरा ॥ १० ॥

१—की=क्या ? सूरे = सूर्य। ४—बोलछड़ = प्रतिज्ञाभंग करनेवाला। देहे = देती हो। ५—भमर भम = भौरे भ्रमण कर रहे हैं। ७—अछल=था। भेव=समझना। बड़ बोल जत सब

(१९२)

सखि हे कतहु न देखि मधाई।
काँप शरीर थीर नहि मानस
अवधि नियर भेल आई॥२॥
माधव मास तीथि भयो माधव
अवधि कइए पिआ गेला।
कुच-जुग संभु परसि कर बोललन्हि
तें परतिति मोहि भेला॥४॥
मृगमद चानन परिमल कुंकुम
के बोल सीतल चंदा।
पिया बिसलेख अनल जों बरिए
बिपति चिन्हिए भल मंदा॥६॥
भनइ बिद्यापति सुन बर जौबति
चित जनु झंखह आजे।
पिय बिसलेख-कलेस मेटाएत
बालम बिलसि समाजे॥८॥

थीर=बड़े लोग जो कुछ कहते हैं, पक्का होता है। ८—के=कौन। सिम=सीमा।

१—मधाई—माधव, कृष्ण। २—मानस=मान। अवधि=मिलने का दिन। नियर=निकट। ३—माधव मास=वैशाख। माधव तिथि=एकादशी। गेला=गये। ४—कर=हाथ। तें=उससे। ५—के=कौन। ६—बिसलेख—विश्लेष, विच्छेद। अनल=आग। ७—झंखह=झंखना, पश्चात्ताप करना।

(१६६)

लोचन धाए फेघायल
हरि नहि आयल रे।
सिव-सिव जिवओ न जाए
आस अरुझाएल रे॥ २॥

मन करे तहाँ उड़ जाइअ
जहाँ हरि पाइअ रे।
पेम-परसमनि जानि
आनि उर लाइअ रे॥४॥

सपनहु संगम पाओल
रंग बढाओल रे।
से मोरा बिहि बिघटाओल रे
निन्दओ हेराएल रे॥ ६॥

भनइ विद्यापति गाओल
धनि धइरज धर रे।
अचिरे मिलत तोहि बालम
पुरत मनोरथ रे॥ ८॥

१—धाए=दौड़कर। फेधाएल=फेन सहित हो गये, फूल गये। २ जिवओ=प्राण भी। अरुझाएल=उलझ पड़े हैं। ३—मन करे=इच्छा होती है। ४—उर लाइअ=छाती से लगा लूँ। ५—संगम=मिलन, भेंट। पाओल=पाया। ६—बिहि=ब्रह्मा। बिघटाओल=नष्ट किया। निन्दओ हेराएल=नींद भूल गई, जाती रही। ८—अचिरे=शीघ्र ही पूरा होगा।

(१६४)

सखि मोर पिया।
अबहु न आओल कुलिस-हिया ॥ २ ॥
नखर खोआओलुँ दिवस लिखि लिखि।
नयन अँधाओलुँ पियापथ देखि ॥ ४ ॥
जब हम बाला परिहरि गेला।
किए दोस किए गुन बुझइ न भेला ॥ ६ ॥
अब हम तरुनि बुझब रस-भास।
हेन जन नहि मोर काहे पिआ पास ॥ ८ ॥
आएब हेन करि पिआ मोरा गेला।
क जत गुन बिसरित भेला ॥१०॥
भनइ विद्यापति सुन अब राइ।
कानु समुझाइत अब चलि जाइ ॥१२॥

२—आओल = आया। कुलिस-हिया = वज्र के ऐसा कठोर-हृदय। ३—नखर = नह। खोआओलुँ = नष्ट कर दिया। प्रीतम के आने का दिन लिखते-लिखते मेरे नख घिस गये। ४—अँधाओलुँ = अंधा बना लिया। पियापथ = प्रीतम की राह। ५—बाला = भोली-भाली किशोरी। परिहरि गेला = छोड़कर चले गये। ६—किये = क्या। बुझइ न भेला = कुछ न जान सके। ७—तरुनि = युवती। रस-भास = रस की बातें। ८—हेन = इस समय। १०—पुरबक = पूर्व का। बिसरित = विस्मरण। ११—राइ = राधा। १२—कानु = कृष्ण।

(१९५)

आसक लता लगाओल सजनी
नयनक नीर पटाय।
से फल अब तरुनत भेल सजनी
आँचर तर न समाय॥ २॥
काँच साँच पहु देखि गेल सजनी
तसु मन भेल कुह भान।
दिन-दिन फल तरुनत भेल सजनी
अहु खन न करु गेआन॥ ४॥
सब कर पहु परदेस बसि सजनी
आयल सुमिरि सिनेह
हमर एहन पति निरदय सजनी
नहि मन बाढ़य नेह॥ ६॥
भनइ बिद्यापति गाओल सजनी
उचित आओत गुनसाह।
उठि बधाब करु मन भरि सजनी
अब आओत घर नाह। ८॥

१,२—सखि, आंखो की पानी से सींचकर आशा की लता मैंने लगाई। अब उस लता का फल (कुच) जवानी में आ गया, पुष्ट हो चला, वह अंचल के नीचे नहीं समाता। ३—सांच=सचमुच में। पहु=प्रीतम। तसु=उसके। कुह=कुहेला (निराशा)। अहुखन=इस समय भी। ६—एहन=ऐसा। ७—आओत=आयेगा। गुनसाह=गुणवान्। ८—बधाब=बधैया। नाह=पति।

(१६०)

कोन गुन पहु परबस भेल सजनी
बुझलि तनिक भल मंद।
मनमथ मन मथ तनि बिनु सजनी
देह दहए निसि चंद ॥ २ ॥
कहओ पिसुन सत अवगुन सजनी
तनि सम मोहि नहि आन।
कतेक जतन सौं मेटिए सजनी
मेटए न रेख पखान ॥ ४ ॥
जे दुरजन कटु भाखए सजनी
मोर मन न होए बिराम।
अनुभव राहु पराभव सजनी
हरिन न तज हिमधाम ॥ ६ ॥
चतओ तरनि जल सोखए सजनी
कमल न तजए पाँन।
जे जन रतल जाहि सौं सजनी
कि करत विहि भए बाँक ॥ ८ ॥
बिद्यापति कवि गाओल सजनी
रस बूझए रसमंत।
राजा सिवसिंघ मन दए सजनी
मोदवती दइ कंत ॥ १० ॥

१-तनिक=उनका। २—मनमथ मन मथ=कामदेव मन का मथन कर रहा है। तनि=उनके। ३—दुष्ट लोग भले ही उनके

(१६१)

माधव हमर रटल दुर देस ।
केओ न कहइ सखि कुसल-सनेस ॥ ४ ॥

जुग-जुग जीवथु बसथु लाख कोस ।
हमर अभाग हुनक नहि दोस ॥ ४ ॥

हमर करम भेल बिहि विपरीत ।
तेजलनि माधव पुरुबिल प्रीत ॥ ६ ॥

हृदयक वेदन बान समान ।
आनक दुःख आन नहि जान ॥ ८ ॥

भनइ विद्यापति कवि जयराम ।
दैव लिखल परिनत फल बाम ॥१०॥

सैकड़ों अवगुण मुझसे कहें, किन्तु मेरे लिये उनके समान दूसरा कोई नहीं है। ४—पखान=पत्थर। ५—बिराम=उदासीनता, (कृष्ण के प्रति)। राहु पराभव=राहु द्वारा हराये जाने पर, ग्रस लिये जाने पर। हिमधाम=चन्द्रमा। ७—तरनि=सूर्य। ८—रतल=अनुरक्त। कि करत... ...=ब्रह्मा विमुख होकर क्या करेगा!

१—रटल=चला गया। २—केओ=कोई। सनेस=संदेश। ३—जीवथु=जीयें। बसथु=बसें। ४-हुनक=इनका। ५—बिह=ब्रह्मा। ६—तेजलनि=छोड़ दिया। पुरुबिल=पूर्व का। ७—वेदन=वेदना, दुःख। ८—आनक=दूसरे का। १०—वाम=विपरीत।

"कृतमन्दपदन्यासा विकचश्रीरुचारुसन्दर्भगवती।
कस्य न कम्पयते कं जरेव जीर्णस्यसत्कविर्वाणी"

(१६८)

जौवन रूप अछल दिन चारि ।
से देखि आदर कएल मुरारि ॥ २ ॥

अब भेल झाल कुसुम रस छूछ ।
बारि-विहुन सर केओ नहि पूछ ॥ ४ ॥

हमरि ए बिनती कहब सखि रोय ।
सुपुरुष बचन अफल नहि होय ॥ ६ ॥

जावे रहइ धन अपना हाथ ।
तावे से आदर कर संग साथ ॥ ८ ॥

धनिकक आदर सब तहँ होय ।
निरधन बापुर पुछय न कोय ॥१०॥

भनइ बिद्यापति राखब सील ।
जो जग जीबिए नबओ निधिमील ॥१२॥

१—अछल=थे । २—से=वह । कएल=किया ३—झाल = कटु, गंधहीन । रस छूछ=रस से हीन । ४—बारि-बिहुन=पानी से रहित । सर=तालाब । केओ=कोई । ५—रोय=रोकर । ६—अफल=व्यर्थ । ७-जाबे=जबतक । ८-ताबे=तबतक । संग साथ=संगी-साथी, मित्र-कुटुम्ब । ९—धनिकक=धनियो का । सब-तहँ=सर्वत्र । १०—बापुर=बेचारा । ११—सील=मर्यादा १२—यदि जग में जीवित रहो, तभी नवो निधियाँ प्राप्त हों ।

poetry is at bottom a criticism of life. The greatness of a poet lies in his powerful and beautiful application of ideas to life.— Mathew Arnold.

(१९९)

सखि हे हमर दुखुख नहि ओर ।
इ भर बादर माह भादर
सून मंदिर मोर ॥ २ ॥

झंपि घन गरजंति संतत
भुवन भरि बरसंतिया ।
कन्त पाहुन काम दारुन
सघन खर सर हंतिया ॥ ४ ॥

कुलिस कत सत पात मुदित
मयूर नाचत मातिया ।
मत्त दादुर डाक डाहुक
फाटि जायत छातिया ॥ ६ ॥

तिमिर दिग भरि घोर यामिनि
अथिर बिजुरिक पाँतिया ।
विद्यापति कह कइसे गमाओब
हरि बिना दिन-रातिया ॥ ८ ॥

---

२ —(इस पद्य का यह चरण अत्यन्त प्रसिद्ध है। स्वयं रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कई बार इसे उद्धृत किया है) । भर=भरा हुआ। बादर=मेघ। ३—संतत=सदा। ४—पाहुन=प्रवासी। खर सर=तेज बाण। हंतिआ=मारता है। ५—कत सत=कई सौ। पात=गिरता है। मातिया=मत्त होकर है। ६—डाक=पुकारता है। डाहुक=एक बरसाती पक्षी। ७—दिग=दिशा। अथिर=चंचल। ८—कइसे=किस प्रकार। गमाओब=बिताऊँगी।

(२००)

मोर बन बन सोर सुनइत
बढ़त मनमथ पीर ।
प्रथम छोर असाढ़ आओल
अबहु गगन गँभीर ॥२॥
दिबस रयना अरे सखी
कइसे मोहन बिनु जाए ॥३॥
आवए साओन बरिख भाओन
घन सोहा ओन बारि ।
पंचसर-सर छुटत रे. कइसे
जीअए बिरहिन नारि ॥५॥
आवए भादो बेगर माधो
काँसो कहि एहि दुख ।
निडर डर डर डाक डाहुक
छुटत मदन बनूक ॥७॥
अछूह आसिन गगन-भासि न
घनन घनघन रोल ।
सिंह भूपति भनइ ऐसन
चतुर माम कि बोल ॥९॥

२—भाओन=जो मन को भावे । ५—पंचसर=कामदेव । ६—बेगर=बिना । काँसो=किससे । ७—डर डर डाक डाहुक—डाहुक (पक्षी-विशेष) डर डर शब्द से पुकार रहा है—मानों कामदेव का बंदुक छुट रहा हो । ८—अछूह=अउ=अस्ति आया । भासि=मालूम पडता है ।

(२०१)

फुटल कुसुम नव कुंज कुटिर बन
कोकिल पंचम गावे रे।
मलयानिल हिमसिखर सिधारल
पिया निज देश न आवे रे ॥२॥
चनन चान तन अधिक उतापए
उपवन अलि उतरोले रे ॥४॥
समय बसंत कंत रहु दुर देस
जानल बिधि प्रतिकूले रे ॥४॥
अनमिख नयन नाह मुख निरखइत
तिरपित न भेल नयाने रे।
ई सुख समय सहए एत संकट
अबला कठिन पराने रे ॥ ६ ॥
दिन-दिन खिन तनु हिम कमलिनि जनु
न जानि कि जिव परजंत रे।
बिद्यापति कह धिक धिक जीवन
माधव निकरुन कंत रे ॥ ८ ॥

१—फुटल = प्रस्फुटित हुआ, खिल उठा। २—मलयानिल हिमसिखर सिधारल = मलय-पवन हिमालय की ओर चला—दक्षिण-पवन बहने लगा। ३—चनन = चन्दन। चान = चन्द्रमा। उतापए = उत्तप्त कर देता है, जलाता है। अलि उतरोले रे = भौंरे गुंजार कर रहे हैं। ५—अनमिख = बिना पलक गिरे हुए। ७—हिम = बर्फ। परजंत = तक। ८—निकरुन = करुणा-रहित, कठोर।

सजनी कानुक कहबि बुझाई।
रोपि पेमक बिज अंकुर मूड़लि
बाँचब कौन उपाई ॥२॥
तेल-बिन्दु जैसे पानि पसारिए
ऐसन मोर अनुराग।
सिकता जल जैसे छनहि सूखए
तैसन मोर सुहाग ॥४॥
कुल-कामिनि छलौं कुलटा भए गेलौं
तिनकर बचन लोभाई।
अपने कर हम मूँड़ मुड़ाएल
कानु से प्रेम बढ़ाई ॥६॥
चोर-रमनि जनि मन मन रोअई
अम्बर बदन छिपाई।
दीपक लोभ सलभ जनि धाएल
से फल भुञइत चाई ॥८॥
भनई विद्यापति इह कलजुग रित
चिन्ता करह न कोई।
अपन करम-दोष आपहि भुंजइ
जे जन पर-बस होई ॥१०॥

१—कानुक = कृष्ण को। २—मूड़लि = तोड़ दिया। पसारिए—फैलता है। ४—सिकता = बालू। तैसन = वैसा। सुहाग = सौभाग्य। ५—छल = थी। कुलटा = व्यभिचारिणी। तिनकर = उनके। ६—मूंड़

(२०३)

के पतिआ लए जाएत रे
मोरा पियतम पास।
हिए नहि सहए असह दुख रे
भेल साओन मास ॥२॥
एकसरि भवन पिया बिनु रे
मोरा रहलो न जाय।
सखि अनकर दुख दारुन रे
जग के पतिआय ॥४॥
मोर मन हरि हरि लय गेल रे
अपनो मन गेल।
गोकुल तजि मधुपुर बस रे
कत अपजस लेल ॥६॥
विद्यापति कवि गाओल रे
धनि धरु पिय आस।
आओत तोर मनभावन रे
एहि कातिक मास ॥८॥

मुड़ाएल = बदनाम हुई। ७—चोर-रमनि=चोर की स्त्री। अम्बर=वस्त्र (चोरनारि जिमि प्रगट न रोई।—तुलसी] ८—सलभ=पतंग। जनि=ऐसा। भुञइत चाई = भोगना ही चाहिये। १०—भुंजइ=भोगता हूं।

१—के—कौन। २—भेल= हुआ, पाया। ३-एकसरि = अकेली। ४—अनकर=दूसरे का। पतिआय=विश्वास करता है। ५—हरि लय गेल=हरकर ले गये। अपनो=स्वयं भी। ८—आओत = आवेगा।

(२०४)

सजनी, के कह आओब मधाई।
बिरह - पयोधि पार किए पाओब
मझु मन नहि पतिआई ॥२॥
एखन-तखन करि दिवस गमाओल
दिवस - दिवस करि मासा।
मास - मास करि बरष गमाओल
छोड़लूँ जीवन आसा ॥४॥
बरस-बरस करि समय गमाओल
खोयलूं कानुक आसे।
हिमकर-किरण नलिनि जदि जारब
कि करब माधब मासे ॥६॥
अंकुर तपन-ताप जदि जारब
कि करब बारिद मेहे।
इह नव जौबन बिरह गमाओब
कि करब स पिया गेहे ॥८॥
भनइ बिद्यापति सुनु बर जौवति
अब नहि होह निरासे।
से ब्रजनन्दन हृदय अनन्दन
झटित मिलब तुअ पासे ॥१०॥

१—आओब=आवग २—पयोधि=समुद्र। ३—एखन-तखन=यह क्षण, वह क्षण। ५—खोयलूं=भुला दिया। कानुक=कृष्ण का। ६—हिमकर=चन्द्रमा। नलिनि=कमलिनी। जारब=जलायेगा।

(२०५)

अंकुर तपन-ताप जारब
कि करब बारिद मेह।
ई नव जौबन बिरह गमाओब
कि करब से पिया गेह ॥२॥
हरि हरि के इह दैब दुरासा।
सिन्धु निकट जदि कंठ सुखाएब
के दुर करब पियासा ॥४॥
चंदन तरु जब सौरभ छोड़ब
ससधर बरिखब आगि।
चिन्तामनि जब निज गुन छोड़ब
की मोर करम अभागि ॥६॥
साओन माह घन-बिन्दु न बरिखब
सुरतरु बाँझ कि छाँदे।
गिरिधर सेवि ठाम नहि पाएब
विद्यापति रहु धाँदे ॥८॥

कि=क्या। माधव मास=वैशाख [वसंत]। ७—तपन ताव=सूर्य की ज्वाला। ९—होह=होओ। झटित=शीघ्र।

३—के=कौन। ४—दुर करब=दूर करेगा। ५—सौरभ=सुगंध। ससधर=चन्द्रमा। वरिखब=वर्षा करेगा। ६—चितामनि=वह मणि, जिससे जो कुछ माँगे, दे दे। ७—घन विन्दु=मेघ की बूँद। सुरतरु=कल्पवृक्ष। बाँझ=वन्ध्या। कि छाँदे=किस प्रकार। ८—सेवि=सेवा कर। ठाम=जगह। धांदे=संदेह।

(२०६)

चानन भेल विषम सर रे
भूषन भेल भारी ।
सपनहुँ हरि नहि आएल रे
गोकुल गिरिधारी ॥२॥
एकसरि ठाढ़ि कदम-तर रे
पथ हेरछि मुरारी ।
हरि विनु हृदय दगध भेल रे
झामर भेल सारी ॥४॥
जाह जाह तोंहे ऊधो हे
तोंहे मधुपुर जाहे ।
चन्द्रबदन नहि जीवति रे
वध लागत काहे ॥६॥
भनइ विद्यापति तन मन रे
सुनु गुनमति नारी ।
आज आओत हरि गोकुल रे
पथ चलु झट झारी ॥८॥

१—चानन=चन्दन । विषम=कठोर । सर=वाण । भारी=भार-स्वरूप । ३—एकसरि=अकेले । पथ हेरथि=राह देख रही हैं । ४—दगध=दग्ध, जला हुआ । झामर=मलिन । ५—जाह=जाओ । मधुपुर=मथुरा । ६—जीवति=जीयेगी । वध=हत्या । काहे=किसे । ८—झट-झारी=झटकर, शीघ्र-शीघ्र ।

(२०७)

बिपत अपत तरु पाओल रे
पुन नव नव पात ।
बिरहिन-नयन विहल बिहि रे
अबिरल बरिसात ॥ २ ॥
सखि अंतर बिरहानल रे
नित बाढ़ल जाय ।
बिनु हरि लख उपचारहु रे
हिय दुख न मिटाय ॥ ४ ॥
पिय पिय रटए पपिहरा रे
हिय दुख उपजाव ।
कुदिना हित जन अनहित रे
थिक जगत सोभाव ॥ ६ ॥
भनइ विद्यापति गाओल रे
दुख मेटत तोर ।
हरखित चित तोहि भेटत रे
पिय नन्दकिसोर ॥८॥

१—विपत्ति-रूपी पत्रहीन वृक्ष ने पुनः[वर्षा आने पर] नये-नये पत्ते प्राप्त किये। २—बिहल=विधान किया, बनाया, पैठा दिया। बिहि=ब्रह्मा। अबिरल=लगातार, निरन्तर। ३—अंतर=भीतर, हृदय में। बिरानहल=बिरह-रूपी अग्नि। ४—लख=लाख। उपचार=उपाय। ६—कुदिना=कुदिन आने पर। अनहित=शत्रु। सोभाव=स्वभाव। थिक=है। ७—मेटत=मिटेगा।

मोर पिया सखि गेल दुर देस।
जौबन दए गेल साल सनेस ॥ १ ॥
मास अषाढ़ उनत नव मेघ।
पिया विसलेख रहओं निरथेघ ॥
कोन पुरुष सखि कोन से देस।
करब मोयँ तहाँ जोगिनी भेस ॥ २ ॥
साओन मास बरसि घन बारि।
पंथ न सूझे निसि अँधिआरि ॥
चौदिसि देखिए विजुरी रेह।
से सखि कामिनि जीवन सँदेह ॥ ३ ॥
भादव मास बरसि घन घोर।
समदिसि कुहुकय दादुल मोर ॥
चेहुँकि चेहुँकि पिया कोर समाय।
गुनमति सूतलि अंक लगाय ॥ ४ ॥
आसिन मास आस धर चीत।
नाह निकारुन न भेलाह हीत ॥
सर-वर खेलए चकवा हास।
बिरहिन बैरि भेल आसिन मास ॥ ५ ॥

१—साल = काँटा। सनेस = भेंट। २—उनत = उन्नत, चढ़ता हुआ। बिसलेख = विश्लेष, वियोग। रहओ = रहती हूँ। निरथेघ = निरवलम्ब। से = वह। ४—दादुल = मेढक। कोर = गोद। सुतलि = सोई। अंक = हृदय। ५—निकारुन = निष्करुण। भेलाह = हुआ। ६—दिगन्तर = दूर देश। बास = रहना। सुखराति = दीवाली की

कातिक कंत दिगन्तर बास।
पिय-पथ हेरि-हेरि भेलहुँ निरास॥
सुख सुखराति सबहु का भेल।
हमे दुखसाल सोआमि दय गेल॥ ६॥

अगहन मास जीव के अंत।
अबहु न आयल निरदए कंत॥
एकसरि हम धनि सूतओं जागि।
नाहक आओत खाएत मोहि आगि। ७।

पूस खीन दिन दीघरि राति।
पिया परदेस मलिन भेल काँति॥
हेरओं चौदिस झँखओं रोय।
नाह बिछोह काहु जन होय॥ ८॥

माघ मास घन पड़ए तुसार।
झिलमिल केचुआँ उनत थन हार॥
पुनमति सूतलि पियतम कोर।
बिधि वस दैव वाम भेल मोर॥ ९॥

रात। सोआमि=स्वामी। ७—सूतओं जागि=जागकर सोती हूँ। जब मुझे आग खा जायगी—जब मैं विरह-ज्वाला में मर जाऊँगी, तब प्रीतम व्यर्थ आयेंगे। ८—दीघरि=दीर्घ, बड़ी। झँखओं=झँखती हूँ। तुसार=बर्फ। झिलमिल=बारीक चोली में उभड़े हुए कुच हैं जिनके ऊपर हार है। वाम भेल=विमुख हुआ।

फागुन मास धनि जीव उचाट।
विरह-विखिन भेल हेरओ वाट॥
आयल मत्त पिक पंचम गाव।
से सुनि कामिनि जीवहु सताव॥१०॥

चैत चतुरपन पिय परवास।
माली जाने कुसुम विकास॥
भमि-भमि भमरा करु मधुपान।
नागर भइ पहु भेल अयान॥११॥

वैसाख तवे खर मरन समान।
कामिनि कंत हनय पंचवान॥
नहि जुड़ि छाहरि न वरसि बारि।
हम जे अभागिनि पापिनि नारि॥१२॥

जेठ मास ऊजर नव रंग।
कंत चरए खलु कामिनि-संग॥
रूपनरायण पूरथु आस।
भनइ विद्यापति बारह मास॥१३॥

१०—धनि जीव उचाट=बाला का जी उचट गया। विखिन= विक्षीण, अत्यन्त कृश। पिक=कोयल। से=वह। सताव=सताता है। ११—परवास=प्रवास=विदेश में। कुसुम विकास=फूल का खिलना। भमि=भ्रमण कर भमरा=भौंरा। नागर=चतुर। पहु=प्रीतम। १२—तवे=तव जाता है, गरम हो उठता है। खर=तीक्ष्ण। जुड़ि=ठंढा। छाहरि=छाया। वरिस=बरसता है। बारि=पानी। १३—ऊजर नवरंग=नये रंग उजड़ गये। खलु=निश्चय। पूरथु=पूरा करें।

(२०९)

माधव देखलि बियोगिनि वामे।
अधर न हास विलास सखी संग।
अहोनिस जप तुअ नामे ॥२॥
आनन सरद सुधाकर सम तसु
बोलइ मधुर धुनि बानी।
कोमल अरुन कमल कुम्हिलायल
देखि मन अइलहुँ जानी ॥४॥
हृदयक हार भार भेल सुबदनि
नयन न होय निरोधे।
सखि सब आए खेलाओल रँग करि
तसु मन किछुओ न बोधे ॥६॥
रगड़ल चानन मृगमद कुंकुम
सभ तेजलि तुअ लागी।
जनि जलहीन मीन जक फिरइछ
अहोनिस रहइछ जागी ॥८॥
दूति उपदेस सुनि गुनि सुमिरल
लइखन चलला धाई।
मोदवतीपति राघवसिंह गति
कवि विद्यापति गाई ॥१०॥

२—तसु=उसका। ४—कुम्हिलायल=मुरझा गया। अइलहुँ=मैं आई। ६—निरोधे=बंद। ७—रगड़ल=घिसा। चानन=चन्दन। मृगमद=कस्तूरी। कुंकुम=केशर। ८—जक=समान। फिरइछ=

(२१०)

लोचन नीर तटनि निरमाने।
करए कलामुखि तथिहि सनाने ॥२॥
सरस मृनाल करइ जपमाली।
अहोनिस जप हरिनाम तोहारी ॥४॥
बृन्दावन कान्हु धनि तप करई।
हृदय-बेदि मदनानल बरई ॥६॥
जिब कर समिध समर कर आगी।
करति होम बध होएबह भागी ॥८॥
चिकुर बरहि रे समरि कर लेआई।
फल उपहार पयोधर देआई ॥१०॥
भनई बिद्यापति सुनह मुरारी।
तुअ पथ हेरइत अछि बर नारी ॥१२॥

फिरती है। ६—तइखन = उसी क्षण।

१, २—आँखों के आँसुओं से नदी का निर्माण कर वह चन्द्रवदनी उसी में स्नान करती है। ३— मृनाल=मृणाल=कमल-नाल। करइ= बनाती है। जपमाली=जपमाला, सुमरनी। ६—हृदय-रूपी वेदी पर काम की अग्नि धधक रही है। ७, ८—अपने प्राणों को समिध (अग्निहोत्र की लकड़ी) बनाकर और स्मरण को अरणी (आगी=जिससे आग निकले, अरणी) करके वह होम कर रही है, तुम इसकी हत्या के भागी बनोगे। ९—चिकुर = केश। बरहि = बर्हि, कुश। समरि= सँभलकर १०—पयोधर = कुच। अछि=है।

(२११)

अकामिक मन्दिर भेलि वहार।
चहुँदिस सुनलक भमर-झंकार ॥२॥
मुरुछि खसल महि न रहलि थीर।
न चेतए चिकुर न चेतए चीर ॥४॥
केओ सखि वेनि धुन केओ धुरि झार।
केओ चानन अरगजओं सँभार ॥६॥
केओ बोलमंत्र कान तर जोलि।
केओ कोकिल खेद डाकिनि बोलि ॥८॥
अरे अरे अरे कान्हु की रभसि बोरि।
मदन-भुजँग डसु बालहि तोरि ॥१०॥
भनइ बिद्यापति एहो रस भान।
एहि बिष गारुड़ि एक पए कान ॥१२॥

१—अकामिक=अकस्मात्। भेलि वहार=बाहर हुई। २—भमर=भौंरा। ३ खसल=गिर पड़ी थीर=स्थिरता। ४—चेतए=सँभालती है। चिकुर=केश। चीर=साड़ी। ५—केओ=कोई। वेनि धुन=वेणी गूँथती है, वेणी सँभलती है। धुरि झार=धूल झाड़ती है। ६—अरगजओं=कस्तूरी आदि के लेप से। सँभार=सँभालती है। ७—कान तर=कान के निकट। जोलि=जोर से। ८—खेद=खदेड़ती है। ९—कि रभसि बोरि=व्यग्र रभस कर बोल रहे हो ? १०—तुम्हारी प्रेमिका को (बालहि) कामदेव रूपी सर्प ने काट लिया है। १२—एक कृष्ण ही इस विष के लिये गारुड़ी (विष उतारनेवाला) है।

(२१२)

माधव, कठिन हृदय परबासी।
तुअ पेअसि मोयँ देखल बियोगिनि
अबहु पलटि घर जासी॥ २॥
हिमकर हेरि अवनत कर आनन
करु करुना पथ हेरी।
नयन काजर लए लिखए बिधुन्तुद
भय रह ताहेरि सेरी॥ ४॥
दखिन पवन बह से कइसे जुबति सह
कर कबलित तनु अंगे।
गेल परान आस दए राखए
दस नख लिखए भुजंगे॥ ६॥
मीनकेतन भय सिव सिव सिव कय
धरनि लोटाबए देहा।
करे रे कमल लए कुच सिरिफल दए
सिव पूजए निज गेहा॥ ८॥
परभृत के डर पायस लए कर
बायस निकट पुकारे।
राजा सिवसिंघ रूपनारायन
करथु बिरह उपचारे॥१०॥

१—परबासी=प्रवासी, विदेश में रहनेवाला। २—पेअसि=प्रेयसी, प्रेमिका। जासी=जाओ। ३—हिमकर=चन्द्रमा। अवनत=नीचे। बिन्धुन्तुद=राहु। ताहेरि सेरी=उसी की शरण में।

(२१३)

कुसुमित कानन हेरि कमलमुखि
मूदि रहए दु नयान।
कोकिल कलरव मधुकर धनि सुनि
कर देइ झाँपइ कान ॥ २ ॥
माधव, सुन सुन वचन हमारा।
तुअ गुनसुन्दरि अति भेल दूबरि
गुनि गुनि प्रेम तोहारा ॥ ४ ॥
धरनी धरि धनि कत बेरि बइसइ
पुनु तहि उठइ न पारा।
कातर दिठि करि चौदिस हेरि हेरि
नयन गरए जलधारा ॥ ६ ॥
तोहर बिरह दिन छन छन तनु छिन
चौदिस चाँद समान।
भनइ विद्यापति सिवसिंह नरपति
लखिमा देइ रमान ॥ ८ ॥

५—कवलित=ग्रस्त, खा जाना। ६—गेल=गया हुआ। भुजंगे=सर्प (सर्प वायु को खा जायगा, यह समझकर)। ७—मीनकेतन=कामदेव। ८—कते रे कमल लए—हाथ रूपी कमल ले कर। सिरिफल=नारियल। ९—परभृत=कोयल। पायस=खीर। वायस=कौआ। १०—करथु=करें। उपचारे=उपाय।

१—कुसुमित कानन=खिला हुआ वन। २—मधुकर=भौंरा। ५—पृथ्वी पकड़कर वह बाला कई बार बैठ जाती है और पुनः

सरद् क ससधर मुखरुचि सोंपलक
हरिन के लोचन लीला ।
केसपास लए चमरि के सोंपलक
पाए मनोभव पीला ॥२॥
माधव, जानल न जीवति राही ।
जतवा जकर लेले छलि सुन्दरि
से सब सोंपलक ताही ॥ ४ ॥
दसन-दसा दालिम के सोंपलक
बन्धु अधर रुचि देली ।
देह-दसा सौदामिनि सोंपलक
काजर सनि सखि भेली ॥ ६ ॥
भौंहक-भंग अनंग-चाप दिहु
कोकिल के दिहु बानी ।
केवल देह नेह अछ लओले
एतबा अएलहुँ जानी ॥८॥
भनइ विद्यापति सुन बर जौवति
चित झंखइ जनु आने ।
राजा सिवसिंघ रूपनारायन
लखिमा देइ रमाने ॥१०॥

(चेष्टा करने पर) उठ नहीं सकती । ७—दिन=गरीब, असहाय । चौदिस=चतुर्दशी ।

१—ससधर=चन्द्रमा । मुखरुचि=मुख की शोभा । सोंपलक= समर्पण किया । २—चमरि=वह गाय जिसकी दुम का चँवर होता है ।

(२१५)

आएल उनमद समय बसंत।
दारुन मदन निदारुन कंत ॥टेक।
ऋतुराज आज बिराज हे सखि
नागरि जन वंदिते।
नव रंग नव दल देखि उपवन
सहज सोभित कुसुमिते।
आरे, कुसुमित कानन कोकिल नाद।
मुनिहुक मानस उपजु बिसाद ॥ १ ॥
अति मत्त मधुकर मधुर रव कर
मालती मधु-संचिते।
समय कंत उदंत नहि किछु
हमहि विधि-वस-बंचिते ॥
बंचित नागर सेह संसार।
एहि रितुपतिसौ न करए बिहार ॥२॥

मनोभव = कामदेव। पीला=पीड़ा। ४—जतबा=जितना। जकर= जिसका। लेले छलि=लिये हुए थी। ५—दालिम=दाड़िम=अनार। बन्धु=बन्धुली फूल। सौदामिनि=बिजली। सनि = समान। ७—अनग चाप दिहु = कामदेव के धनुष को दिया। ८—अछ=है। एतबा = इतना। ६—झँखह=झंखना।

१—उनमद=उन्मत्त, पागल। दारुन=कठिन। निदारुन= करुणाहीन। नागरी जन वंदिते=नागरी स्त्रियों द्वारा पूजित। नव=नवीन। दल = पत्ता। कुसुमित = खिले हुए। कानन = बन।

अति हार भार मनोज मारए
चंद रबि सन भानए ।
पुरुब पाप संताप जत हो
मन मनोभव जानए ॥
जारए मनसिज मार सर साधि ।
चानन देह चौगुन हो धाधि ॥ ३ ॥
सब धाधि आधि वेआधि जाइति
करिए धैरज कामिनी ।
सुपहु मन्दिर तुरित आओत
सुफल जाइति जामिनी ॥
जामिनि सुफल जाइत अवसान ।
धैरज धरु विद्यापति भान ॥ ४ ॥

नाद=ध्वनि । बिषाद=बिषाद, दुःख । २—मधुकर=भौंरा । रव=आवाज । उदंत=वार्त्ता । सेह=वही । ऋतुपतिसौं=वसंत में । ३—मनोज=कामदेव । चंद रबि सनि भानए=चन्द्रमा और सूर्य के समान मालूम होता है । जत=जितना । मनसिज=कामदेव । मार=मारता है । चानन=चन्दन । धाधि=ज्वाला । ४—आधि वेआधि=शोक और पीड़ा । जाइति=जायगी । सुपहु=सुप्रभु, प्यारे प्रीतम । आओत=जावेगा । जामिनि=रात । अवसान=अन्त । भान=कहते हैं ।

"स्मृतिमपि न ते यान्ति क्ष्मापा विनानुग्रहम् ।
प्रकृतिमहते कुर्मस्तस्मै नमः कविकर्मणे ॥"

(२१६)

माधव, कत परबोधव राधा।
हा हरि हा हरि कहतहि बेरि बेरि
अब जिउ करब समाधा ॥ २ ॥
धरनि धरिये धनि जतनहि बइसइ
पुनहि उठए नहि पारा।
सहजहि बिरहिन जग महँ तापिनि
बौरि मदन-सर-धारा ॥ ४ ॥
अरुन-नयन-नोर तीतल कलेबर
बिलुलित दीघल केसा।
मन्दिर बाहिर करइत संसय
सहचरि गनतहि सेषा ॥ ६ ॥
आनि नलिनि केओ रमनि सुताओलि
केओ देइ मुख पर नीरे।
निसबद पेखि केओ साँस निहारए
केओ देइ मंद समीरे ॥ ८ ॥
कि कहब खेद भेद जनि अन्तर
घन घन उतपत साँस।
भनइ बिद्यापति सेहो कलावति
जीव बंधल आस-पास ॥१०॥

२—समाधा=समाप्त। ३—बइसइ=बैठती है। ५—नोर=आँसू। तीतल=भींगा हुआ। ६—सेषा=अंत, मृत्यु। ७—सुताओलि=सुलाई। ९—उतपत=उत्तप्त, गर्म। १०—आस-पास=आशा के बंधन में।

(२१७)

अनुखन माधब माधब सुमरत
सुन्दरि भेलि मधाई।
ओ निज भाव सुभावहि विसरल
अपने गुन लुबुधाई ॥ २ ॥
माधव; अपरुब तोहर सिनेह।
अपने विरह अपन तनु जरजर
जिबइत भेलि संदेह ॥४॥
भोरहि सहचरि कातर दिठि हेरि
छल-छल लोचन पानि।
अनुखन राधा राधा रटइत
आधा आधा बानि ॥६॥
राधा सयँ जब पुनतहि माधब
माधव सयँ जब राधा।
दारुन प्रेम तबहि नहि टूटत
बाढत बिरहक बाधा ॥८॥
दुहुदिसि दारु-दहन जैसे दगधई
आकुल कीट परान।
ऐसन बल्लभ हेरि सुधामुखि
कवि विद्यापति भान ॥१०॥

इस पद्य में प्रम की पराकाष्ठा हो गई है। राधा बिरहवश, प्रेम में तल्लीन हो, अपने ही को कृष्ण समझ लेती ह और राधा-राधा चिल्लाने लगती है। पुन. जब होश मे आती है, तब कृष्ण के लिये

(कृष्ण का विरह)

(२१८)

रामा हे, से किए बिसरल जाई।
कर धरि माथुर अनुमति मंगइत
ततहि परल मुरछाई ॥ २ ॥
किछु गदगद सरे लहु-लहु आखरे
जे किछु कहल बर रामा।
कठिन कलेवर तेईं चलि आओल
चित्त रहलि सोइ ठामा ॥ ४ ॥
से बिनु राति दिवस नहि भावए
ताहि रहल मन लागी।
आन रमनि सयँ राज सम्पद भोयँ
आछिए जइसे बिरागी ॥ ६ ॥
दुइ एक दिवस निचय हम जाओब
तुहु परबोधब राई।
बिद्यापति कह चित्त रहल नहि
प्रेम मिलाएब जाई ॥ ८ ॥

व्याकुल हो उठती है। यों दोनों अवस्थाओं में मर्म-व्यथा सहती है।

१—रामा=सुन्दरी (सखि)। से=वह। किए=क्यों। बिसरल=भूलना। २—सरे=स्वर में। लहु लहु आखरे=मधुर शब्दों में। जे किछु=जो कुछ। ४—तेई=उसीसे। ५—से=वह (राधा)। ६—आन=अन्य। आछिए=हूँ। ७—निचय=निश्चय। ८—तहि=वह।



तिल एक सयन ओत जिउ न सहए
न रहए दुहु तनु भीन ।
माँझे पुलक गिरि अंतर मानिए
अइसन रहु निसि-दीन ॥ २ ॥

सजनी कोन परि जीबए कान ।
राहि रहल दुर हम मथुरापुर
एतहु सहए परान ॥ ४ ॥

अइसन नगर अइसन नव नागरि
अइसन सम्पद मोर ।
राधा बिनु सब बाधा मानिए
नयनन तेजिए नोर ॥ ६ ॥

सोइ जमुना जल सोइ रमनीगन
सुनइत चमकित चीत ।
कह कविसेखर अनुभवि जनलौं
बड़क बड़इ पिरीत ॥ ८ ॥

१—तिल एक=एक क्षण के लिये भी । ओत=ओट । भीन=भिन्न । माँझे=मध्य में । २—मिलन के समय रोमांच हो जाने से मिलने में किञ्चित् नाम-मात्र का व्याघात हो जाता था, अतएव, रोमांच हमलोगों को पहाड़ के समान मालूम पड़ता था, इस प्रकार हम दिन-रात मिले हुए थे । ३—कोन परि=किस प्रकार । ५—अइसन=ऐसा । ६—नोर=आँसू । ८—अनुभवि=अनुभव करके । जनलौं=जान गया ।

भावोल्लास

(२२०)

सरस बसंत समय भल पाओलि
दछिन पवन बहु धीरे।
सपनहु रूप बचन एक भाखिए
मुख सों दुरि करु चीरे ॥२॥
तोहर बदन सम चान होअथि नहि
जइओ जतन बिहि देला।
कए बेरि काटि बनाओल नव कय
तइओ तुलित नहि भेला ॥३॥
लोचन-तूल कमल नहि भए सक
से जग के नहि जाने।
से फेरि जाए लुकाएल जल भए
पंकज निज अपमाने ॥६॥
भनहि बिद्यापति सुनु बर जौबति
ई सभ लछम समाने।
राजा सिवसिंघ रूपनरायन
लखिमा देइ पति भाने ॥८॥

१--पाओलि=पाया। २--स्वप्न में एक आदमी ने आकर कहा-- अरी, मुख से अंचल हटाओ। ३--बदन=मुख। चान=चन्द्रमा। जइओ=यद्यपि। बिहि=विधाता। ४--कए=कितने। कय=काया, शरीर। तइओ=तौ भी। तुलित=तुल्य, समान। ५--तूल=तुल्य। भए सक=हो सकता। लुकाएल=छिपगया। जल भए=जल में। पंकज=कमल। ई सभ=यह सब।

(२२१)

सुतलि छलहुँ हम घरवा रे
गरवा मोतिहार।
राति जखनि भिनुसरवा रे
पिया आएल हमार ॥२॥
कर कौशल कर कपइत रे
हरवा उर टार।
कर-पंकज उर थपइत रे
मुख-चंद निहार ॥४॥
केहनि अभागलि बैरिनि रे
भागलि मोर निन्द।
भल कए नहि देखि पाओल रे
गुनमय गोविन्द ॥६॥
विद्यापति कवि गाओल रे
धनि मन धरु धीर।
समय पाए तरुवर फर रे
कतवो सिचु नीर ॥८॥

१--सुतलि छलहुँ=सोई थी। गरवा=गले में २--जखनि=जिस समय। भिनुसरवा=भोर, उषःकाल। आएल=आया। ३--चतुराई करते हुए कांपते हाथ से हृदय का हार हटाया। ४--कर-पंकज कमल रूपी हाथ। थपइत=स्थापित करते, धरते। छाती पर हाथ देकर मुंह देखने लगे। ५--केहनि=कैसी। अभागलि=अभागिनी। ६--भल कए=अच्छी तरह ८--फर=

(२२२)

मोरा रे अँगनमा चनन केरि गछिआ
ताहि चढ़ि कुररय काग रे।
सोने चोंच बाँधि देव तोयँ बायस
जओं पिया आओत आज रे ॥२॥
गावह सखि सब झुमर लोरी
मयन-अराधन जाऊँ रे
चओदिस चम्पा मओली फूललि
चान इजोरिया राति रे।
कइसे कए मोयँ मयन अराधब
होइति बड़ि रति साति रे ॥४॥
विद्यापति कवि गावए तोहर
पहु अछ गुनक निधान रे।
राओ भोगीसर सब गुन आगर
पदुमा देइ रमान रे ॥७॥

फलता है। कतबो सिचु नीर = कितना भी पानी पटाओ।

१—अँगनमा = आँगन में। चनन केरि = चन्दन का। गछिया = वृक्ष। कुररए = बोल रहा है। २—सोने = स्वर्ण से। तोयँ = तुझे। बायस = काग। ३—गावह = गाओ मयन अराधन = कामदेव को अराधना करने। ४—मओली = मल्लिका। चान = चन्द्रमा। इजोरिया = चाँदनी। कइसे कए = किस प्रकार। होइत = होयगी। रति-साति = रति जनित पीड़ा। ६—पहु = प्रीतम। अछ = है। ७—रमान = पति।

(२२३)

अँगने आओब जब रसिया ।
पलटि चलब हम इषत हँसिया ॥२॥
रस-नागरि रमनी ।
कत कत जुगति मनहि अनुमानी ॥४॥
आवेसे आँचर पिया धरवे ।
जाएब हम न जतन बहु करवे ।
कँचुआ धरत्र जब हठिया ।
करे कर बाँधब कुटिल आध दिठिया ॥८॥
रभस माँगब पिआ जबही ।
मुख मोड़ि विहँसि बोलब नहि नहि ॥१०॥
सहजहि सुपुरुख भमरा ।
मुख कमलक मधु पीअब हमरा ॥१२॥
तखन हरब मोर गेआने ।
विद्यापति कह धनि तुअ धेआने ॥१४॥

१—अँगने=आँगन में। अओब=आयँगे। २—इषत=थोड़ा-थोड़ा। ३—रस नागरि=रस में चतुरा, सुरसिका। ४—कत=कितनी। जुगति=युक्ति। ५—आवेसे=आवेश में, उत्तेजित होकर। ६—वे बहुत यत्न करेंगे, किन्तु मैं न जाऊँगी। ७—कँचुआ=कँचुकी, चोली। हठिया=हठकर। ८—(अपने) हाथ से (उनके) हाथ को बाधा दूँगी और तीरछी एवं आधी चितवन से देखूँगी। ९—रभस=रति-क्रीड़ा विहसि=हँसकर। ११—भमरा=भौंरा। पीअब=पीयेगा।

पिआ जब आओब इ मझु गेहे।
मंगल जतहु करब निज देहे ॥ २ ॥
कनअ कुम्भ करि कुच जुग राखि।
दरपन धरब काजर देइ आँखि ॥ ४ ॥
बेदि बनाओब हम अपन अंकमे।
झाड़ करब ताहे चिकुर बिछीने ॥ ६ ॥
कदलि रोपब हम गरुअ नितम्ब।
आम पल्लब ताहे किंकिन सुझम्प ॥ ८ ॥
दिसि दिसि आनब कामिनि ठाट।
चौदिसि पसारब चाँदक हाट ॥ १० ॥
बिद्यापति कह पूरब आस।
दुइ एक पलक मिलब तुअ पास ॥ १२ ॥

१३--तखन=उस समय। (काम-क्रीड़ा के समय) मेरा ज्ञान हर लेंगे।

१--आओब=आवेंगे। इ=यह। मझु=मेरे। गेह=घर में। जितना मंगल करना होगा, अपने शरीर मे करूँगी। ३--कनअ-कुम्भ=सोने के घड़े। कुच जुग=दोनो कुच। ४--आँखों में काजर लगाकर उसे दर्पण-रूप मे धरूगी=मेरी आंखो में प्रीतम अपना रूप देखेंगे। ५--वेदी=चौका। अंक में=गोदी। ६--केश को विच्छिन्न कर (खोलकर) उसमें झाड़ करूँगी। ७--कदलि=केला। गरुय=विशाल। सुझम्प=आन्दोलित, शब्दित। ९--आनब=लाऊँगी। ठाट=समूह। हाट=बाजार (स्त्रियों के मुख चन्द्रमा ही चन्द्रमा-से दीख पड़ेंगे।)

(२२५)

दुहुक दुलह दुहु दरसन भेल।
बिरह जनित दुख सब दुर गेल॥ २॥
कर धरि बइसाओल बिचित्र आसन।
रमन-रतन-श्याम रमनी-रतन॥ ४॥
बहु बिधि बिलसए बहु बिधि रंग।
कमल मधुप जनि पाओल संग॥ ६॥
नयन नयन दुहु बयन वयान।
दुहु गुन दुहु गुन दुहुजन गान॥ ८॥
भनइ बिद्यापति नागरि भोर।
त्रिभुवनविजयी नागर चोर॥ १०॥

(२२६)

चिर दिन से विहि भेल अनुकूल रे।
दुहु मुख हेरइत दुहु से आकुल रे॥ २॥
बाहु पसारिए दुहु दुहु धरु रे।
दुहु अधरामृत दुहु मुख भरु रे॥ ४॥
दुहु तनु काँपइ मदन उछल रे।
किन किन किन ध्वनि किंकिनि रुचल रे॥६॥
जाइनेहि स्मित नव बदन मिलल रे।
दुहु पुलकावलि ते लहु लहु रे॥८॥
रस-मातल दुहु असन खसल रे।
विद्यापति रस-सिन्धु उछलल रे १०॥

दुलह=दुर्लभ। बइसाओल=बिठलाया। भोर=बेसुध। स्मित=

(२२७)

सुनु रसिया,
अब न बजाऊ विपिन बँसिया ॥ २ ॥
बार बार चरनारविंद गहि
सदा रहब बनि दसिया।
कि छलहुँ कि होएब से के जाने
वृथा होएत कुल हँसिया ॥ ४ ॥
अनुभव ऐसन मदन—भुजंगम
हृदय मोर गेल डसिया।
नंद-नन्दन तुअ सरन न त्यागब
वलु जग होए दुरजसिआ ॥ ६ ॥
विद्यापति कह सुनु बनितामनि
तोर मुख जीतल ससिआ।
धन्य धन्य तोर भाग गोआरिनि
हरि भजु हृदय हुलसिआ ॥८॥

हँसते हुए। पुलकावलि=रोमांच। मतल=मत्त बना। खसल=गिर पड़ा।

१—रसिआ=रसिक। २—बँसिया=वंशी। ३—दसिआ=। —कि=क्या। छलहुँ=थी। होयब=होऊँगी, बनूँगी। से=यह बात। के=कौन। कुल हँसिया=कुल की निन्दा। ५—ऐसन=इस प्रकार। मदन-भुजंगम=काम रूपी सर्प। गेल डसिया=डँस गया, काट गया। ६—बलु=भले ही, वरंच। दुरजसिया=अपयश, कलंक। ७—बनितामनि=स्त्रियों मे रत्न समान। जीतल=जीत लिया। ससिआ=चन्द्रमा।

(२२८)

सखि, कि पुछसि अनुभव मोय।
से हो पिरित अनुराग बखानिए
तिल तिल नूतन होय ॥ २ ॥
जनम अवधि हम रूप निहारल
नयन न तिरपित भेल।
सेहो मधु बोल स्रवनहि सूनल
स्रुति पथ परस न भेल ॥ ४ ॥
कत मधु-जामिनि रभस गमाओल
न बूझल कइसन केल।
लाख लाख जुग हिय हिय राखल
तइओ हिय जुड़ल न गेल ॥६॥
कत बिदगध जन रस अनुमोदई
अनुभव काहु न पेख।
बिद्यापति कह प्रान जुड़ाएत
लाखे न मिलल एक ॥ ८ ॥

१—कि पुछसि=क्या पुछती हो? मोय=मुझ से। २—से हो=वही। तिल तिल=क्षण-क्षण। निहारल=देखा। ४—स्रवनहि=कानों से। परस=स्पर्श। ५—मधु-यामिनि=वसंत की रात। रभस=काम-क्रीड़ा। गमाओल=बिता दी। केल=केलि। तइओ=तो भी। जुड़ल न गेल=न जुड़ाया, ठढा न हुआ। ७—बिदगध=विदग्ध, रसिक। रस अनुमोदई=रस का उपभोग करते हैं। पेख=देखना। ८—लाख में एक न मिला।

प्रार्थना और नचारी

(२२९)

बिदिता देवी बिदिता हो
अविरल-केस सोहन्ती।
एकानेक सहस को धारिनि
जरि रंगा पुरनन्ती ॥ २ ॥
कजल रूप तुअ काली कहिए
उजल रूप तुअ बानी।
रविमंडल परचंडा कहिए
गंगा कहिए पानी ॥ ४ ॥
ब्रह्मा-घर ब्रह्मनी कहिए
हर-घर कहिए गौरी।
नारायन-घर कमला कहिए
के जान उतपत तोरी ॥ ६ ॥
विद्यापति कविवर एहो गाओल
जाचक जन के गति।
हासिनि देइ पति गरुड़नरायन
देवसिंघ नरपति ॥ ८ ॥

(२३०)

कनक-भूधर-शिखर वासिनि
चन्द्रिका चय चारु हासिनि
दशन कोटि विकास, वंकिम-
तुलित चन्द्रकले।
क्रुद्ध-सुररिपु बलनिपातिनि
महिष-शुम्भ-निशुम्भ-घातिनि
भीत-भक्तभयापनोदन--
पाटल प्रबले ॥ २ ॥

जय देवि दुर्गे दुरिततारिणी
दुर्ग मारि विमर्द हारिणि
भक्ति नम्र सुरासुराधिप—
मंगलायतरे ।
गगन मंडल गर्भगाहिनि
समर-भूमिपु सिहवाहिनी
परसु-पाश-कृपाण-शायक—
शंख-चक्र-धरे ॥ ४ ॥
अष्ट भैरवि संग शालिनि
सुकर कृत्त कपाल कदम्ब मालिनि
दनुज शोणित पिशित वर्द्धित-
पारणा रभसे ।
संसारबंध-निदानमोचिनि
चन्द्र-भानु-कृशानु-लोचन
योगिनी गण गीत शोभित-
नृत्यभूमि रसे ॥ ६ ॥
जगति पालन - जनन - मारण
रूप कार्य सहस्र कारण
हरि विरंचि महेश शेखर-
चुम्ब्यमान पदे ।
सकल पापकला परिच्युति
सुकवि विद्यापति कृतस्तुति
तोषिते शिवसिह भूपति
कामना फलदे ॥ ८ ॥

(२३१)

जय जय संकर जय जय त्रिपुरारि।
जय अध पुरुष जयति अध नारि ॥ २ ॥
आध धवल तनु आधा गोरा।
आध सहज कुच आध कटोरा ॥ ४ ॥
आध हड़माल आध गजमोती।
आध चानन सोहे आध विभूती ॥ ६ ॥
आध चेतन मति आधा भोरा।
आध पटोर आध मुँज डोरा ॥ ८ ॥
आध जोग आध भोग विलासा।
आध पिधान आध नग वासा ॥१०॥
आध चान आध सिंदुर सोभा।
आध विरूप आध जग लोभा ॥१२॥
भने कविरतन विधाता जाने।
दुइ कए बाँटल एक पराने ॥१४॥

(२३२)

भल हर भल हरि भल तुअ कला।
खन पित वसन खनहि बघछला ॥ २ ॥
खन पंचानन खन भुजचारि।
खन संकर खन देव मुरारि ॥ ४ ॥
खन गोकुल भए चराइअ गाय।
खन भिखि माँगिए डमरु बजाय ॥ ६ ॥
खन गोविंद भए लिअ महादान।
खनहि भसम भरु काँख वो कान ॥ ८ ॥

एक सरीर लेल दुइ वास।
खन बैकुंठ खनहि कैलास ॥१०॥
भनइ विद्यापति विपरित वानि।
ओ नारायण ओ सूलपानि ॥१२॥

(२३३)

आगे माई एहन उमत बर लैल हिमगिरि
देखि देखि लगइछ रंग।
एहन उमत बर घोड़वो न चढ़इक
जो घोड़ रँग रँग जग ॥ २ ॥
वाघक छाल जे बसहा पलानल
साँपक भीरल तंग।
डिमिक डिमिक जे डमरु बजाइन
खटर खटर करु अंग ॥ ४ ॥
भकर भकर जे भाँग भकोसथि
छटर पटर करु गाल।
चानन सों अनुराग न थिकइन
भसम चढ़ावथि भाल ॥६॥
भूत पिसाच अनेक दल साजल
सिर सो बहि गेल गंग।
भनइ विद्यापति सुनु ए मनाइनि
थिकाह दिगम्बर अंग ॥८॥

(२३४)

बेरि बेरि अरे सिव मों तोय बोलों
फिरसि करिअ मन माय।

बिन संक रहह भीख मँगिए पए
    गुन गौरब दुर जाय ॥३॥
निरधन जन बोलि सब उपहासए
    नहि आदर अनुकम्पा ।
तोहें सिव आक धतुर फुल पाओल
    हरि पाओल फुल चम्पा ॥४॥
खटँग काटि हर हर जे बनाबिअ
    त्रिसुल तोड़िय करु फार ।
बसहा धुरन्धर हर लए जोतिअ
    पाटए सुरसरि धार ॥६॥
भन बिद्यापति सुनहु महेसर
    इ लागि कएलि तुअ सेबा ।
एतए जे बर से बर होअल
    ओतए जाएब जनि देबा ॥८॥

(२३५)

हम नहि आज रहब यहि आँगन
    जो बुढ़ होएत जमाई' गे माई ।
एक त बइरि भेला बीध बिधाता
    दोसर धिया कर बाप ।
तेसरे बइरि भेल नारद बाभन
    जै बूढ़ आनल जमाई, गे माई ॥
पहिलुक बाजन डामरु तोरब
    दोसरे तोरब रुँडमाल
बरद हाँकि बरिआत बेलाइब
    धिआले ज़ाएब पराई, गे माई ॥

धोती लोटा पतरा पोथी
एहो सभ लेवन्हि छिनाई।
जौं किछु बजता नारद बाभन
दाढ़ी धए घिसिआएब, गे माई॥
भन विद्यापति सुनु हे मनाइन
दृढ़ करु अपन गेआन।
सुभ सुभ कए सिरी गौरी बिआहु
गौरी हर एक समान, गे माई॥

(२३६)

नाहि करब वर हर निरमोहिया।
बित्ता भरि तन वसन न तिन्हका
बघछल काँख तर रहिया।२॥
बन बन फिरथि मसान जगाबथि
घर आँगन ऊ बनौलनि कहिया।
सासु ससुर नहि ननद जेठौनी
जाए बैसति धिया केकरा ठहिया॥४॥
बूढ़ बड़द ढकपाल गोल एक
सम्पति भाँगक झोरिया।
भनइ विद्यापति सुनु हे मनाइन
सिव सन दानी जगत के कहिया॥६॥

(२३७)

कतए गेला मोर बुढ़वा जती।
पीसल भाँग रहल सेइ गती॥२॥
आन दिन निकहि रहथि मोर पती।
आज लगाइ देल कौन उदगती॥४॥

एकसर जोहए जाएव कोन गती।
ठेसि खसव मोरि होत दुरगती ॥६॥
नंदनवन बिच मिलल महेस।
गौरी हरखित भेल छुटल कलेस। ८॥
भनइ विद्यापति सुनु हे सती।
इहो जोगिया थिका त्रिभुवन पती ॥१०॥

(२३८)

जोगिया एक हम देखलौं गे माई।
अनहद रूप कहलो नहि जाई ॥२॥
पंच वदन तिन नयन बिसाला।
वसन विहुन ओढ़न वघछाला ।४॥
सिर वहे गंग तिलक सोहे चंदा।
देखि सरूप मेटल दुखदंदा ॥६॥
जाहि जोगिया लै रहलि भवानी।
मन आनलि बर कोन गुन जानी ॥८।
कुल नहि सिल नहि तात महतारी।
वएस हिनक थिक लछु जुग चारी ॥१०॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि।
एहो जोगिया थिका त्रिभुवन दानि। १२॥

(२३९)

सिव हो, उतरब पार कओन बिधि।
लोढ़ब कुसुम तोरब बेलपात
पुजब सदासिव गौरिक सात॥
बसहा चढ़ल सिव फिरहू मसान।
भँगिया जरठ दरदो नहि जान॥

जप तप नहि कैलहु नित दान।
बित गेला तिन पन करइत· आन॥
भन विद्यापति सुनु हे महेस।
निरधन जानिके हरहु कलेस॥

(२४०)

जखन देखल हर हो गुननिधी।
पुरल सकल मनोरथ सब निधी॥२॥
बसहा चढ़ल हर हो बुढ़ जती।
काने कुंडल सोभे गले गजमोती॥४॥
बइसल महादेव चौका चढ़ी।
जटा छिरिआओल माओल भरी॥६॥
विधिकरु बिधिकरु बिधिकरु करू।
विधि न करइ से हर हो हठ धरू॥८॥
विधिए करइत हर हो घुमि खसु।
सँसरि खसल फनि सिरि गौरीहँसु॥१०॥
केओ नहि किछु कहइन्हि हिनकहूँ।
पुरबिल लिखल छला मोर पहूँ॥१२॥
कवि विद्यापति गाओल।
गौरी उचित बर पाओल॥१४॥

(२४१)

हर जनि विसरब मो ममिता,
हम नर अधम परम पतिता।
तुअ सन अधमउधार न दोसर
हम सन जग नहि पतिता॥२॥
जम के द्वार जवाव कओन देब
जखन बुझत निजगुन कर बतिया।



जब जम किंकर कोपि पठाएत
तखन के होत धरहरिया ॥५॥
भन विद्यापति सुकवि पुनीत मति
संकर विपरीत बानी।
असरन सरन चरन सिर नाओल
दया करु दिअ सुपलानी ॥६॥

(२४२)

एत जप-तप हम किअ लागि कैलहु
कथिला कएलि नित दान।
हमरि धिया के एहो बर होयता
अब नहि रहत परान ॥२॥
हर के माय बाप नहि थिकइन
नहि छइन सोदर भाय।
मोर धिया जों सासुर जैती
बइसति ककर लग जाय ॥४॥
घास काटि लौती बसहा चरौती
कुटती भाँग धतूर।
एको पल गौरी बैसहु न पौती
रहती ठाढ़ि हजूर ॥३॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि
दृढ़ करु अपन गेआन।
तीन लोक के एहो छथि ठाकुर
गौरा देवी जान ॥८॥

(२४३)

कखन हरब दुख मोर
हे भोलानाथ।
दुखहि जनम भेल दुखहि गमाएब
सुख सपनहु नहि भेल, हे भोलानाथ।
आछत चानन अवर गँगाजल
वेलपात तोहि देव, हे भोलानाथ।
यहि भव-सागर थाह कतहु नहि
भैरव धरु कर आए, हे भोलानाथ।
भन विद्यापति मोर भोलानाथ गति
देहु अभय वर मोहि, हे भोलानाथ।

(२४४)

यहि विधि व्याहन आयो
एहन वाउर जोगी।
टपर टपर कए वसहा आयल खटर खटर रुँडमाल॥
भकर भकर सिव भाँग भकोसथि डमरू लेल कर लाय॥
ऐपन मेटल पुरहर फोरल वर किमि चौमुख दीप॥
धिआ ले मनाइनिनि मंडप वइसलि गाविए जनु सखि गीत॥
भन विद्यापति सुनु ए मनाइनि ई थिका त्रिभुवन ईस॥

(२४५)

आजु नाथ एक वर्त मोहि सुख लागत हे।
तोहे सिव धरि नट वेष कि डमरू वजाएब हे॥
भल न कहल गउरा रउरा आजु सु नाचव हे।
सदा सोच मोहि होत कवन विधि वाँचव हे॥

जे जे सोच मोहि होत कहा समुझाएब हे।
रउरा जगत के नाथ कवन सोच लागए हे॥
नाग ससरि भुमि खसत पुहुमि लोटायत हे।
कार्त्तिक पोसल मजूर सेहो धरि खायत हे॥
अमिय चूइ भुमि खसत बघम्बर जागत हे।
होत बघम्बर बाघ बसह धरि खायत हे॥
टूटि खसत रुद्राछ मसान जगावत हे।
गौरी कह दुख हौत बिद्यापति गावत हे॥

(२४६)

आगे माइ, जोगिया मोर जगत सुखदायक
दुख ककरो नहि देल।
दुख ककरो नहि देल महादेब
दुख ककरो नहि देल।
यहि जोगिया के भाँग भुलेलक
धतुर खोआइ धन लेल॥
आगे माइ, कातिक गनपति दुइ जन बालक
जग भरि के नहि जान।
तिनका अभरन किछुओ न थिकइन
रति यक सोन नहि कान॥
आगे माइ, सोना रूपा अनका सुत अभरन
आपन रुद्रक माल।
अपना सुत ला किछुओ ना जुरइनि
अनका ला जंजाल॥
आगे माइ, छन में हेरथि कोटि धन बकसथि
ताहि देबा नहि थोर।

भन विद्यापति सुनह मनाइनि
थिका दिगम्बर भोर ॥

(२४७)

जोगिया भँगवा खाइत भेला रँगिया
भोला बौड़लवा ॥
सबके ओढ़ावे भोला साल दुसलवा
आप ओढ़य मृगछलवा ।
सबके खिलावे भोला पाँच पकवनमा
आप खाए भाँग धतुरवा ॥
कोई चढ़ावे भोला अच्छत चानन
कोई चढ़ावे बेलपतवा ॥
जोगिन भूतिन सिव के सँघतिया
भैरो बजावे मिरदंगिया ।
भन विद्यापति जै जै संकर
पारबती गौरि सँगिया ॥

(२४८)

जौं हम जनितहुँ भोला भेला ठगना
होइतहुँ राम गुलाम गे माई ।
भाई बिभीखन बड़ तप कैलन्हि
जपलन्हि रामक नाम, गे माई ।
पुरुब पछिम एको नहि गेला
अचल भेला यहि ठाम, गे माई ।
वीस भुजा दस माथ चढ़ाओलि
भाँग दिहल भर गाल, गे माई ।

नीच-ऊँच सिव किछु नहि गुनलन्हि
हरषि देलन्हि रूडमाल, गे माई।
एक लाख पूत सवा लाख नाती
कोटि सौवरनक दान, गे माई।
गुन अवगुन सिव एको नहि बुझलन्हि
रखलन्हि रावनक नाम, गे माई।
भन विद्यापति सुकवि पुनित मति
कर जोरि विनओं महेस, गे माई।
गुन अवगुन हर मन नहि आनथि
सेवकक हरथि कलेस, गे माई।

(२४८)

जानकी-वन्दना

रे नरनाह सतत भजु ताही।
जाहि, नहि जननि जनक नहि जाही ॥१॥
बसु नइहरा ससुरा कं नाम।
जननिक सिर चढ़ि गेल बहि गाम ॥२॥
मातुक कोर में सुतल जमाय।
समधि विलह नौ विनहल जाय ॥३॥
जाहि आंदर में बाहर खेल।
से पुनि पल्टहि नरक चलि गेल ॥४॥
भन विद्यापति सुकवी भान।
कोय के कवि कहँ कवि पहचान ॥५॥

गंगा-स्तुति

(२५०)

बड़ सुख सार पाओल तुअ तीरे।
छोड़इत निकट नयन वह नीरे ॥२॥
करजोरि विनमओं विमल तरंगे।
पुन दरसन होए पुनमति गंगे ॥४॥
एक अपराध छेमव मोर जानी।
परसल माय पाए तुअ पानी ॥६॥
कि करब जप-तप जोग धेआने।
जनम कृतारथ एकहि सनाने ॥८॥
भनइ बिद्यापति समदओं तोही।
अन्त काल जनु विसरह मोही ॥१०॥

(२५१)

ब्रह्मकमंडलु बास सुवासिनि
सागर नागर गृहवाले।
पातक महिष बिदारण कारण
धृतकरबाल बीचि-माले॥
जय गंगे जय गंगे।
शरणागत भय भंगे
सुर मुनि मनुज रचित पूजोचित
कुसुम विचित्रित तीरे।
त्रिनयन मौलि जटाचय चुम्बित
भूति भूषित सित नीरे॥
हरिपद कमल गलित मधुसोदर
पुण्य पुनित सुरलोके।

प्रविलसदमरपुरी - पद दान-
विधान विनाशित शोके ॥
सहज दयालुतया पातकि जन
नरकविनाशन निपुणे ।
रुद्रसिंह नरपति वरदायक
बिद्यापति कवि भणित गुणे ॥

कृष्ण-कीर्त्तन

(२५२)

माधव, कत तोर करब बड़ाई ।
उपमा तोहर कहब ककरा हम
कहितहुँ अधिक लजाई ॥
जौं श्रीखंड सौरभ अति दुरलभ
तौं पुनि काठ कठोर ।
जौं जगदीस निसाकर तौं पुन
एकहि पच्छ इजोर ॥
मनि समान औरो नहि दोसर
तनिकर पाथर नामे ।
कनक कदलि छोट लज्जित भए रह
की कहु ठामहि ठामे ॥
तोहर सरिस एक तोहँ माधव
मन होइछ अनुमान ।
सज्जन जन सों नेह कठिन थिक
कवि बिद्यापति भान ॥

(२५३)

माधव, बहुत मिनति कर तोय ।
दए तुलसी तिल देह समर्पिनु

दया जनि छाड़वि मोय।
गनइत दोसर गुन लेस न पाओवि
जव तुहुँ करवि विचार।
तुहू जगत जगनाथ कहाओसि
जग वाहिर नइ छार॥
किए मानुस पसु पखि भए जनमिए
अथवा कीट पतंग।
करम विपाक गतागत पुनु पुनु
मति रह तुअ परसंग॥
भनइ विद्यापति अतिसय कातर
तरइत इह भव-सिंधु।
तुअ पद-पल्लव करि अवलम्वन
तिल एक देह दिनवंधु॥

(२५४)

तातल सैकत वारि-विन्दु सम
सुत - मित - रमनि - समाज।
तोहे विसारि मन ताहे समरपिनु
अब मझु हव कोन काज॥
माधव, हम परिनाम निरासा।
तुहुँ जगतारन दीन दयामय
अतय तोहर विसवासा।
आध जनम हम नींद गमायनु
जरा सिसु कत दिन गेला।
निधुवन रमनि-रभस रंग मातनु
तोहे भजव कोन वेला॥

कत चतुरानन मरि मरि जाओत
न तुअ आदि अवसाना।
तोहे जनमि पुन तोहे समाओत
सागर लहरि समाना॥
भनइ विद्यापति सेप समन भय
तुअ विनु गति नहि आरा।
आदि अनादिक नाथ कहाओसि अब
तारन भार तोहारा॥

(२५५)

जतने जतेक धन पापे बटोरल
मिलि मिलि परिजन खाय।
मरनक वेरि हरि कोइ न पूछए
करम संग चलि जाय॥
ए हरि, वन्दौं तुअ पद नाय।
तुअ पद परिहरि पाप-पयोनिधि
पारक कओन उपाय॥
जावत जनम नहि तुअ पद सेविनु
जुबती मति मयँ मेलि।
अमृत तजि हलाहल किए पीअल
सम्पद अपदहि भेलि॥
भनइ विद्यापति नेह मने गनि
कहल कि बाढ़ब काजे।
साँझक बेरि सेवकाई मँगइत
हेरइत तुअ पद लाजे॥

———

विविध

(२५६)

व्यथा

माधव, कि कहब तोहर गेआन।
सुपहु कहलि जब रोष कयल तब
कर मूनल दुहु कान ॥२॥
आयल गमनक बेरि न नोन टरु
तइ किछु पुछिओो न भेला।
एहन करमहीनि हम सनि के धनि
कर से परसमनि गेला ॥४॥
जओं हम जनितहुँ एहन निठुर पहु
कुच – कंचन – गिरि– साँधि।
कौसल करतल बाहु-लता लए
दृढ़ करि रखितहुँ बाँधि ॥६॥
इ सुमिरिए जब जाओं मरिए तब
बूझि पड़ हृदय पषाने।
हिमगिरि - कुमरी चरन हृदय धरि
कवि बिद्यापति भाने ॥८॥

(२५७)

प्रेम

फूल एक. फुलवारि लाओल मुरारि।
जतने पटाओल सुवचन-बारि ॥ २ ॥
चौदिस बान्हल सीलक आरि।
जिबे अवलम्बन करु अवधारि ॥ ४ ॥
ततहु फुलल फुल अभिनव पेम।
जसु मूल लहए न लाखहु हेम ॥६॥

(२५९)

दृष्टकूट

हरि सम आनन हरि सम लोचन
हरि तहाँ हरि वर आगी।
हरिहि चाहि हरि हरि न सोहाबए
हरि हरि कए उठि जागी॥
माधव हरि रहु जलधर छाई।
हरि नयनी धनि हरि-घरिनी जनि
हरि हेरइत दिन जाई॥
हरि भेल भार हार भेल हरि सम
हरिक वचन न सोहावे।
हरिहि पइसि जे हरि जे नुकाएल
हरि चढ़ि मोर बुझावे॥
हरिहि बचन पुनु हरि सयँ दरसन
सुकवि बिद्यापति भाने।
राजा सिवसिंह रूपनारायन
लखिमा देवि रमाने॥

(२६०

माधव, आब बुझल तुअ साजे।
पंच दून दह दह गुन सए गुन
से देलह कोन काजे॥
चालिस चारि काटि चौठा
से हम सेपिया मोरा।
से निरखत मुख पेखत चौदिस
करत जनम के ओरा॥

साठिहु मह 'दह बिन्दु बिबरजित
के से सहत उपहासे।
हम अवला अब पहुक दोसरँ
दुइ बिन्दु करब गरासे॥
नव बुंदा दए नवए बाम कए
से उर हमर पराने।
कपटी बालमु हेरि न हेरए
कारन के नहि जाने॥
भनइ बिद्यापति सुनु बर जौवति
ताहि करथि के बाधा।
अपन जीव दए परक बुझाइअ
नाल कमल दुइ आधा॥

(२६१)

'कुसुमित कानन' कुंजे बसी।
नयनक काजर घोरि मसी॥
नखसौं लिखल नलिनि दल पात।
लीखि पठाओल आखर सात॥
पहिलहि लिखलनि पहिल बसंत।
दोसरें लिखलनि तेसरक अंत॥
लिखि नहि सकली अनुज बसंत॥
पहिलहि पद अछि जीवक अंत॥
भनहि बिद्यापति आखर लेख।
बुध-जन हो से कहए बिसेख॥

(२६२)

द्विज आहर आहर सुत नंदन
सुत आहर सुत रामा।

बनज बंधु सुत सुत दए सुन्दरि
चलिलि संकेतक ठामा ॥
माधब, बूझल कथा बिसेखी।
तुअ गुन लुबुधलि प्रेम पिआसलि
साधस आइलि उपेखी ॥
हरि अरि अरि पति ता सुत बाहन
जुवति नाम तसु होई।
गोपति पति अरि सह मिलु बाहन
बिरमति कबहु न होई ॥
नागर नाम जोग धनि आबए
हरि अरि अरि पति जाने।
नौमि दसाह एक मिलु कामिनि
सुकवि विद्यापति भाने ॥

बाल-बिवाह

(२६३)

पिया मोर बालक हम तरुनी।
कोन तप चुकलौंह भेलौंह जननी ॥
पहिर लेल सखि एक दछिनक चीर।
पिया के देखैत मोर दगध सरीर ॥
पिया लेली गोद कै चललि बजार।
हटिया के लोग पूछे के लागु तोहार ॥
नहि मोर देवर कि नहि छोट भाइ।
पुरुब लिखल छल बालमु हमार ॥
बाटरे बटोहिया कि तुहु मोरा भाइ।
हमरो समाद नैहर लेने जाउ ॥

कहिहुन बबा के किनए धेनु गाइ।
दुधवा पियाइके पोसता जमाइ॥
नहि मोर टका अछि नहि धेनु गाइ।
कौन बिधि पोसब बालक जमाइ॥
भनइ विद्यापति सुनु ब्रजनारि।
धीरज धरह त मिलत मुरारि॥

परकीया (स्वयंदूतिका)

(२६४)

अपर पयोधि मगन भेल सूर।
नखि-कुल-संकुल बाट बिदूर॥
नर परिहरि नाविक घर गेल।
पथिक गमन पथ संसय भेल॥
अनतए पथिक करिअ परबास।
हमे धनि एकलि कंत नहि पास॥
एक चिंता अओक मनमथ सोस।
दसमि दसा मोहि कओनक दोस॥
रयनि न जाग सखी जन मोर।
अनुखन सगर नगर भम चोर॥
तोहे तरुनत हम बिरहिनि नारि।
उचितहु बचन उपज कुलगारि॥
बामा बचन बाम पथ धाव।
अपन मनोरथ जुगुति बुझाव॥
भनइ विद्यापति नारि सुजानि।
भल कए रखलक दुहु अनुमानि॥

(२६५)

हम जुवती पति गेलाह विदेस।
लग नहि वसए पड़ोसियाक लेस॥
सासु दोसरि किछुओ नहि जान।
आँखि रतौंधी सुनए नहि कान॥
जागह पथिक जाह जनु भोर।
राति अँधार गाम वड़ चोर॥
भरमहु भौंरि न देअ कोतवार।
काहु क केओ नहि करए बिचार॥
अधिप न कर अपराधहु साति।
पुरुष महते सब हमर सजाति॥
विद्यापति कबि यह रस गाव।
उकुतिहु अबला भाव जनाव॥

(२६५)

विद्यापति की मृत्यु

दुल्लहि तोहरि कतए छथि माय।
कहुन ओ आवथु एखन नहाय।
वृथा वुझथु संसार विलास।
पल पल नाना तरहक त्रास॥
माय बाप जौं सदगति पाव॥
संतति कौं अनुपम सुख आव।
विद्यापतिक आयु अवसान।
कातिक धवल त्रयोदसि जान॥
॥ इति ॥